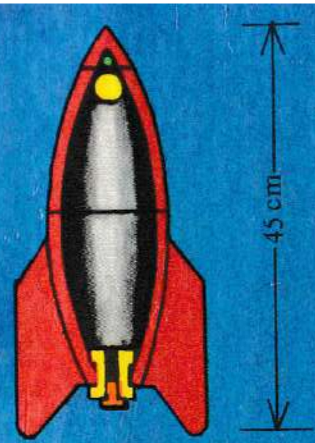
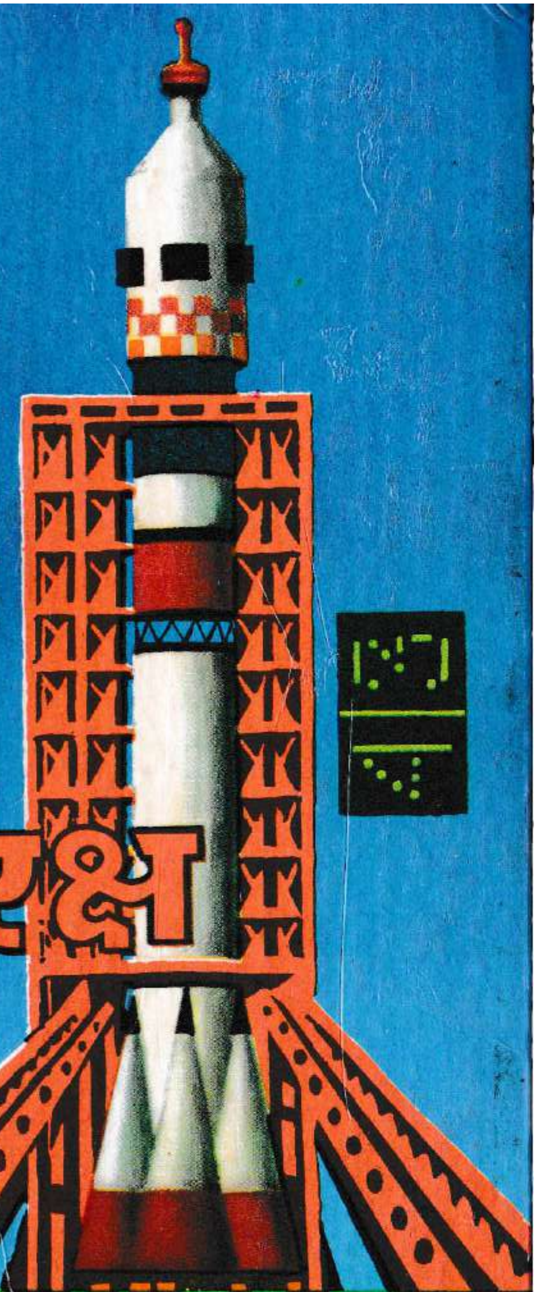
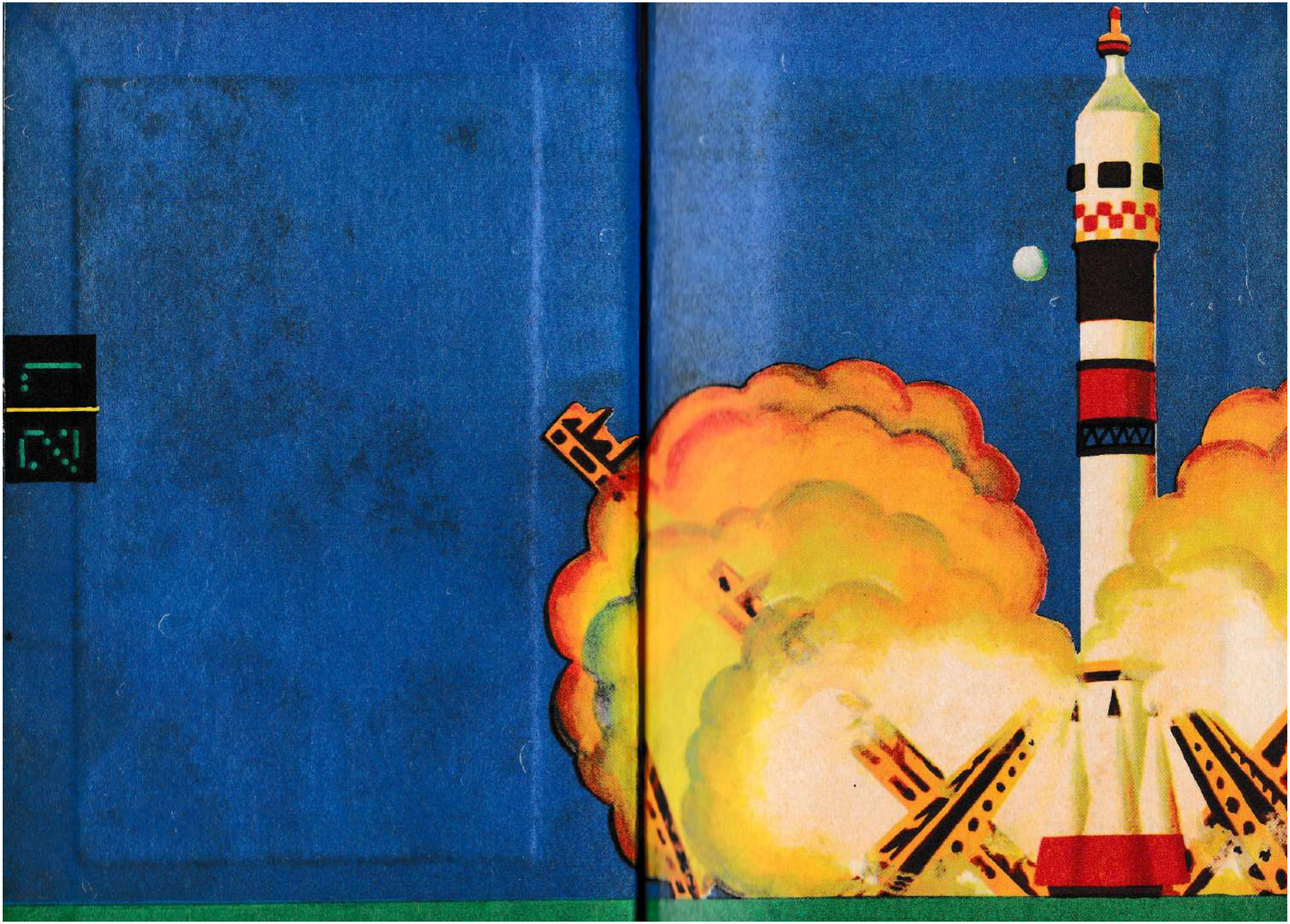
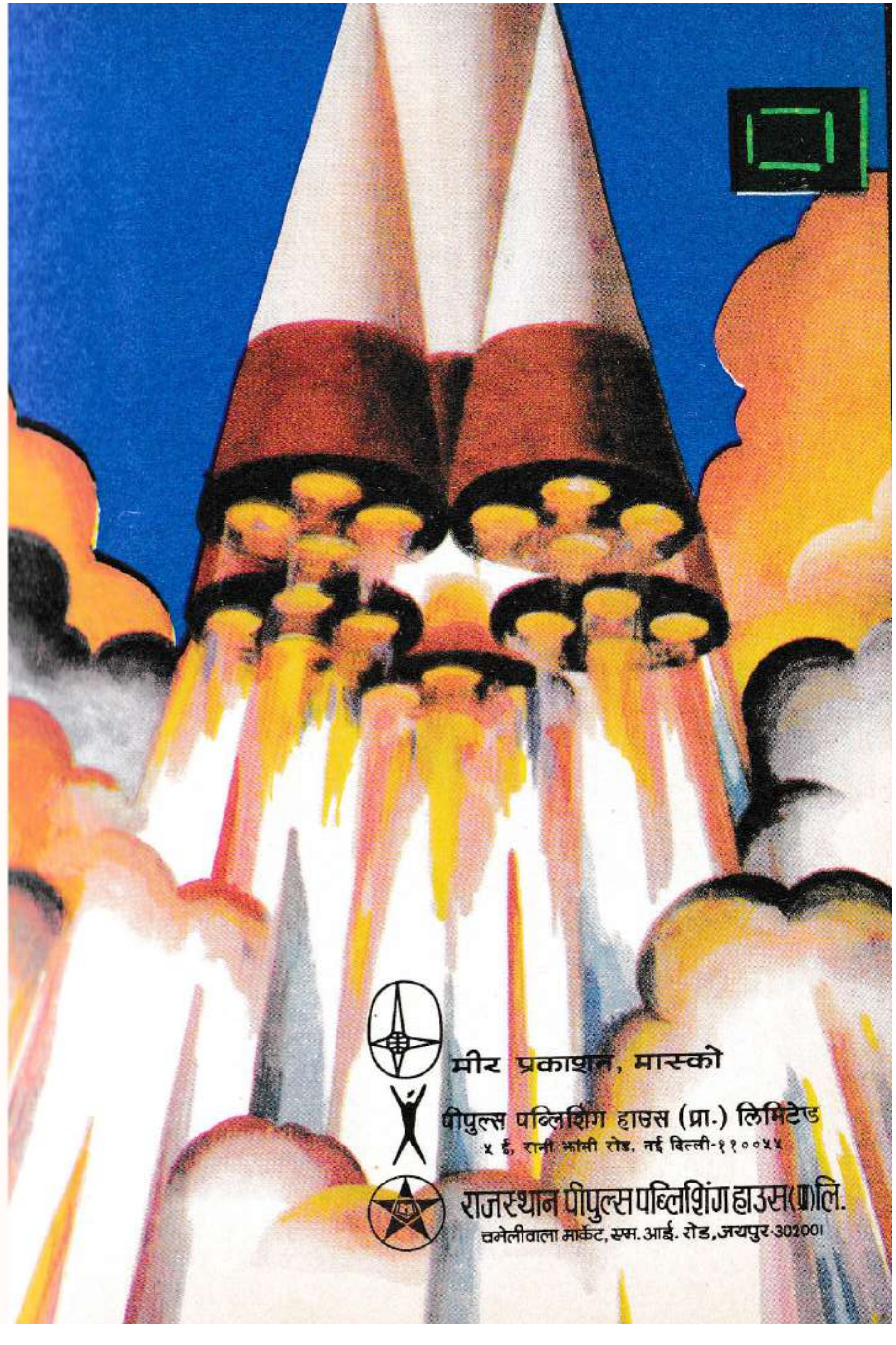
फ्लोरेंती रबीजा

घर में अन्तरिक्ष








मीर प्रकाशन, मास्को
पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
५ ई, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-११००५५
राजस्थान पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि.
चमेलीवाला मार्केट, एम. आई. रोड, जयपुर-302001

फ्लोरेंती रबीजा



घर में अन्तरिक्ष

अनुवादक : देवेंद्र प्र. वर्मा

Ф. Рабиза

КОСМОС У ТЕБЯ ДОМА

Издательство
"Детская литература"
Москва

F. Rabiza

Space Adventures in Your House

На языке хинди

सोवियत संघ में मुद्रित

ISBN 5-03-000455-6

किशोर पाठकों से

प्रिय बच्चो! आप में से बहुत से लोग अंतरिक्ष की सैर के सपने देखते होंगे, अंतरिक्ष-यान के चालक भी बनना चाहते होंगे, ताकि अंतरिक्ष पर विजय प्राप्त कर सकें, नये-नये ग्रहों पर जा सकें। लेकिन यह जान लें कि अंतरिक्ष का रास्ता सरल नहीं है। अंतरिक्ष पर विजय सिर्फ रूमानी यात्राएं ही नहीं हैं, जैसा कि विज्ञान-गल्पों में लिखा रहता है। यह कठिन और खतरनाक भी है; इसके लिये लगन चाहिये, त्याग चाहिये। जो अंतरिक्ष को अपना जीवन अर्पित करना चाहते हैं, उन्हें ये बातें याद रखनी चाहिये।

अंतरिक्ष का रास्ता कहां से शुरू होता है? सबसे पहले अच्छी पढ़ाई से। भावी अंतरिक्ष-यात्री को शिक्षित होना चाहिये, जिससे वह स्वस्थ रहे, सहनशील और शक्तिशाली रहे।

आप अंतरिक्ष के बारे में किताबें पढ़ते होंगे। यह किताब भी, जो आपके हाथों में है, अंतरिक्ष के साथ संबंध रखती है। लेकिन यह किताब सिर्फ यूं ही पढ़ने के लिये नहीं है। यह पाठ्य-पुस्तक भी नहीं है। इसे सिर्फ पढ़ना ही नहीं चाहिये, इसमें जो कुछ लिखा हुआ है उसे अपने हाथों से करना भी चाहिये – सरल उपकरण और उनके प्रतिरूप बनाना, उनके साथ मनोरंजक प्रयोग करना जो अंतरिक्ष से वास्ता रखते हैं।

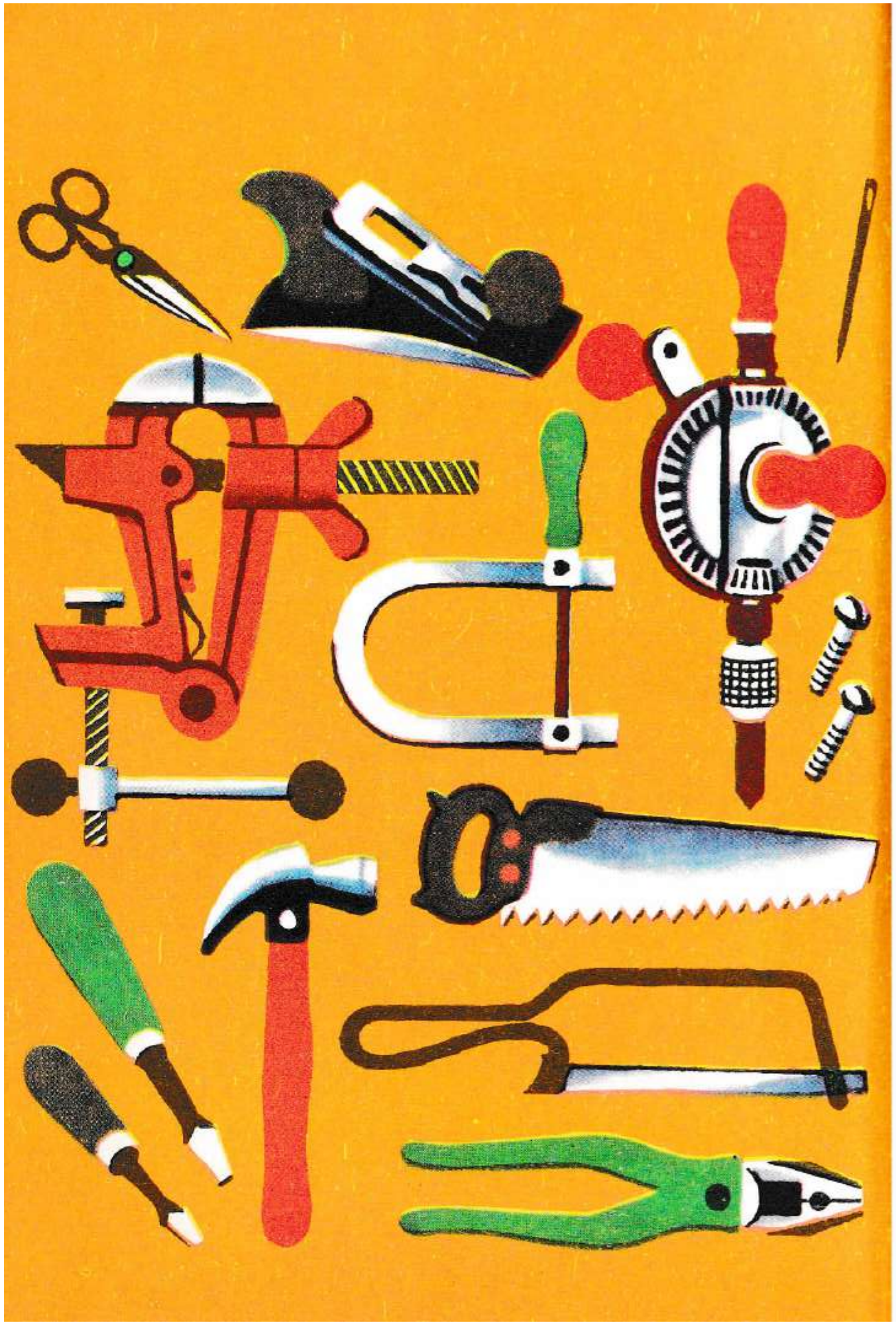
कौन जानता है, कहीं ये सरल प्रयोग ही आपके लिये अंतरिक्ष में पहला कदम सिद्ध हों?

मेरी हार्दिक कामना है, मित्रो, कि आपको सफलता मिले, आपकी यात्रा खुशियों से भरी हो!

ब्ला० लाजारेव
सोवियत अंतरिक्ष-यात्री,
सोवियत संघ के वीर



विषय-सूची



हम अंतरिक्षी गवेषणाओं के युग में जी रहे हैं। अंतरिक्ष का रास्ता खोलने वाले पहले आदमी यूरी गागारिन थे। 12 अप्रैल 1961 को अंतरिक्ष-यान 'वोस्तोक' में उनकी उड़ान मानव-इतिहास की एक असाधारण घटना थी।

लेखकीय

लेकिन गागारिन की उड़ान के पहले सारी दुनिया पृथ्वी के कृत्रिम उपग्रह से अचंभित हुई थी, जिसे सोवियत संघ ने छोड़ा था। अब पृथ्वी के गिर्द अनेक स्पूतनिक मंडरा रहे हैं। अंतर्ग्रही स्वचल स्टेशन सिर्फ चांद ही नहीं, मंगल और शुक्र ग्रहों पर भी पहुंच रहे हैं। क्या शुक्र पर पहुंचने वाले अंतर्ग्रही स्वचल स्टेशनों की सफलता आश्चर्यजनक नहीं है, जिन्होंने इस रहस्यमय ग्रह की सतह से ढेर सारी नयी सूचनाएं प्रेषित कीं, पृथ्वी पर उसके परिदृश्यों के फोटो-चित्र भेजे?

और अंतरिक्ष-यानों तथा दीर्घकालीन कक्षीय स्टेशनों में उड़ान के वक्त अंतरिक्ष-यात्री क्या कम महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक कार्य करते हैं?

पर अंतरिक्षी व्योम पर विजय अभी शुरू ही हुई है। काम अब भी बहुत ज्यादा है। और जो अंतरिक्ष पर विजय के लिये अपने को अर्पित करना चाहते हैं, उन्हें अभी से ही इसकी तैयारी शुरू कर देनी चाहिये।

हमारे अंतरिक्ष-यात्री, राकेट-निर्माता, अंतरिक्षी व्योम का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिक उच्च शिक्षा प्राप्त सुसंस्कृत लोग

हैं। उनके जैसा बनने के लिये बहुत पढ़ना चाहिये, अन्वीक्षण और प्रयोग करना आना चाहिये। 'घर में अन्तरिक्ष' आपको अपनी क्षमता से प्रयोग करना सीखने में सहायक होगा। निस्संदेह इस पुस्तक में असली अंतरिक्ष की बात नहीं चल रही है, पर इसमें ऐसे प्रयोगों के बारे में बताया गया है, जिनका संबंध अंतरिक्ष के साथ है (पुस्तक लिखने का यह विचार लेखक वी. पेकेलिस की प्रेरणा से उत्पन्न हुआ था)। आप उन्हें घर में या स्कूल की तकनीकी मंडली में कर सकते हैं। यहां दिये गये प्रयोग उन्हीं भौतिकीय नियमों पर आधारित हैं, जिनका अध्ययन आप स्कूल में करते हैं। इसमें आपको वातावरण के दाब और निर्वात के साथ, जड़त्व और भारहीनता के साथ प्रयोग मिलेंगे, स्पेक्ट्रमी विश्लेषण के क्षेत्र से भी प्रयोग मिल जायेंगे; आप ग्रहचरों के प्रतिमानों को दूर से संचालित करने के सिद्धांतों और छोड़े गये राकेट के पैराशूट से या पैराशूट की सहायता के बिना जमीन पर नर्मी से उतरने के सिद्धांतों के साथ परिचय पायेंगे। यहां तक कि 'अंतरिक्षी युक्तिचालन' (डौकिंग) – हवा में दो डब्बेनुमा पतंगों का मिलन – भी करा सकेंगे।

प्रस्तुत पुस्तक व्यवहार में आपके ज्ञान की परीक्षा लेने और खोज की ओर प्रथम कदम उठाने में आपकी सहायता करेगी। निर्माण के लिये प्रस्तावित सरल प्रतिमानों के आरेख नहीं दिये गये हैं। लेखक की अभिलाषा है कि आप खुद पहल लें और उन्हीं सामग्रियों का उपयोग करें, जो आपके पास हैं। प्रयोगों और भावी स्वनिर्मित वस्तुओं के लिये आवश्यक सामग्री इकट्ठा

करने के लिये एक बड़ा-सा डब्बा रख लें, जिसमें छोटे-छोटे खाने बने हों या जिसमें छोटी-छोटी डिब्बियां रखी जा सकें। इनमें आप काम लायक पुर्जे आदि रख सकते हैं, जैसे नट-बोल्ट, पेंच, वाशर, भिन्न आकार की नलियां, तार, धागे की अंटी, फिल्म के कैसेट, बाल-बेयरिंग की गोलियां, खिलौने के पुर्जे आदि आदि।

काम करने की संस्कृति भी तय कर ली जाये। काम करीने से करना चाहिये: औजार बिखरा कर न रखें, काम के बाद कूड़ा साफ कर लें। घर में काम आने वाली वस्तु का उपयोग न करें, यदि उनके खराब होने का खतरा हो। जब प्रयोग के लिये किसी सामग्री की आवश्यकता हो, तो उसके मालिक से पूछे बिना उसका उपयोग न करें।

हर प्रयोग, जिसका वर्णन इस पुस्तक में है, लेखक ने स्वयं करके देख लिया है कि वह सही है। लेकिन यहां वर्णित कोई भी प्रयोग पूरा करने के लिये काम में लगन और सलीके की जरूरत है।

हो सकता है कि काम करते वक्त कोई कठिनाई उठ खड़ी हो। इस स्थिति में शिक्षक, माता-पिता या किसी परिचित से सलाह और सहायता लेने में हिचकिचायें नहीं। काम के दरम्यान आपको बढ़ई, मिस्त्री आदि का हुनर भी आ जायेगा, और तब आप अपने अनुभव से अपने मित्रों की भी सहायता कर सकेंगे।

सफल रहें – मेरी शुभकामनाएं आपके साथ हैं, मित्रो!

दो कट्टर दुश्मन. जब हम **अंतरिक्ष** की बात करते हैं, तो हमारी कल्पना में एक ठंडा और निर्वात व्योम नाचने लगता है जो पार्थिव वातावरण की सीमा से बाहर शुरू होता है। यह मृत व्योम है। यदि हवा नहीं है, तो जीवन भी नहीं है।

वातावरण और रिक्तता के साथ प्रयोग

पृथ्वी पर प्राकृतिक परिस्थितियों में रिक्तता नहीं मिलती। पार्थिव प्रकृति रिक्तता को सहन नहीं कर पाती है। वातावरण में कहीं थोड़ा-सा विरलन होते ही आस-पास की हवा उसे भरने के लिये दौड़ पड़ती है। यदि जमीन के नीचे ऐसा होता है, उदाहरणार्थ जब ज्वालामुखी के कार्य से पृथ्वी की भारी परतें अपनी जगह से खिसक पड़ती हैं और रिक्तता की विराट गुफाएं उत्पन्न हो जाती हैं, तो वे तुरंत ही भर जाती हैं – पानी या पेट्रौल से, अथवा हवा या गैस से और कभी-कभी तो पिघले हुए लावा से।

अंतरिक्ष में भी आदर्श रिक्तता नहीं है। वहां अतिविरल गैस है, नगण्य मात्रा में ही सही, पर अंतरिक्षी धूल के अतिसूक्ष्म कण भी हैं।

लोगों को एकदम समझ में नहीं आ गया था कि हवा में भार होता है। लंबे समय तक वह भारहीन मानी जाती थी। धरातल पर हवा का भार कुछ कम नहीं है। हवा सभी वस्तुओं को एक वर्ग सेंटीमीटर पर करीब एक किलोग्राम के बल से दबाये रखती है। इस दाब को **वातावरण का दाब** कहते हैं।

हम लोग इसे सरलतापूर्वक सहन कर लेते हैं; यहां तक कि हमें इसका अनुभव भी नहीं होता क्योंकि हमारे अंदर का दाब बाहर के इस दाब को संतुलित कर देता है। प्राकृतिक स्थितियों में रिक्तता मिलती ही नहीं है। लेकिन पृथ्वी की सीमा के पार, उसके वातावरण की सीमा के पार, अंतरिक्ष में, रिक्तता शक्तिशाली और धूर्त है। उससे अंतरिक्ष-यान के नन्हे-से वातावरण की सावधानीपूर्वक रक्षा करनी पड़ती है। यान को हर्मेटित करना पड़ता है। छोटा सा छेद भी गलती से छूट जाने पर यान की सारी हवा अतोष्य अंतरिक्ष में उड़ जायेगी।

यान से खुले अंतरिक्ष में निकलने के लिये, जैसा कि आप जानते हैं, अंतरिक्ष-यात्री को विशेष पोशाक पहननी पड़ती है और साँस लेने के लिये साथ में वायवी उपकरण रखना पड़ता है। अंतरिक्ष-यात्री पहले दरवाजे से विग्रह-कक्ष में आता है। दरवाजा अच्छी तरह से बंद हो जाता है। फिर दूसरा, बाहर का दरवाजा खुलता है और विग्रह-कक्ष में उपस्थित थोड़ी बहुत हवा तेजी के साथ खुले रिक्त व्योम की ओर दौड़ पड़ती है। इसके बाद अंतरिक्ष-यात्री निकलता है।

अब प्रश्न उठता है: पृथ्वी के गिर्द हवा कैसे रुकी रहती है, वह असीम ब्रह्मांड में क्यों नहीं बिखर जाती?

इसके लिये हमें पार्थिव गुरुत्वाकर्षण का कृतज्ञ होना चाहिये, जो सिर्फ हम और आप को ही नहीं, पृथ्वी पर स्थित सभी वस्तुओं को और साथ ही हवा को भी उसपर मजबूती से रोके रहता है। धरातल के जितना ही निकट जायेंगे, हवा उतनी ही

घनी होगी। लेकिन सौ किलोमीटर की ऊँचाई पर वह बहुत विरल हो जाती है। इसी ऊँचाई को वह सीमा मानते हैं, जहां से अंतरिक्ष शुरू होता है।

पृथ्वी से छोटे ग्रहों का गुरुत्वाकर्षण क्षीण होता है, इसलिये उनपर वातावरण या तो होता ही नहीं है, या बहुत ही विरल होता है।

रिक्तता से इतनी 'हानियां' होने के बावजूद वह आवश्यक और लाभकर है। उद्योग की ऐसी शाखाएं भी हैं, जिनका काम रिक्तता के बिना नहीं चल सकता; उन्हें कृत्रिम रूप से रिक्तता बनानी पड़ती है। यह बात और है कि पूर्ण रिक्तता अभी तक प्राप्त नहीं हो पायी है। यहां तक कि अंतरिक्षी रिक्तता भी नहीं बन पायी है। फिर भी पंप हैं, जो हवा निकालकर उच्च कोटि की विरलता उत्पन्न कर देते हैं। विभिन्न तकनीकी उद्देश्यों के लिये यह पर्याप्त होता है। उद्देश्य अनेक हैं। धातुकर्म में इसका उपयोग उच्च कोटि की धातु प्राप्त करने में होता है। धातु की ढलाई तथा अन्य उद्योग-शाखाओं में भी इसका उपयोग होता है। एलेक्ट्रोनी बल्ब और टेलीवीजन की नलियां काम ही नहीं करतीं, यदि उनमें से हवा नहीं निकाली जाती।

अंतरिक्षी रिक्तता से भी लाभ है। अंतरिक्ष-यान निर्वात व्योम में बिना कोई प्रतिरोध महसूस किये निर्बाध रूप से उड़ते हैं। सारी दुनिया के ज्योतिर्विद यही सपना देखते हैं कि पार्थिव वातावरण के बाहर वेधशालाएं बनायी जायें। वहां आकाश-पिंडों के प्रेक्षण में बाधा पहुंचाने वाली हवा नहीं होगी। अंतरिक्षी

कक्षीय केंद्रों से ज्योतिर्विज्ञान संबंधी चंद-प्रेक्षण अभी ही शुरू हो गये हैं।

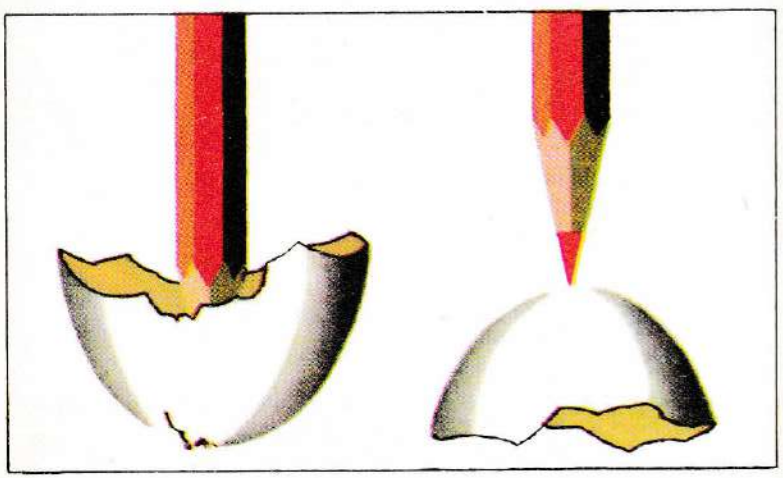
घर में रिक्तता. आपके घर में ऐसे उपकरण अवश्य होंगे, जिनमें रिक्तता 'कैद' होगी।

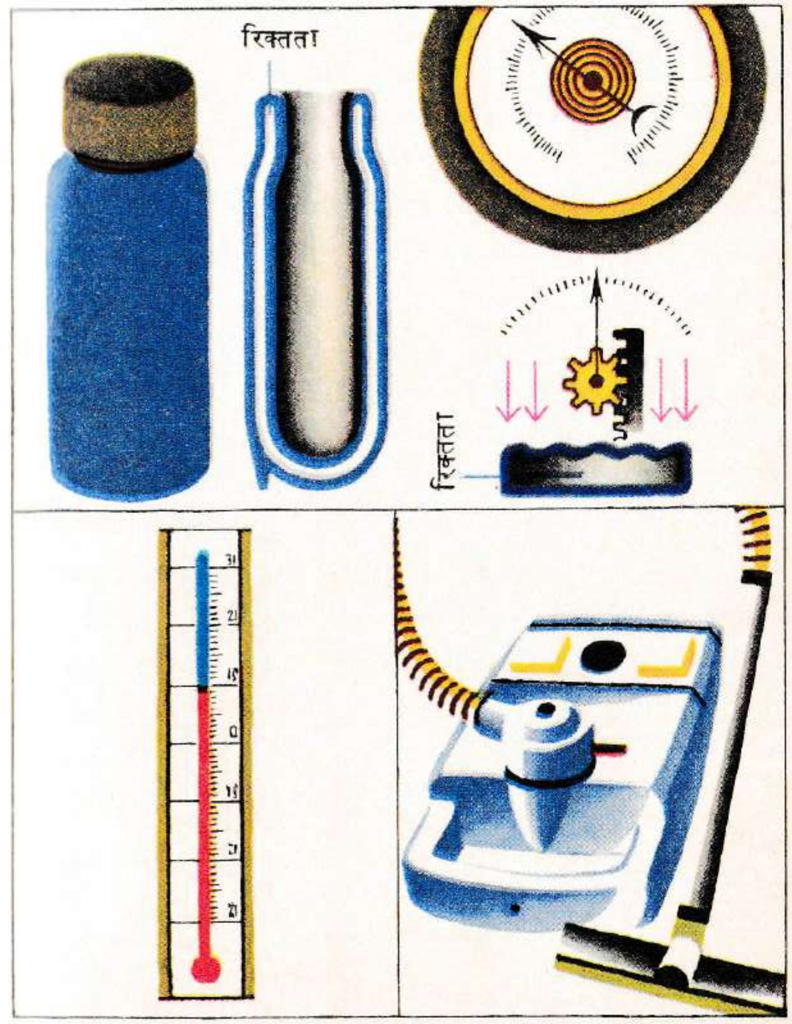
बल्ब वाले रेडियो-सेट में या टेलीवीजन में अनेक एलेक्ट्रोनी बल्ब होते हैं, जिनमें से हवा निकाल दी गयी होती है। एलेक्ट्रोनी धूल बल्ब के उत्तप्त कैथोड़ (नीचद) से निकलकर उड़ती हुई ऐनोड (ऊँचद) पर पहुँचती रहती है। उसके रास्ते में कोई बाधा नहीं होनी चाहिये, पर यह तभी संभव है, जब बल्ब में हवा बहुत विरल कर दी गयी हो। टेलीवीजन-नली में भी यही बात होती है। एलेक्ट्रोन नली के पर्दे पर टकराते हैं और चित्र उत्पन्न करते हैं, जिन्हें हम देखा करते हैं। इसके लिये एलेक्ट्रोनों को निर्बाध रूप से नली के भीतर उड़ना पड़ता है। पर्दे की ओर से टेलीवीजन-नली अकारण ही उत्तल नहीं बनायी जाती – उत्तल सतहें वातावरण का दाब सरलतापूर्वक सहन कर सकती हैं। वातावरणीय दाब कुछ कम नहीं होता। यदि नली की काजकर सतह $730\ cm^2$ है, तो हवा उसके काँच पर करीब 730 kg बल से दबाती है। यह लगभग चौथाई टन के बराबर है, पर उत्तल सतह इसे सहन कर लेती है। बड़े-बड़े दरवाजों आदि के ऊपरी भाग मेहराबनुमा होते हैं, क्योंकि निर्माण-सामग्रियां संपीडन को सरलतापूर्वक सहन करती हैं, बनिस्बत कि लमड़न। यह गुण निर्माण-सामग्रियों में ही नहीं होता। मुर्गी का अंडा ही लीजिये।

मुर्गी जब सेने के लिये बैठती है, तो अंडा उसके बोझ से नहीं टूटता, पर भीतर से कमजोर-सा चूजा भी उसे आराम से तोड़ लेता है (जब उसके बाहर निकलने का समय आता है)। आप खुद देख ले सकते हैं कि अंडे के खोल को भीतर से तोड़ना आसान है, बनिस्बत कि बाहर से। इसके लिये साधारण नोक वाली पेंसिल से अंडे के खोल पर पहले बाहर से फिर भीतर से ठोक लीजिये।

आपके घर में रिक्तता के उपयोग पर आधारित एक और उपकरण होगा – थरमस।

वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में ड्युआर के बर्तन का काफी उपयोग है। इसमें द्रव अवस्था में हवा या कोई अन्य गैस रखी जाती है। द्रव गैस और हवा का तापक्रम बहुत नीचा होता है;





यदि इस तरह का बर्तन नहीं होता तो हवा (या गैस) वाष्पित हो जाती, पुनः गैसीय अवस्था प्राप्त कर लेती।

ड्युआर के बर्तन में दुहरी दीवार होती है, जिसपर भीतर से चाँदी का मुलम्मा चढ़ा होता है। निर्वात व्योम के कारण ही भीतरी दीवार से बाहरी या बाहरी दीवार से भीतरी तक ताप का चालन नहीं हो पाता। दीवार पर चांदी का मुलम्मा भी अकारण नहीं चढ़ाया जाता: तापीय किरणें इससे परावर्तित हो जाती हैं, दीवार को गर्म नहीं कर पाती हैं। ऐसे बर्तन गर्म वस्तु को ठंडा होने से और ठंडी वस्तु को गर्म होने से बचाते हैं। इसीलिये थरमस में, जो दरअसल ड्युआर का ही बर्तन है, गर्म चाय या कौफी लंबी अवधि तक ठंडी नहीं हो पाती।

सोवियत संघ के मौसम-अध्ययन-केंद्रों में आप वातावरण का दाब नापने के लिये पारे का बैरोमीटर देख सकते हैं। पर बैरोमीटर पारे का ही नहीं, धातु का भी होता है। इसे अनेरायड (निर्द्रव) बैरोमीटर कहते हैं। इसकी बनावट बहुत सरल है: धातु की एक खोखली निर्वात डिब्बी की नाजुक लहरदार छत हवा का दाब बढ़ने-घटने पर नीचे दबती है या सीधी होने की कोशिश करती है और साथ-साथ दाँतदार छड़ी को भी नीचे खींचती है या ऊपर धकेलती है; छड़ी के दाँतों से फँसी दंतचक्की थोड़ा घूमती है और सूई को घुमा देती है; सूई की नोक पैमाने पर वातावरण का दाब दिखाती है – पैमाना mmHg (मिलिमीटर पारद-स्तंभ) में अंशांकित होता है। इस तरह मौसम का अंदाज लगाया जाता है, क्योंकि वातदाब में परिवर्तन मौसमी परिवर्तनों के साथ संबंधित होता है।

आपके घर में बैरोमीटर शायद न हो, पर थर्मामीटर जरूर होगा। थर्मामीटर के भीतर केश जैसी पतली नली में, जिसमें पारा या रंगीन स्पिरिट उतरता-चढ़ता है, हवा अनुपस्थित रहती है, नहीं तो वह केशिका-नली में द्रव की गति के लिये बाधक होती।

जब गर्मी से थर्मामीटर की घुंडी गर्म होती है, पारा या स्पिरिट फैलता है और द्रव-स्तंभ ऊपर उठता है। ठंडा होने पर उसकी ऊँचाई कम होने लगती है।

आजकल घर साफ करने के लिये धूलचूषक का विस्तृत उपयोग होने लगा है। बिजली का शक्तिशाली पंखा उसके भीतर हवा को बहुत अधिक विरल कर देता है, जिससे वह बाहर की हवा खींचने लगता है, साथ-साथ धूल भी खिंचने लगती है।

प्रयोगों के लिये उपस्कर. वातदाब और रिक्तता के साथ प्रयोग शुरू करने के पहले हमें कुछ उपस्कर और उपकरण जमा करने होंगे (यह बता दूं कि घरेलू परिस्थितियों में सच्ची रिक्तता नहीं मिलेगी, इसलिये हम रिक्तता की जगह 'विरलित व्योम' शब्द का उपयोग करेंगे)।

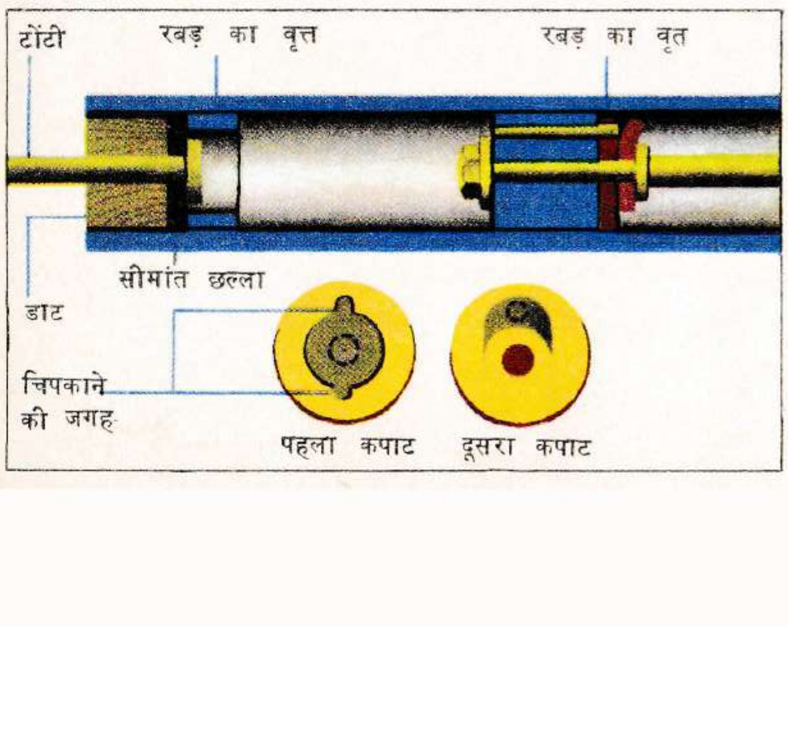
प्रयोग के लिये निम्न वस्तुओं की आवश्यकता होगी: पतली दीवार वाले शीशे का गिलास; समतल काँच का पट्टा (गिलास ढकने के लिये; पुराने निगेटिव से भी काम चल जायेगी), भिन्न आकार वाली काँच की कुछेक बोतलें; रबड़ की दो नलि-

यां – एक कुछ मोटी और दूसरी कुछ पतली ; बैलून की झिल्ली और पंप। पंप खुद बनाना होगा।

आगे आप खुद देखेंगे कि प्रयोग के लिये और क्या-क्या वस्तुएं चाहियें। जैसे – प्लास्टिक का ढक्कन, धागा, प्लास्टिलीन (तेल, जिंक आक्साइड, मोम और गंधक के साथ गूंथी हुई मुलायम चिकटी मिट्टी), काग, डौट पेन का खाली रीफिल, आदि।

ये चीजें आपको आसानी से मिल जायेंगी। सिर्फ पंप बनाना जटिल होगा। अच्छा पंप बनाने के लिये काफी मेहनत करनी पड़ती है, पर अच्छे पंप से काफी रोचक प्रयोग किये जा सकते हैं।

तो अब पंप बनाना शुरू करते हैं। पंप का कार्यसिद्धांत बहुत सरल है। हवा निकालने वाले पंप की खोज 17-वीं शती



में माग्देबुर्ग के नगरपति ओटो हेरिके ने की थी। उन्होंने एक प्रभावशाली प्रयोग द्वारा वातदाब की शक्ति दिखायी थी। 37 सेंटीमीटर व्यास वाले तांबे के दो अर्धगोलों से बने खोखले गोले में से हवा निकाल देने पर उन्हें कई घोड़े मिलकर भी अलग नहीं कर पाते थे। और जब अर्धगोले अलग होते भी थे, तो गोली छूटने जैसी आवाज होती थी।

हवा निकालने के लिये जो पंप अभी हम बनायेंगे, उसका आरेख पृ. 20 पर दिया गया है। इसमें दो कपाट होने चाहियें, जो पिस्टन को आगे-पीछे करने पर बारी-बारी से खुलकर और बंद होकर पंप से जुड़े बर्तन में से हवा निकालने में हमारी सहायता करेंगे। पंप का आकार इस बात पर निर्भर करता है कि किस तरह की सामग्रियां आप जुटा पायेंगे।

सबसे पहले पीतल, तांबे या इस्पात की एक नली ढूंढ़नी होगी, जिसका व्यास 3–5 सेंटीमीटर हो और जिसकी लंबाई 0.5 मीटर से अधिक न हो। नली की भीतरी दीवार बिल्कुल चिकनी होनी चाहिये। नली में उसके एक सिरे से पिस्टन घुसाते हैं और दूसरे सिरे में लकड़ी की डाट लगा देते हैं, जिसके बीचों-बीच टोंटी फिट होती है। टोंटी के बाहर निकले हुए सिरे से रबड़ की नली जोड़ते हैं। डाट लगाने के पहले उसके भीतरी भाग में कपाट की व्यवस्था करनी पड़ती है। इसके लिये डाट के व्यास के अनुसार रबड़ का एक वृत्त काट लें और उसके केंद्र पर छोटा सा छेद बना लें। इसपर पतले रबड़ की एक पंखुड़ी रबड़ सोलुशन से चिपका दें (साइकिल के ट्यूब से काटकर

बना सकते हैं)। यदि डाट नली के सिरे पर चूड़ियों के सहारे घुमा कर लगाया जाता है, तो आगे की समस्या सरलता से हल हो जाती है। रबड़ का वृत्त नली के सिरे पर लगाया जाता है और डाट द्वारा सटाया जाता है। यदि ऐसी व्यवस्था नहीं है, तो लकड़ी की डाट बना सकते हैं और उसके भीतरी भाग पर रबड़ का वृत्त (कपाट समेत) चिपका देते हैं। जब पंप की हवा पंखुड़ी पर दबाव डालती है, तो वह छेद पर कसकर बैठ जाती है और हवा को टोंटी के सहारे निकलने नहीं देती। लेकिन जब हवा टोंटी से पंप के भीतर प्रविष्ट होती है, तो वह अपने दबाव से रबड़ के वृत्त और पंखुड़ी के बीच दरार बना लेती है (पंखुड़ी सिर्फ दो आमने-सामने के स्थानों से वृत्त पर चिपकायी जाती है)।

पिस्टन बनाने का तरीका निम्न है: पुराने अनावश्यक जूते के मोटे सोल में से कई वृत्त काट लेते हैं (इनका व्यास नली के भीतरी व्यास के बराबर होना चाहिये); इन्हें एक पर एक इस प्रकार रखिये कि 2–2.5 सेंटीमीटर ऊँचा सिलिंडर बन जाये। इस सिलिंडर के केंद्र पर एक आर-पार छेद बना लीजिये और उसमें नली से 10–15 सेंटीमीटर अधिक लंबा छड़ (या पतली नली) घुसा दीजिये। छड़ (या पतली नली) के सिरे पर चूड़ियां बनायी जा सकें, तो पिस्टन (चमड़े के सिलिंडर) को आगे और पीछे से नट द्वारा कसा जा सकता है। यदि ऐसी सुविधा नहीं है, तो छड़ में छेद करके काँटी से धातु के वाशर को जड़ना पड़ेगा, या वाशर को सोल्ड करना पड़ेगा।

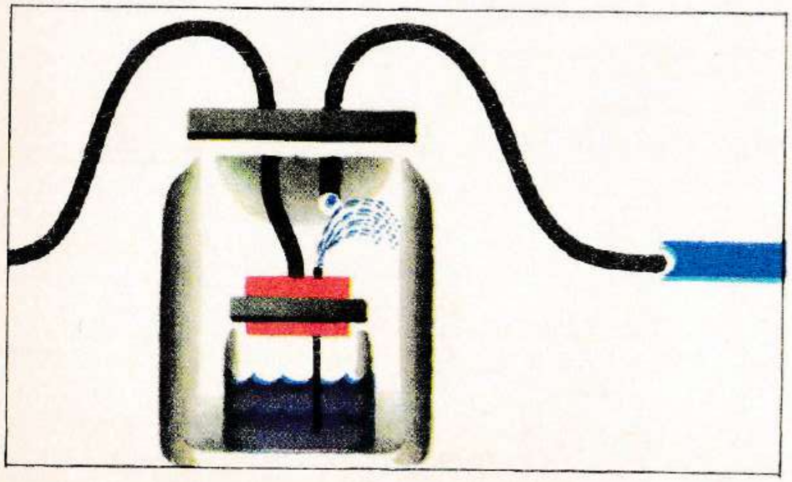
पिस्टन में छड़ के समानांतर एक और छेद बना लें (व्यास कुछेक मिलिमीटर), तथा उसमें पिस्टन जितनी ही लंबी तांबे की एक पतली नली फिट कर दें। नली निकल न आये, इसके लिये उसके मुहानों को काँटी घुसाकर चौड़ा कर लीजिये। पिस्टन पर उसमें लगाये गये छड़ की ओर से रबड़ का एक वैसा ही वृत्त चिपका लीजिये, जैसा मोटी नली के दूसरे सिरे पर लगी डाट पर चिपकाया था। रबड़ के वृत्त में एक छोटा-सा छेद होना चाहिये। वृत्त इस तरह चिपकाते हैं कि यह छेद तांबे की नली के छेद के ठीक ऊपर आ जाये। पतले रबड़ की बनी पंखुड़ी रबड़-सोलूशन से इस प्रकार चिपका लीजिये कि उसका एक किनारा मुड़कर छेद को थोड़ा खोल सके। यह पंप का दूसरा कपाट होगा। यदि सब काम ठीक से किया गया है, तो कपाट बंद होने पर हवा उनसे निकल नहीं पायेगी। लेकिन हवा की धार जब कपाट की पंखुड़ी पर उल्टी तरफ से दबाव डालेगी, वे स्वयं खुल जायेंगे।

अब रेती या रेगमाल कागज से पिस्टन को रगड़कर उसे मोटी नली के भीतरी व्यास के अनुसार बना देते हैं, ताकि नली में वह कसकर फिट रहे, ढीला न हो। पिस्टन को नली में घुसा लीजिये, बाहर निकले छड़ पर एक मूठ लगा दीजिये। पंप की नली में एक सीमांत छल्ला लगाना न भूलिये, ताकि पिस्टन दूसरे सिरे से डाट को धकेलकर बाहर ही नहीं निकल जाये। टोंटी से रबड़ की एक नली कसकर लगा दीजिये। बस, समझिये कि पंप तैयार है। टोंटी से लगी नली पर उंगली रखकर पिस्टन बाहर की ओर खींचिये, आप अनुभव करेंगे कि उंगली भीतर

की ओर खिंच रही है। पिस्टन भीतर धकलने पर टोंटी से कोई हवा नहीं निकलनी चाहिये।

बोतल में फव्वारा. अब प्रयोग शुरू करें, जिसमें आपका बनाया हुआ पंप काम आयेगा।

एक शीशी में रंगीन पानी भरकर उसका मुँह काग से कस दें। काग में पहले से छेद करके एक लंबी पतली रबड-नली और डौट पेन का खाली रीफिल लगा दें। रीफिल से धातु की नीब निकाल लें, रीफिल प्लास्टिक की एक कड़ी नली का काम करने लगेगा। रीफिल को शीशी के तल तक पहुँचना चाहिये। रीफिल का बाहरी मुँह माचिस से पिघलाकर बंद कर दें, फिर उसमें सूई चुभाकर छेद कर दें (हमें बहुत छोटे छेद की जरूरत



है)। शीशी को एक बड़ी मुँह वाली बोतल (या जार, बोइयाम) में रख दें। उसे प्लास्टिक के ढक्कन से अच्छी तरह बंद कर दीजिये; ढक्कन के छेद से छोटी शीशी की लंबी नली का सिरा बाहर निकाल लीजिये। ढक्कन के छेद से एक और कुछ मोटी नली घुसा लीजिये, जिसे आप पंप के साथ जोड़ेंगे। ढक्कन में नलियों के निकलने की जगह उनके चारों ओर प्लास्टीलीन चिपका दें (या मोम पिघलाकर जमा दें); इससे बोतल वायु-रुद्ध (एयर-टाइट) हो जायेगी। उपकरण तैयार है। बोतल की मोटी नली पंप से जोड़ दीजिये और भीतर की हवा निकालना शुरू कीजिये।

बोतल में हवा विरल (कम) होने लगती है; बाहर की हवा पतली नली से होकर रंगीन पानी पर दाब डालती है और रीफिल से पतला रंगीन फव्वारा फूट पड़ता है।

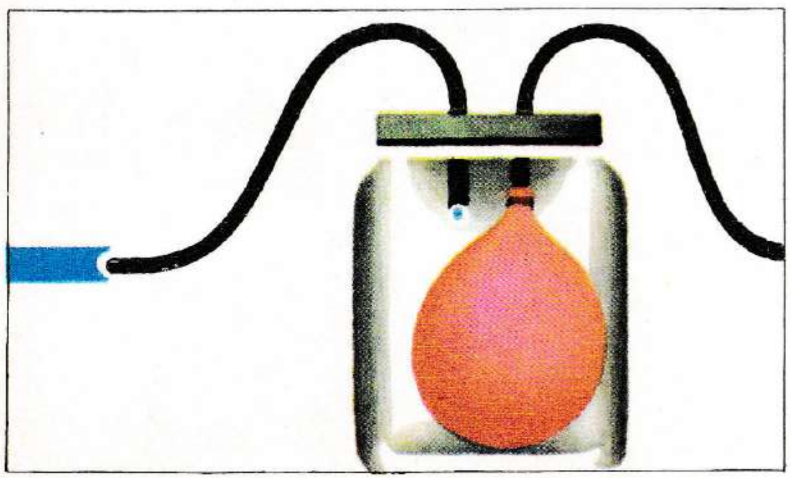
रिक्तता बैलून फुलाती है. अब हम बैलून को एक असाधारण विधि से फुलाते हैं। अक्सर बैलून फुलाने के लिये ताकत लगाकर उसमें हवा फूँकते हैं (मुँह से या पंप से)। हम एक दूसरा उपाय करेंगे। बैलून के आस-पास की हवा हटा देंगे, बाहर की हवा स्वयं बैलून में घुसकर उसे फुला देगी।

पिछले प्रयोग वाली बड़ी बोतल लीजिये, उसे खंगाल लीजिये, पोंछकर सुखा लीजिये। शीशी की जरूरत नहीं है, पर शीशी की लंबी पतली नली की जरूरत पड़ेगी। इसके भीतरी मुँह पर बैलून बाँध दीजिये। बोतल का मुँह बंद कर दीजिये, पतली नली बाहर की ओर इतना खींचिये कि बैलून बिल्कुल

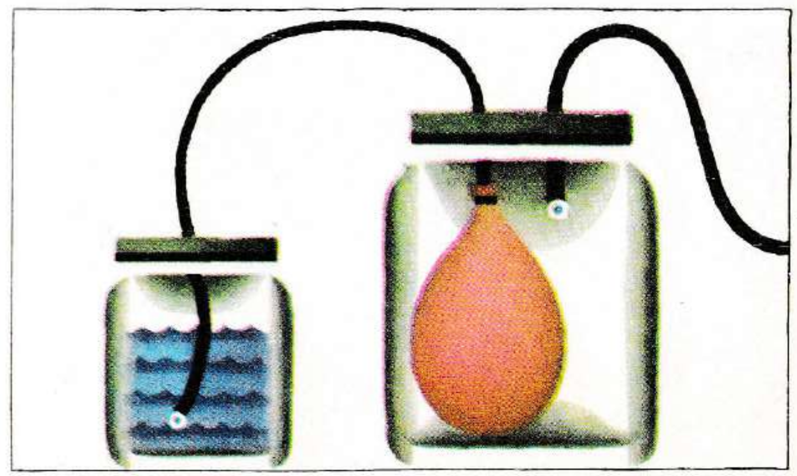
ऊपर पहुँच जाये। अब जल्दी-जल्दी पंप चलाना शुरू कीजिये। बोतल में से हवा जैसे-जैसे बाहर निकलेगी, बैलून फूलता जायेगा और जल्द ही बोतल को भर देगा।

बैलून सचमुच फूल गया है। यह बात और है कि उसे आप छू नहीं सकते। एक और बात है: बोतल में बैलून का आकार दिखाता है कि बोतल से कितनी हवा निकाली जा चुकी है।

पनबैलून. जब बैलून अच्छी तरह फूल जाये, तो पतली नली का बाहरी मुँह पास रखे पानी में घुसा दें और बोतल से हवा निकालने का काम रोक दें। मोटी नली का मुँह उंगलियों से दबाकर बंद रखें, फिर बोतल में धीमे से हवा घुसने दें। बैलून की हवा पानी से होकर गुड़गुड़ाती हुई निकलने लगेगी। जब लगभग सारी हवा



निकल जाये, तो बोतल की हवा फिर से निकालना शुरू करें। अब बैलून पानी से भरने लगेगा। वातावरण अपने दाब से उसमें पानी भेजने लगता है। अब आपके पास हवाई बैलून नहीं, पनबैलून होगा। कोशिश करें कि बैलून में ज्यादा से ज्यादा पानी घुसे। यदि बैलून फटे नहीं, तो उसमें पानी का आयतन बोतल से निकाली गयी हवा के आयतन जितना होगा। यदि आपके पास साइकिल-पंप है, तो उपरोक्त प्रयोगों में इससे भी काम चला सकते हैं। इसके लिये पहले आप पिस्टन वाला छड़ निकाल लें, उसके सिरे पर से नट उतार लें, रबड़ का पिस्टन निकालकर उसे उलटकर फिर अपनी जगह पर बैठा दें (दे० चित्र), ऊपर से नट पुनः कस दें। अब पंप हवा भरने के बजाय उसे निकालने लगेगा। एक ही कमी है कि इस पंप को चलाना बहुत



तेजी से होगा, ताकि हवा को इसके लचीले पिस्टन की किनारियों के पास से विरलकृत व्योम में घुसने का समय न मिले।

साइकिल-पंप अपना नया काम कैसे कर रहा है, वह आवश्यक विरलता उत्पन्न करता है या नहीं, इसकी जाँच करने के लिये आपको एक प्रयुक्ति की आवश्यकता होगी।

एक कीप का सँकरा सिरा पंप की नली के साथ जोड़ दीजिये। चौड़े सिरे पर बैलून की झिल्ली तानकर चढ़ा दीजिये और बांध दीजिये, ताकि वह उसी अवस्था में बनी रहे। अब तेजी से पंप चलाना शुरू कीजिये। यदि वह ठीक-ठाक काम कर रहा है, तो झिल्ली भीतर की ओर खिंच आयेगी, और जबतक पंप चलता रहेगा वह उसी तरह से खिंची हुई अवस्था में टिकी रहेगी। यदि पंप चलाने पर झिल्ली कभी भीतर खिंचती है, तो कभी सीधी हो जाती है, तो इसका मतलब है कि पंप कहीं से लीक कर रहा है। लीक पिस्टन से भी हो सकता है, नली के जोड़ पर भी हो सकता है।

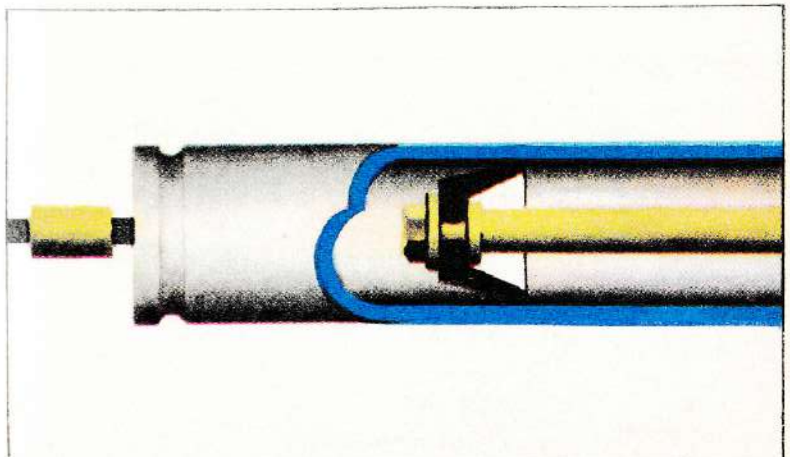
लेकिन यदि झिल्ली कभी भीतर खिंचती है, तो कभी बाहर फूलती है, तो पंप बिल्कुल बेकार है। वह हवा भर भी रहा है और निकाल भी रहा है। इस स्थिति में उसे खोलकर पिस्टन के चमड़े या रबड़ की किनारी फैलाकर उसका व्यास बढ़ाना होगा और उसमें ग्रीस या वैजेलीन लगाना होगा।

सोख्ते से निर्वातक-पंप. आप निम्न प्रयोग अच्छी तरह से जानते होंगे: पानी से लबालब भरा गिलास एक साधारण पन्ने से ढका

जाता है, पन्ना हथेली से दबाये रखकर गिलास औंधा किया जाता है। हथेली हटा ली जाती है, तो पानी गिरता नहीं है। घर में जिस बड़े आदमी ने जादू के रूप में यह प्रयोग आप को दिखाया होगा, उसने यह भी समझाया होगा कि पानी को हवा का दबाव नीचे से रोककर रखता है।

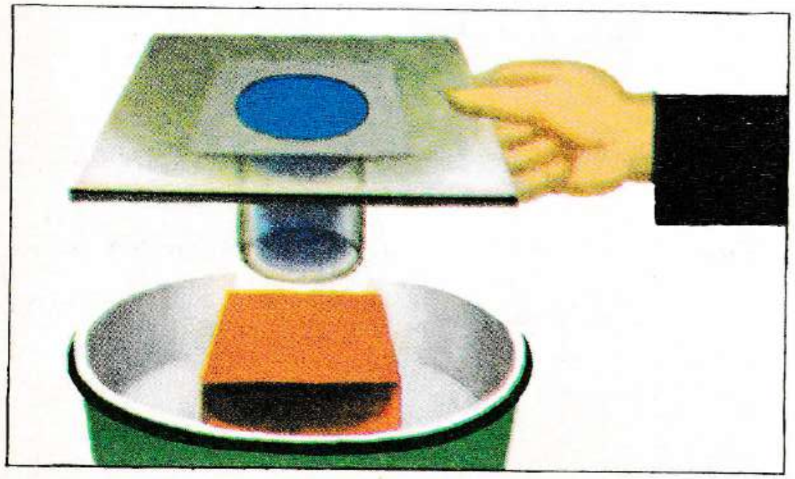
इस प्रयोग को और भी प्रभावशाली बनाया जा सकता है, यदि गिलास में हवा की अतिरिक्त विरलता उत्पन्न की जा सके।

पतले दीवार वाले गिलास में लबालब पानी भर दीजिये और उसे मोटे सोख्ते से ढक दीजिये। ऊपर से काँच का पट्टा रख दीजिये और उसे पकड़े हुए गिलास को सावधानीपूर्वक औंधा कर दीजिये। जब सोख्ता कुछ पानी सोख ले, तो गिलास को



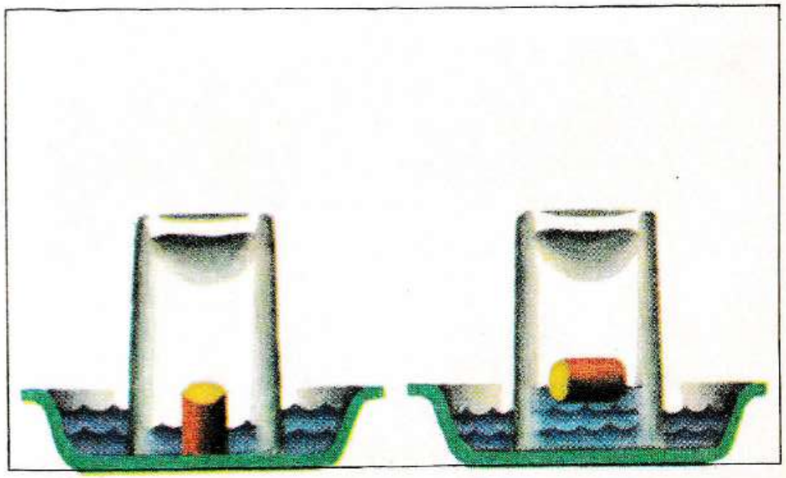
फिर सीधा कर लीजिये और उसे किसी खाली कठौते में स्पंज जैसी किसी मुलायम चीज पर बिल्कुल सीधा करके रख दीजिये (यदि गिलास गिरेगा भी, तो टूटेगा नहीं)। अब काँच के पट्टे को बिल्कुल क्षैतिज स्थिति में पकड़े हुए उठाने की कोशिश कीजिये। साथ-साथ गिलास भी उठ आयेगा।

सोख्ता जब गिलास का कुछ पानी सोख लेता है, तो गिलास में विरलकृत व्योम बन जाता है और बाहरी दाब गिलास को जोर से पट्टे के साथ चिपका देता है। वातदाब पानी के भार के साथ-साथ गिलास के भार का भी मुकाबला कर लेता है। इतना ही नहीं, पट्टे से गिलास को अलग करने के लिये आपको अपनी ओर से भी कुछ ताकत लगाना होगा।



ठंडा होने से विरलन. पिछले प्रयोग में हर्मेटिक रूप से बंद गिलास से हवा निकालकर उसे विरलित किया गया था। इस प्रयोग में हवा को ठंडा करने से विरलन होता है।

दो गहरी तश्तरियां लीजिये। एक में ठंडा पानी डाल लीजिये और दूसरे में गर्म। दोनों में एक-एक काग डाल दें, वे पानी की सतह पर तैरते रहेंगे। ठंडे पानी में तैरते काग को औंधे गिलास से ढक दीजिये। गिलास में स्थित हवा संपीडित होगी और पानी को विस्थापित कर देगी। गिलास में पानी इतना कम हो जायेगा कि काग तैरना बंद कर तश्तरी के तल पर टिक जायेगा। आपके सामने डुबकीमार घंटी का एक प्रतिमान है। असली डुबकीमार घंटी इस्पात के चौकोर बक्से या खोखले बेलन के आकार का होता है, जिसमें पेंदी नहीं होती। इसे नदी या



किसी दूसरे जलाशय में उतारा जाता है, जहां कोई काम करना होता है। भीतर की हवा संपीडित होती है और पानी को अंदर नहीं आने देती है। घंटी के भीतर काम करने वाले लोग भी होते हैं। साँस लेने के लिये घंटी में हवा एक दाब के अंतर्गत दी जाती है। जलगत कामों के लिये अधिक विकसित प्रयुक्ति को कैसन कहते हैं।

दूसरा गिलास लीजिये, उसे पहले गर्म पानी से, फिर खौलते पानी से अच्छी तरह गर्म कर लीजिये, और गर्म पानी में रखा हुआ काग फुर्ती के साथ उससे ढक लीजिये (दूसरी तश्तरी में गर्म पानी लिया जाता है क्योंकि ठंडे पानी में गर्म गिलास डुबाने पर वह टूट जा सकता है)। काग पहले तो पानी के स्तर के साथ नीचे आ जायेगा, पर बाद में गिलास के भीतर की हवा जैसे-जैसे ठंडी होगी, भीतर पानी का स्तर ऊंचा होने लगेगा और इसके साथ-साथ काग भी ऊपर उठने लगेगा। गिलास के पूरी तरह ठंडा होने पर उसमें पानी का स्तर तश्तरी के पानी से ऊँचा हो जा सकता है।

गर्म हवा ठंडी होकर सिकुड़ती है (उसका आयतन घटता है)। गिलास में दाब कम हो जाता है और वाह्य वातदाब तश्तरी के पानी को गिलास में धकेलने लगता है।

लोहे पर हवा की जीत. यह बहुत ही विख्यात प्रयोग है। इसका वर्णन भौतिकी की सभी पाठ्यपुस्तकों में मिल जायेगा, पर घरेलू परिस्थितियों में इसे दिखाना असंभव है – इसके लिये विशेष

डिब्बा चाहिये, जो प्रयोग में एक बार काम में आकर बेकार हो जायेगा।

इंजीनियर ओर्लोव ने घर में यह प्रयोग करने के लिये इसका एक सरल और सुविधाजनक रूप बताया है (वे भौतिकी के कई रोचक प्रयोगों के आविष्कारक हैं)।

सफल प्रयोग के लिये फुर्ती से सोल्डिंग करना आना चाहिये। यदि आप को खुद सोल्डिंग करना नहीं आता, तो किसी की मदद ले सकते हैं।

फल के रस का एक डब्बा ले लीजिये। डब्बा बड़ा होना चाहिये, 0.8 लीटर आयतन से कम का नहीं। काँटी से ठोककर उसकी छत के किनारे एक छोटा-सा छेद बना लें। इसके सामने की किनारी पर भी वैसा ही छेद बना लें। अब जूस को किसी दूसरे बर्तन में ढालना सरल हो जायेगा (पहले डब्बे को उलटकर अच्छी तरह से हिला लें, जूस स्वयं बहने लगेगा)।

यदि डब्बे में सिर्फ रस ही नहीं, फल के टुकड़े भी हैं, तो दूसरे छेद की जगह टिन में एक बड़ा छेद कर लें और इसके सहारे डब्बा खाली करके धो लें। उसमें चौथाई भाग पानी भरकर बड़े छेद पर टिन का पैबंद राँगे से सोल्ड करके उसे अच्छी तरह से बंद कर दें।

यदि डब्बा सिर्फ रस का ही है, तो उसे खंगालकर उसमें चौथाई भाग पानी भर दें और एक छेद को सोल्डिंग से बंद कर दें।

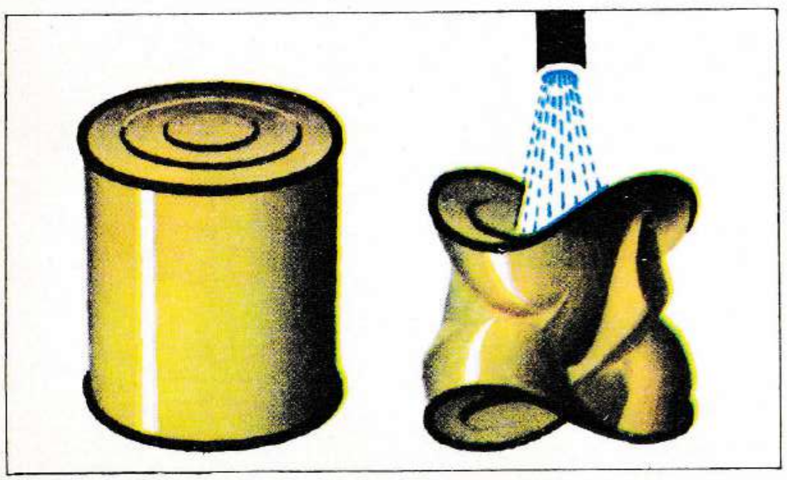
डब्बे को आग पर चढ़ा दें। पानी जल्द ही खौलने लगेगा

और वाष्प तेजी के साथ बचे हुए छेद से निकलने लगेगा। अब कुछ मिनट इंतजार कर लें, ताकि डब्बे की सारी हवा निकल जाये और भीतर पानी के ऊपर का व्योम सिर्फ वाष्प से भरा रहे।

सोल्डिंग का सामान तैयार रहना चाहिये। डब्बे को जल्दी से आग पर से उतार लीजिये और अंतिम छेद भी सोल्ड कर दीजिये। प्रयोग की सफलता इसी बात पर निर्भर करती है कि आप कितनी जल्दी और कितनी अच्छी तरह सोल्ड करते हैं।

अब डब्बे को ठंडे पानी की धार के नीचे रखिये। देखते ही देखते डब्बा टेढ़ा-बुकचा होने लगेगा, मानो कोई अदृश्य शक्तिशाली हाथ उसे दबाकर मरोड़ रहे हों।

क्या बात है? डब्बे की हवा वाष्प से विस्थापित हो चुकी



थी और वाष्प ठंडे पानी के प्रभाव से संघनित होकर पानी में परिवर्तित होने लगा। डब्बे की सतह रस सुरक्षित रखने के लिये पर्याप्त मजबूत थी, पर डब्बे को इसलिये नहीं बनाया गया था कि उसमें से हवा निकाल दी जाये और ऊपर से वातदाब उस पर अपना जोरदार प्रभाव दिखाने लगे।

यदि प्रयोग के समय सिसियाहट सुनाई देने लगे, तो इसका मतलब है कि सोल्डिंग ठीक से नहीं हुआ था। तब सोल्डिंग उखाड़कर छेद साफ कर लेना चाहिये और सब काम शुरू से दुहराना चाहिये।

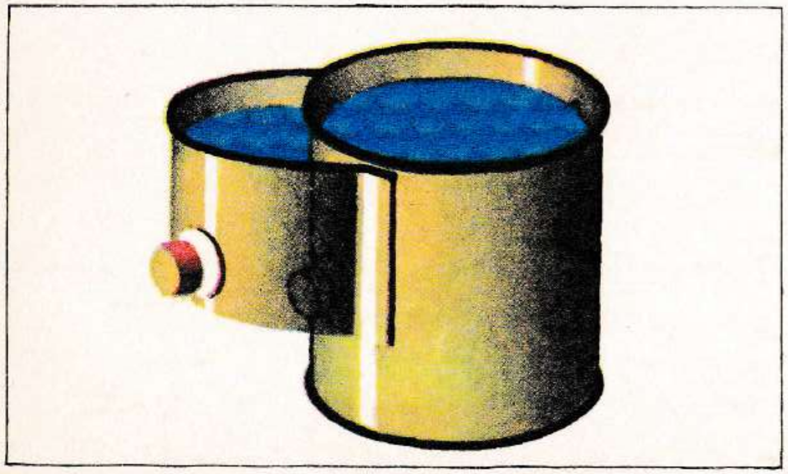
यान से अंतरिक्ष में निकलने के लिये स्लूस. अंतरिक्ष में यान का दरवाजा खोलते ही भीतर की सारी हवा निकल जायेगी, फिर यात्री साँस कैसे लेंगे? कोई ऐसी प्रयुक्ति होनी चाहिये कि यान हवा की एक नगण्य मात्रा ही खोये। स्लूस ऐसी ही प्रयुक्ति है, जिसका कार्य-सिद्धांत उन स्लूस-तंत्रों की तरह ही है, जिनसे होकर जहाज एक नदी से दूसरी में प्रविष्ट होते हैं, या जल-विद्युकेंद्र का बांध पार करते हैं। (ऐसी प्रयुक्तियों को 'स्लूस' कहते थे; लातीनी 'एक्सक्लूडो' – 'अलग करता हूँ' – से)। दोनों में अंतर सिर्फ आकार का है, और यह कि एक में हवा को अलग करने की कोशिश की जाती है, और दूसरे में पानी को।

हम एक स्लूस-कक्ष का प्रतिमान बनायेंगे, जिसमें पानी को हवा मानेंगे। यह काम भी करेगा। यह अंतरिक्ष-यान के स्लूस-कक्ष की तरह तो नहीं होगा, पर इसका कार्य-सिद्धांत वही

होगा। और हमारा उद्देश्य भी यही है – अंतरिक्ष-यान के स्लूस-कक्ष के कार्य-सिद्धांत का परिचय प्राप्त करना।

टिन का एक बड़ा-सा डब्बा हमारा अंतरिक्ष-यान होगा।

नीचे पार्श्व में दो सेंटीमीटर व्यास का एक छेद बना लें। डब्बे के बाहर ठीक छेद के सामने टिन का एक छोटा-सा डब्बा काट कर पहले डब्बे से सोल्ड करना पड़ेगा। यही छोटा डब्बा स्लूस-कक्ष होगा। उसे काटने का काम बहुत सावधानी के साथ करना चाहिये। उसका तल चाप के आकार में काटना चाहिये, ताकि उसे बड़े डब्बे की बाहरी पार्श्व दीवार पर अच्छी तरह से बैठाया जा सके। बड़े डब्बे वाले छेद के ठीक सामने 'स्लूस-कक्ष' में भी एक वैसा ही छेद बना लें (उसकी दीवार काट कर)। 'यान' से 'स्लूस-कक्ष' को अच्छी तरह सटाने के लिये उसकी



ऊर्ध्व दीवारों की किनारी को पाँच मिलिमीटर चौड़ी पट्टी के रूप में मोड़ लें। इस पट्टी को बड़े डब्बे की दीवार पर ठीक-ठीक बैठना चाहिये। 'स्लूस-कक्ष' को यान के साथ अस्थायी तौर पर एक तार से बांध दीजिये, फिर आराम से जोड़ों को रांगे से सोल्ड कर दीजिये।

अंतरिक्ष-यान के स्लूस का प्रतिमान तैयार हो चुका है। छेदों को एक-एक काग से अच्छी तरह बंद कर लें (यदि काग बड़े हैं, तो उनकी किनारी छीलकर उनके व्यास कम कर लीजिये)।

जब सब कुछ तैयार हो जाये, तो 'यान' और 'स्लूस-कक्ष' में पानी भरिये – इतना कि उनकी दीवारों पर बने छेद डूब जायें। लकड़ी के टुकड़े से अंतरिक्ष-यात्री की आकृति काट लीजिये (स्पेस-सूट में, पीठ पर हवा के बर्तन के साथ)। उसकी कमर एक पतले धागे से बांध दीजिये, धागे का दूसरा सिरा यान के भीतर कहीं जोड़ दीजिये। यात्री को यान के पानी में रख दीजिये (हमारे यान में पानी ही हवा का काम कर रहा है)। यात्री उसमें तैरता रहेगा, मानो वह भारहीनता की अवस्था में है।

भीतरी काग खोलकर यात्री को छेद के सहारे स्लूस-कक्ष में ले जाइये और छेद बंद कर दीजिये (धागा कोई बाधा नहीं पहुँचायेगा)। अब 'स्लूस-कक्ष' का बाहरी दरवाजा (काग) खोलिये, पानी गिरने लगेगा और साथ-साथ यात्री बाहर 'अंतरिक्ष' में आ जायेगा। 'स्लूस' बंद कर दीजिये।

यात्री यान में वापस भी इसी तरह से जायेगा। पहले 'स्लूस' का दरवाजा खोलिये, यात्री को 'स्लूस-कक्ष' में प्रविष्ट कराइये, दरवाजा बंद कर दीजिये। 'स्लूस-कक्ष' में पहले की तरह पानी भर दीजिये (यह आपने वातदाब को सामान्य किया है!)। अब 'यान-कक्ष' का दरवाजा खोलिये, यात्री को प्रविष्ट कराइये और दरवाजा अच्छी तरह बंद कर दीजिये।

खुले अंतरिक्ष में अंतरिक्ष-यात्री का सचमुच बाहर आना कहीं अधिक जटिल है। हमने हवा की जगह पानी का उपयोग किया है, ताकि सारी प्रक्रिया दृष्टिगम्य हो।

वास्तविक स्लूस-कक्ष के दरवाजे बिजली की मशीनों द्वारा खुलते और बंद होते हैं, पर आवश्यकता पड़ने पर उन्हें हाथ से भी खोला या बंद किया जा सकता है।

18 मार्च 1965 को आदमी पहली बार खुले अंतरिक्ष में निकला था। ये सोवियत अंतरिक्ष-यात्री अलेक्सेई लेओनोव थे। अंतरिक्ष-यान 'वोसखोद-2' के 'स्लूस-कक्ष' से निकलकर वे दरवाजे से पाँच मीटर की दूरी तक गये थे और खुले अंतरिक्ष में बारह मिनट तक रहे थे। गागारिन की प्रथम अंतरिक्षी उड़ान की तरह इनका यह साहसपूर्ण प्रयोग भी अंतरिक्षी-युग के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण कदम था।

साकार सपना. पृथ्वी का कृत्रिम उपग्रह बनाने का विचार कोई तीन सौ साल पहले इसाक न्यूटन ने प्रस्तुत किया था।

उन्होंने सिद्ध किया कि यदि कोई 'भौतिक पिंड' पृथ्वी से पर्याप्त बड़े वेग के साथ निर्वात व्योम में फेंका जाये, तो वह पृथ्वी का चक्कर काटने लगेगा, कभी उसपर गिरेगा नहीं।

भारहीनता के साथ प्रयोग

आप पत्थर के टुकड़े हाथ से फेंक-फेंक कर देख लीजिये कि आप जितना ही जोर से फेंकेंगे (अर्थात् जितना अधिक वेग उसे संप्रेषित करेंगे), वह उतनी ही दूर उड़ेगा। जमीन पर वह गिरता है पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण बल के कारण।

यदि पत्थर को प्रथम अंतरिक्षी वेग (लगभग 7.9 किलोमीटर प्रति सेकेंड) संप्रेषित किया जाये, वह भी अंतरिक्ष में, जहां हवा उसकी गति में बाधक नहीं होगी, तो वह जमीन पर कभी भी नहीं गिरेगा। वह सारा समय पृथ्वी के चारों ओर घूमता रहेगा। पृथ्वी की यह परिक्रमा भी दरअसल गिरना (अभिपातन) ही है, पर इसका वेग इतना है कि पृथ्वी का आकर्षण-बल पिंड की गति-दिशा में सिर्फ इतना ही विचलन उत्पन्न कर पाता है कि वह पृथ्वी से एक निश्चित दूरी बनाये रहता है। पिंड का अपना वेग उसे जमीन पर गिरने नहीं देता।

प्रथम अंतरिक्षी वेग से छोड़े गये हमारे कृत्रिम उपग्रह अभी पृथ्वी के निकटवर्ती अंतरिक्षी व्योम में उड़ रहे हैं। वे मौसम

संबंधी तथा अनेक अन्य प्रकार के वैज्ञानिक प्रेक्षणों में लगे रहते हैं और उनके परिणाम पृथ्वी पर भेजते रहते हैं। इसके अतिरिक्त, इन उपग्रहों पर एक विशेष उपकरण भी होते हैं, जो टेलीवीजन तथा रेडियो कार्यक्रम दूर-दूर तक प्रसारित करने में सहायक होते हैं।

यहां स्पूतनिकों (उपग्रहों) की गति के बारे में जो कुछ कहा गया है, वह अंतरिक्ष-यानों के बारे में भी सही है और कक्षकीय स्टेशनों के बारे में भी, जो पृथ्वी की परिक्रमा करने के लिये भेजे जाते हैं। इनका आकार काफी बड़ा होता है, इन्हें भेजने का उद्देश्य भी दूसरा होता है। इनमें लोगों के रहने की व्यवस्था रहती है ; ये वहां ऐसे प्रेक्षण और प्रयोग करते हैं जो स्वचल मशीनें नहीं कर पातीं।

अंतरिक्ष यानों, कक्षकीय स्टेशनों और पृथ्वी के कृत्रिम स्पूतनिकों पर जो कुछ भी होता है, भारहीनता की अवस्था में होता है। यह ऐसी अवस्था है, जिसमें वस्तु किसी दूसरी वस्तु पर टिककर उसे दबाती नहीं है।

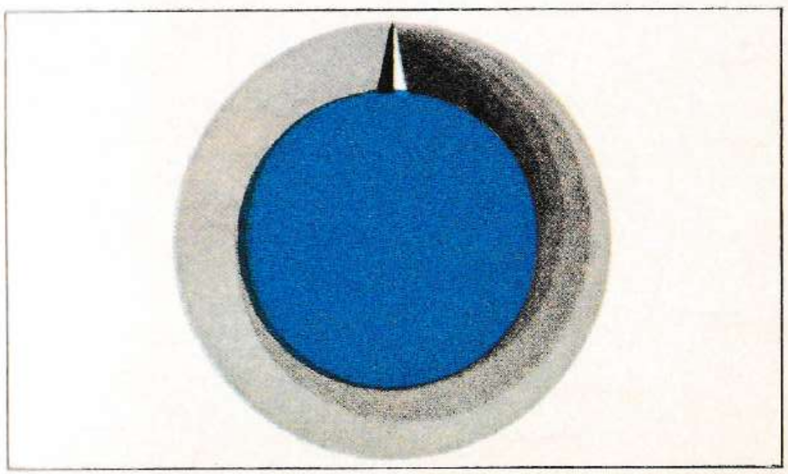
इस अध्याय में हम आपका परिचय भारहीनता के साथ करायेंगे। आप खुद भारहीन नहीं होंगे। घर में ऐसे प्रयोग करना संभव नहीं है। हम लोग ऐसे चंद प्रयोग करेंगे, जिनसे यह स्पष्ट हो जायेगा कि भार गायब कैसे होता, भारहीनता की अवस्था में कुछ पिंड, जैसे द्रव, कैसे आचरण करते हैं। पहले आपका परिचय आंशिक भारहानि से होगा, फिर भार की पूर्ण हानि से।

लेकिन मुख्य प्रयोग शुरू करने के पहले चंद सहायक प्रयोग करेंगे।

अल्पतम सतह की खोज. समान आयतन वाली ज्यामितिक आकृतियों के बीच ऐसी आकृति ढूंढ़ते हैं, जिसकी सतहों का कुल क्षेत्रफल सबसे कम हो। यहां दिये गये सरल सूत्रों की सहायता से आप चंद आकृतियों की सतह सरलतापूर्वक कलन कर लेंगे।

प्लास्टिलीन या चिकनी नर्म मिट्टी का एक टुकड़ा लें (मिट्टी अच्छी तरह से गूंधी हुई होनी चाहिये)।

पहले एक घन बनाइये। चूंकि घन की सभी भुजाएं बराबर होती हैं, इसलिये इसकी एक किनारी नाप लीजिये। अब उसकी पूर्ण सतह का मान ज्ञात करें ; इसके लिये सूत्र है : $S=6l^2$, जहां S घन की सतह का क्षेत्रफल है (वर्ग सेंटीमीटरों में),



l उसकी एक किनारी की लंबाई है (सेंटीमीटरों में)।

प्राप्त उत्तर लिख लीजिये। अब प्लास्टिलीन (या मिट्टी) के उसी टुकड़े से एक बेलन बनाइये। इसका आयतन ठीक घन के बराबर होगा (इसे बनाने में सामग्री वही और उतनी ही लगी है, सिर्फ उसका रूप बदल गया है)। अब बेलन की सतह ज्ञात कीजिये। यह आधारों और पार्श्व दीवारों की कुल सतह होगी। इसका मान निकालने के लिये बेलन के आधार की त्रिज्या और उसकी ऊँचाई नाप लीजिये और निम्न सूत्र का उपयोग कीजिये : $S = 6.28\,r(h + r)$,

, जहां :

S – बेलन की सतह (वर्ग सेंटीमीटर में व्यक्त);

r – आधार की त्रिज्या (सेंटीमीटर में);

h – बेलन की ऊँचाई (सेंटीमीटर में)।

बेलन की सतह का मान भी लिख लीजिये और इसके बाद प्लास्टिलीन के उसी टुकड़े से एक शंकु बनाइये। इसके आधार की त्रिज्या और इसके पार्श्व की लंबाई नाप लें।

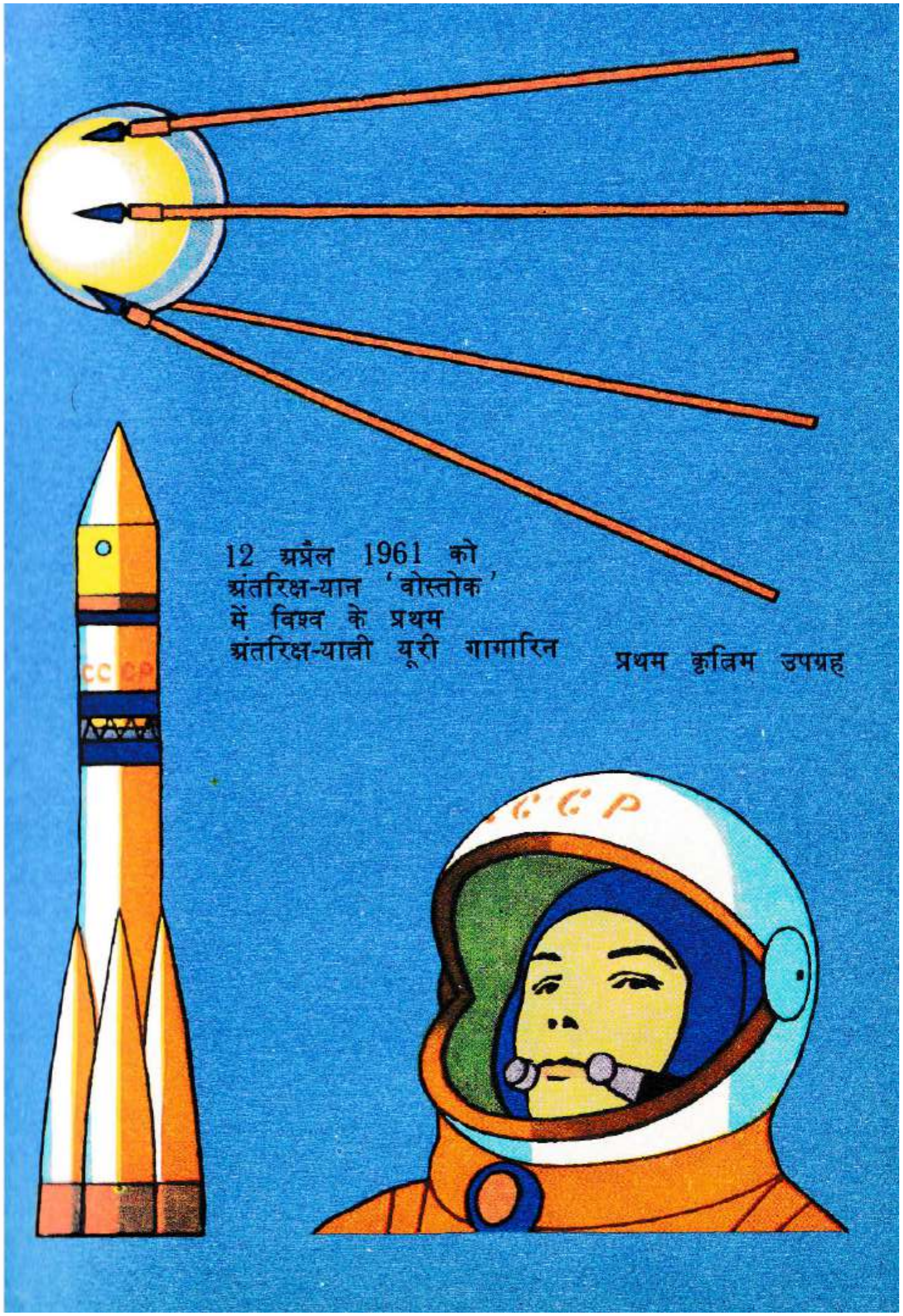
शंकु की सतह के लिये सूत्र है : $S = 3.14\,r(l + r)$,

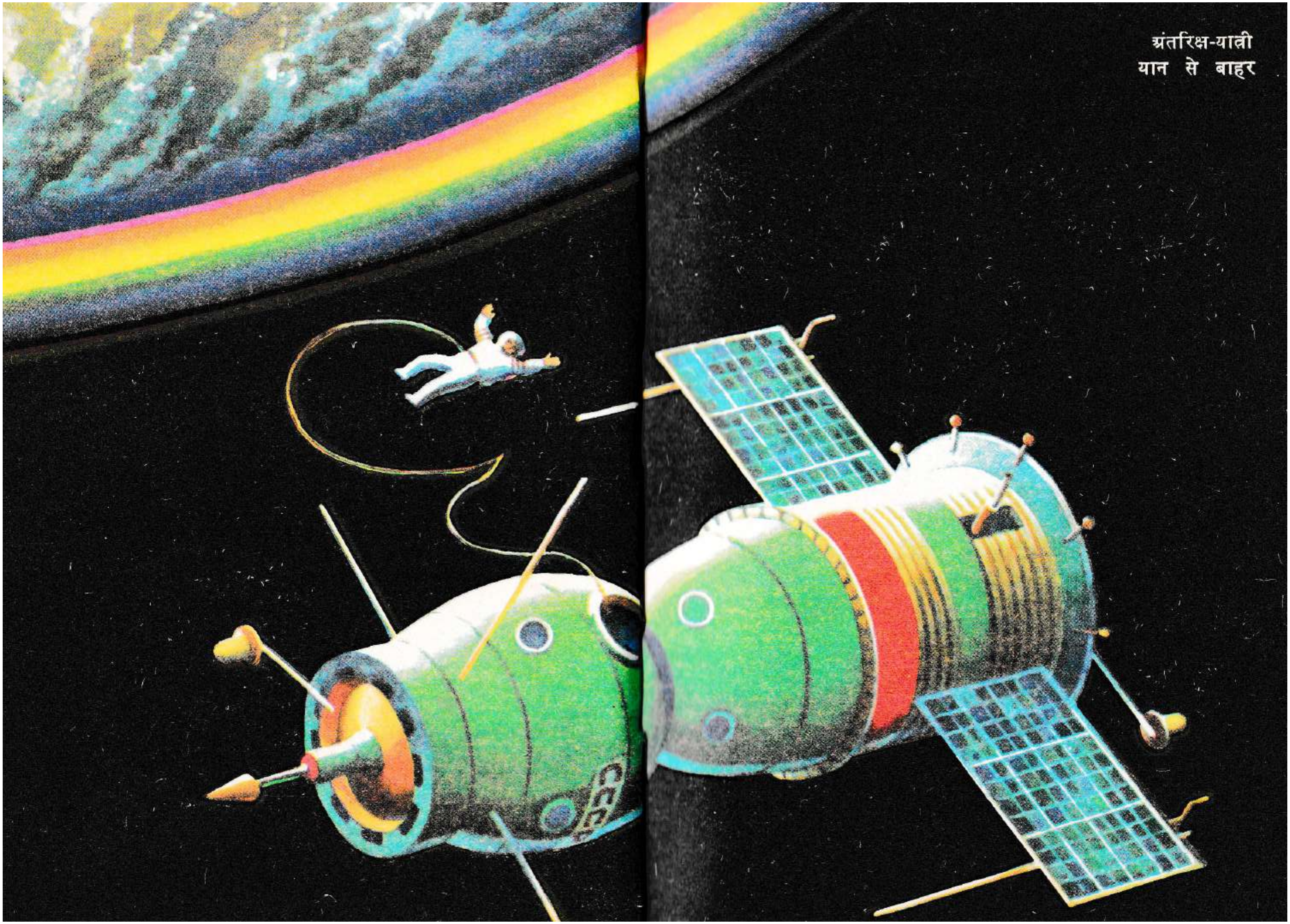
जहां

r – शंकु के आधार की त्रिज्या ;

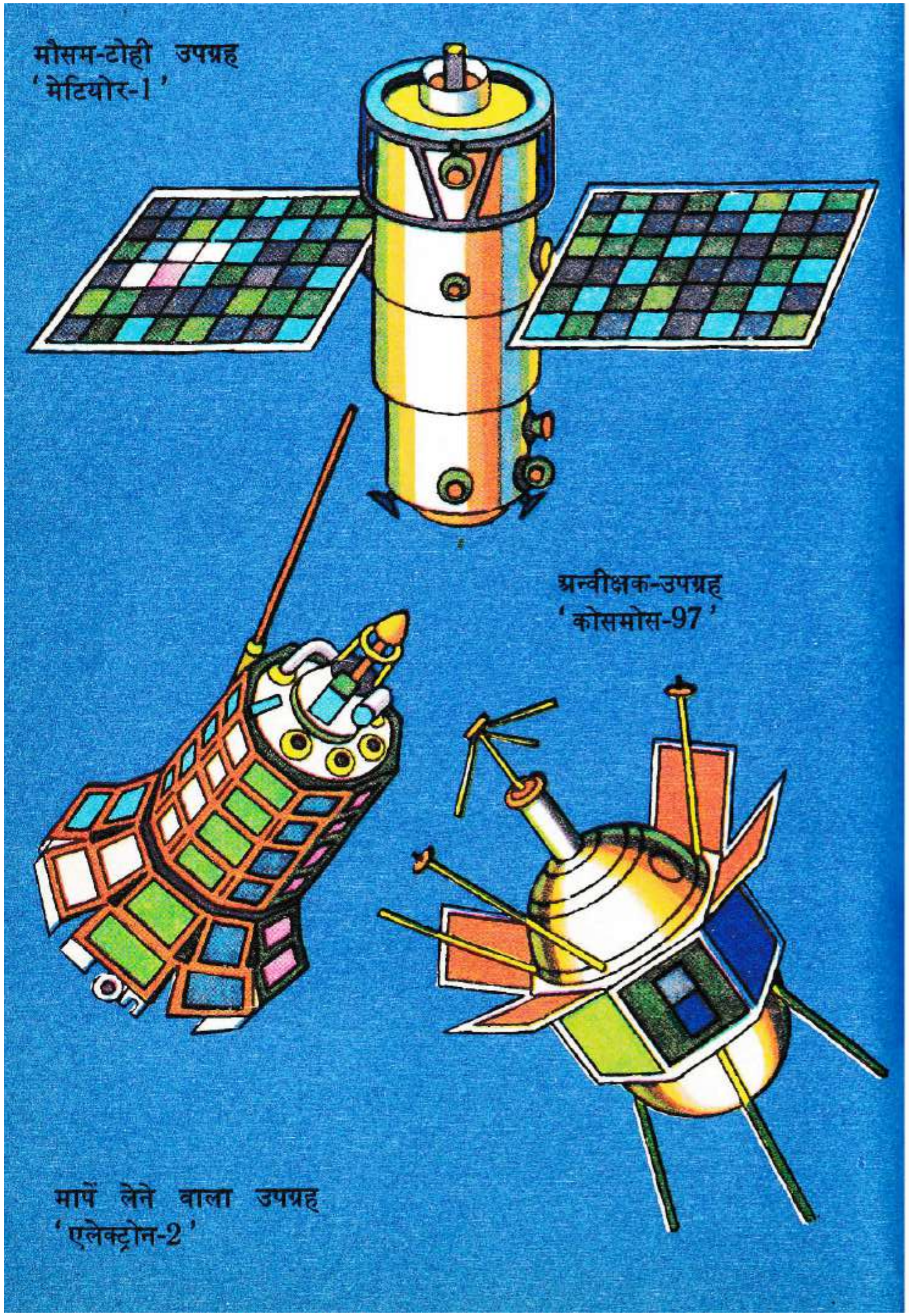
l – पार्श्व की लंबाई।

परिणाम लिख लेने के बाद शंकु को वर्तुल (गोले) में परिणत कर लीजिये। हथेलियों के बीच लुढ़काते हुए उसे बिल्कुल गोल बना लिया जा सकता है।





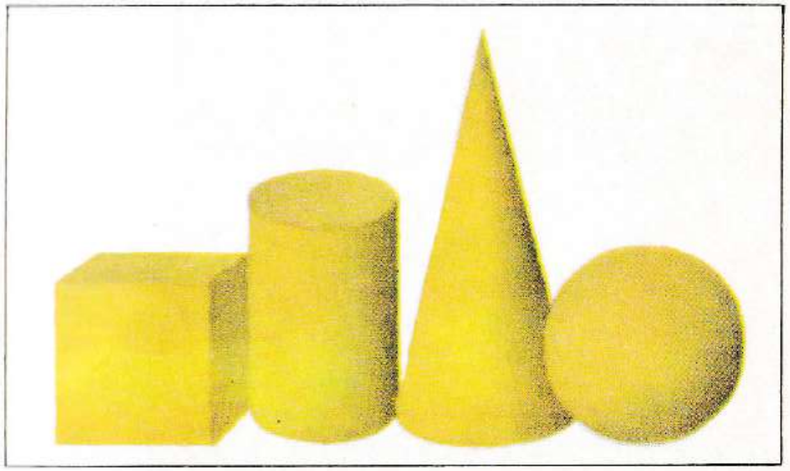
अंतरिक्ष-यात्री
यान से बाहर



सीधा किये हुए बिल्कुल पतले तार (या इतनी ही पतली छड़) को वर्तुल में चुभाकर इस तरह आर-पार करायें कि वह वर्तुल के केंद्र से होकर गुजरे। तार का वह भाग, जो वर्तुल के भीतर छिपा होगा, वर्तुल के व्यास के बराबर होगा, उसे नाप लीजिये। सूत्र $S = 12.56\,r^2$ के अनुसार कलन करके वर्तुल की सतह ज्ञात कीजिये।

जब सभी परिणामों की तुलना करेंगे, तो देखेंगे कि प्लास्टिलीन के एक ही टुकड़े से बनी सभी आकृतियों में से सबसे छोटी सतह रखने वाली आकृति वर्तुल ही है।

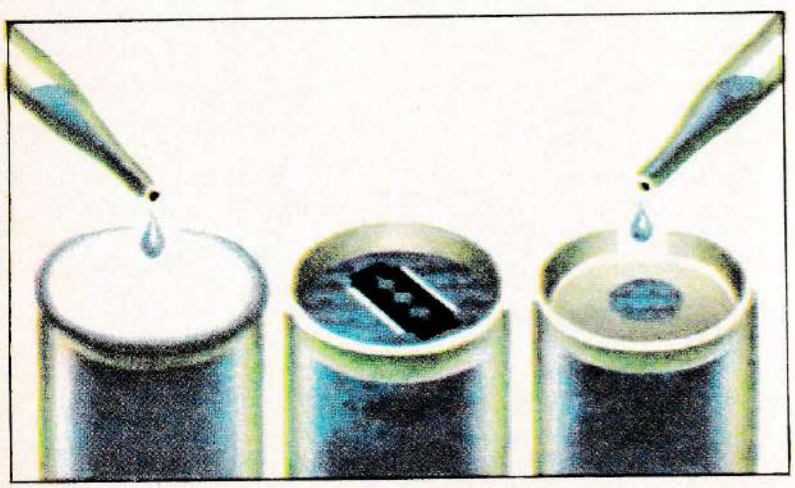
कहना नहीं होगा कि बिल्कुल नियमित ज्यामितिक आकृतियां काफी सावधानी से बनाने पर ही प्राप्त होती हैं।



अदृश्य झिल्ली. भारहीनता की अवस्था में द्रव का आचरण कैसा होता है, यह देखने और सूक्ष्म राकेटों के साथ प्रयोग करने के पहले तलीय तनाव की संवृत्ति के साथ चंद प्रयोग करते हैं।

भौतिकी से आपको ज्ञात है कि किसी भी द्रव की सतह पर तथाकथित तलीय तनाव के बल क्रियाशील रहते हैं। यह याद दिला दूँ कि वे द्रव की सतह पर स्थित अणुओं और गहराई में स्थित अणुओं के पारस्परिक आकर्षण के कारण उत्पन्न होते हैं। इससे ऐसे बल उत्पन्न होते हैं, जो द्रव की सतह कम करने की कोशिश करते हैं।

गिलास में ऊपरी किनारी तक पानी भर लीजिये, फिर ड्रौपर से उसमें बूंद-बूंद कर पानी डालते जाइये। आप देखेंगे कि गिलास में पानी की सतह फूलने लगती है और गिलास की



किनारियों से भी ऊपर उठ जाती है, मानो उस पानी को कोई अदृश्य झिल्ली रोक कर रखे हुए है। ड्रौपर से और भी पानी डालते जाइये, एक क्षण ऐसा आयेगा जब यह 'झिल्ली' पानी को रोकने में असमर्थ हो जायेगी और वह गिलास की किनारियों से बह निकलता है।

आपने छोटे-मोटे जलाशयों में बंधे पानी की सतह पर तरह-तरह के कीड़े-मकोड़ों को दौड़ते हुए देखा होगा। पानी की सतह उनके पैरों के नीचे दब जाती है, पर कभी भी फटती नहीं है।

पानी की तुलना में भारी वस्तुएं, जैसे सूई या ब्लेड, भी उसकी सतह पर टिकी रह सकती हैं। इसके लिये उनकी सतह पर कोई तेल मलकर उसकी पतली परत चढ़ा देना काफी होता है, ताकि पानी उसे भिगा न सके। इस तरह का ब्लेड आप पानी की सतह पर रखिये, वह तैरता रहेगा। आप यह भी देखेंगे कि पानी की सतह उसके भार से कुछ दब गयी है।

यह देखने के लिये कि तलीय तनाव के बल को किसी स्थल पर क्षीण कर देने पर उनका आचरण कैसा हो जाता है, निम्न प्रयोग करते हैं।

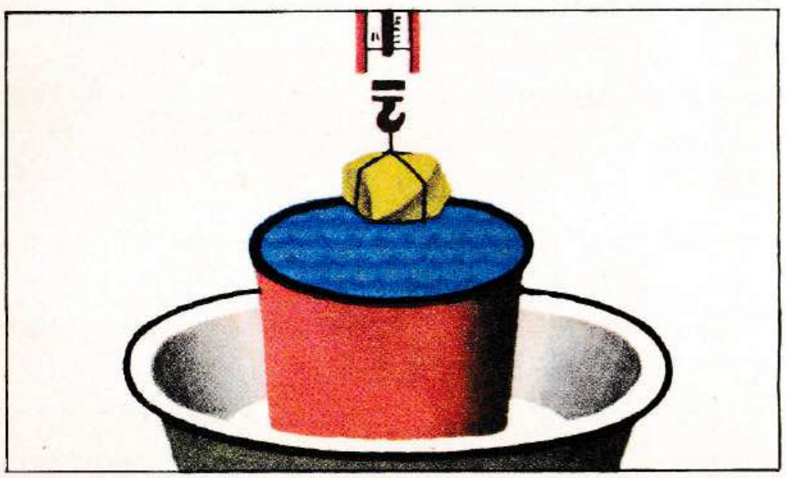
कोई सफेद पाउडर चुटकियों में अच्छी तरह मसलते हुए गिलास के पानी में गिरायें। एक समरूप सफेद सतह मिलेगी। ड्रौपर में साबुनी पानी लीजिये (इसका तलीय तनाव बहुत क्षीण होता है) और सफेद सतह के केंद्र पर एक बूंद डाल दीजिये। देखते-देखते वहां से पाउडर के कण दूर भाग जायेंगे और वहां गोल काला स्थान बन जायेगा। साबुनी पानी की बूंद ने अपने

गिरने के स्थान पर तलीय तनाव कम कर दिया और पानी की सतह गिलास की किनारियों की ओर खिसक आयी।

आंशिक भार-हानि. जब आप नदी, तालाब या किसी अन्य जलाशय में स्नान करते हैं, तो अनुभव करते हैं कि आपका शरीर हल्का हो गया है। आप पीठ के बल लेट जा सकते हैं, आपको सतह पर टिके रहने के लिये कोई ज्यादा बल नहीं लगाना होगा।

एक प्रयोग करते हैं, जो दिखायेगा कि कोई भौतिक पिंड हल्का कैसे हो जाता है।

कमानीदार तुला लीजिये। यदि ऐसी तुला आपके पास नहीं है, तो लकड़ी के छोटे से तख्ते पर रबड़ की पट्टी का एक सिरा



जड़ दीजिये। दूसरे सिरे से बोझ लटकाने के लिये हूक जैसी कोई प्रयुक्ति लगा लीजिये। पट्टी का लमड़न तख्ते पर पेंसिल से अंकित किया जा सकता है।

तुला से कोई बोझ, जैसे एक पत्थर लटकाइये। मान लें कि उसका भार दो किलोग्राम है। यदि आप स्वयं बनाये हुए उपकरण का उपयोग कर रहे हैं, तो पेंसिल से अंकित कर लीजिये कि पट्टी कितनी लमड़ी है।

इसके बाद बाल्टी लीजिये, उसे पूरी तरह पानी से भर दीजिये और एक कठौते में रख दीजिये। तुला से लटकी अवस्था में ही बोझ को पानी में डुबाइये। जब बोझ पूरी तरह डूब जायेगा, तो बाल्टी से पानी का बहना रुक जायेगा।

तुला या पट्टी का लमड़ाव दिखायेगा कि बोझ का भार काफी कम हो गया है। भार में कमी उतनी ही हुई है, जितना बाल्टी से बहकर कठौते में गिरे हुए पानी का भार है। इसकी जाँच कठौते में जमा पानी को तौलकर की जा सकती है।

आप समझ गये होंगे कि यह प्रयोग आर्कमेडिस का नियम दिखाता है।

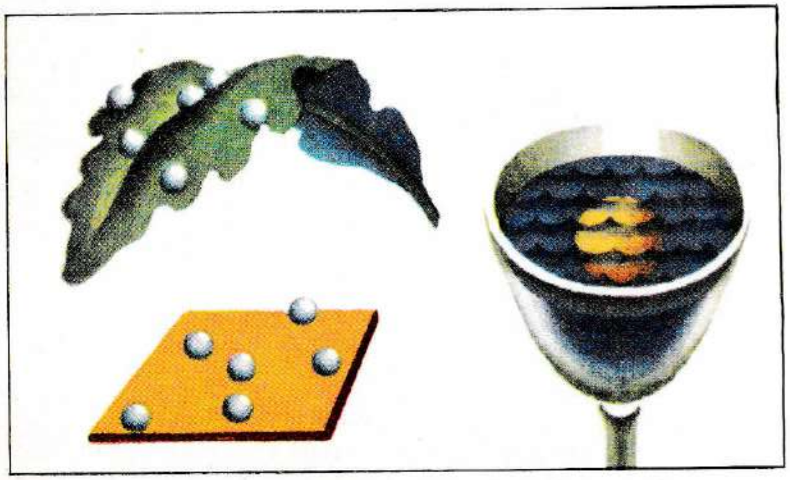
उपरोक्त वर्णन से किसी वस्तु का आयतन भी ज्ञात किया जा सकता है, यदि इसके लिये कोई अन्य विधि प्रयुक्त नहीं हो सकती। इसके लिये वस्तु को पानी में पूरी तरह डुबाना होगा (यदि वस्तु पानी में खराब होने वाली नहीं है), और इसके बाद बहकर गिरे पानी का आयतन नापना होगा। यदि वस्तु बहुत छोटी होगी, तो बर्तन में से पानी नहीं भी गिर सकता

है। इस स्थिति में वस्तु डुबाने के पहले और बाद में पानी के स्तरों का अंतर नापकर आयतन का कलन किया जा सकता है।

वर्तुल द्रव. आप जानते हैं कि द्रव हमेशा उस बर्तन का आकार ग्रहण कर लेता है, जिसमें उसे ढाला जाता है। यदि बर्तन से ढेर सारा पानी चौरस जमीन पर ढाला जाये, तो वह अपने भार के कारण उसपर समरूपता से पसर जायेगा।

लेकिन यदि पानी भारहीन हो जाये, तब उसे बर्तन में से निकालने पर वह कौनसा रूप ग्रहण करेगा?

पहले पानी की एक नन्ही मात्रा, बूंद को देखें। बूंद बहुत हल्की होती है, भार उसके गोल आकार को लगभग नहीं के बराबर विकृत करता है, सिर्फ हल्का-सा दबा हुआ बना देता



है। पानी की वर्तुल बूंदें आप पत्तियों या किसी प्लास्टिक के कपड़े पर देख सकते हैं। बूंद जितनी छोटी होगी, उतनी ही गोलाकार होगी, हवा में बूंदें लगभग वर्तुल ही होती हैं। स्वतंत्र अभिपातन के समय वे भारहीनता की अवस्था में होती हैं, इसीलिये तलीय तनाव उन्हें अल्पतम सतह वाली आकृति प्रदान करने को स्वतंत्र हो जाता है और सतह को सब ओर से सिकोड़ता हुआ अंततः उन्हें गोल बना देता है।

एक पुराना रोचक प्रयोग है, जिसमें द्रव के लिये भारहीनता की परिस्थितियां उत्पन्न की जाती हैं। इस प्रयोग के दौरान आप द्रव का अपना स्वाभाविक रूप बूंदों में नहीं, करीब दो सेंटीमीटर व्यास वाले वर्तुल द्रव में देख सकेंगे।

प्रयोग के लिये आपको मेथिल स्पीरिट या यू डी कोलोन, पानी और सरसों, सूरजमुखी या कपास के तेल, एक गिलास और ड्रौपर की जरूरत पड़ेगी।

गिलास में तेल की कुछ बूंदें डालिये और फिर उसमें आधा के करीब स्पीरिट (या यू डी कोलोन) ढाल लीजिये। तेल स्पीरिट से भारी होता है, अतः वह तल पर जमा रहेगा। अब गिलास में थोड़ा-थोड़ा करके पानी ढालते जाइये और उसे एक पतली छड़ से स्पीरिट के साथ सावधानीपूर्वक मिलाते जाइये। जल्द ही आप देखेंगे कि तेल का गोला तल से अलग होकर मंद गति से ऊपर उठना शुरू करता है। पानी ढालना बंद कीजिये और थोड़ा-सा स्पीरिट ढालिये, तबतक, जबतक गोले का उठना बंद न हो जाये। गोला गिलास में एक गहराई पर लटका रहेगा।

यह स्थिति तब आयेगी, जब तेल का विशिष्ट भार और स्पीरिट व पानी के मिश्रण का विशिष्ट भार बराबर हो जायेंगे।

ड्रौपर में थोड़ा तेल लीजिये और उसके खुले सिरे को तेल के गोले में घुसाकर सावधानी से बूंद-बूंद कर तेल डालते जाइये। गिलास में गोले का आकार बढ़ता जायेगा। इसका अवलोकन ऊपर से करना अच्छा होगा, न कि गिलास के काँच से, जो गोले को विकृत रूप में दिखा सकता है।

यदि आप छड़ से गोले का रूप बिगाड़ने की कोशिश करेंगे, तो कुछ ही सेकेंड बाद वह फिर से अपना पुराना गोल रूप ग्रहण कर लेगा।

तलीय तनाव के बलों के अधीनस्थ तेल अपनी सतह को सब ओर से सिकुड़ाकर अल्पतम सतह – गोले की सतह – बनाता है।

अब कल्पना करें कि आप अंतरिक्ष-यान या कक्षकीय स्टेशन के कक्ष में बैठे हैं, जहां सब कुछ भारहीनता की स्थिति में है।

अभी जो काल्पनिक प्रयोग हम करने जा रहे हैं, इसके लिये अपने साथ एक गिलास पानी भी रख लेते हैं। गिलास हम कितना भी उल्टा-सीधा घुमायेंगे, पानी उसमें से ढलेगा नहीं। इसलिये गिलास को झटका देना पड़ेगा, ज्यादा जोर से नहीं, इतना ही जोर से कि पानी उसके बाहर आ जाये। हवा में उड़कर पानी एक गोले का रूप ग्रहण कर लेगा। भारहीनता की अवस्था में पानी की एक बाल्टी जैसी बड़ी मात्रा भी गोले का रूप ग्रहण कर लेती है। यदि हवा शांत होगी, तो यान के

कक्ष में पानी का एक बड़ा-सा गोला तैरना शुरू कर देगा। भार-मुक्त पानी अंततः अपना स्वाभाविक रूप प्राप्त कर लेगा।

टेलीवीजन पर अंतरिक्षी स्टेशन 'साल्यूत-4' का एक दृश्य प्रसारित किया गया था। अंतरिक्ष-यात्री क्लिमूक और सेवास्त्या-नोव निम्न प्रयोग दिखा रहे थे: वे रबड़ की नली से पानी छोड़ रहे थे और पानी धार के रूप में नहीं, बड़े-बड़े गोलों के रूप में निकल रहा था। जैसा कि आप देखते हैं, कल्पना करने की जरूरत नहीं है, ऐसा सचमुच होता है।

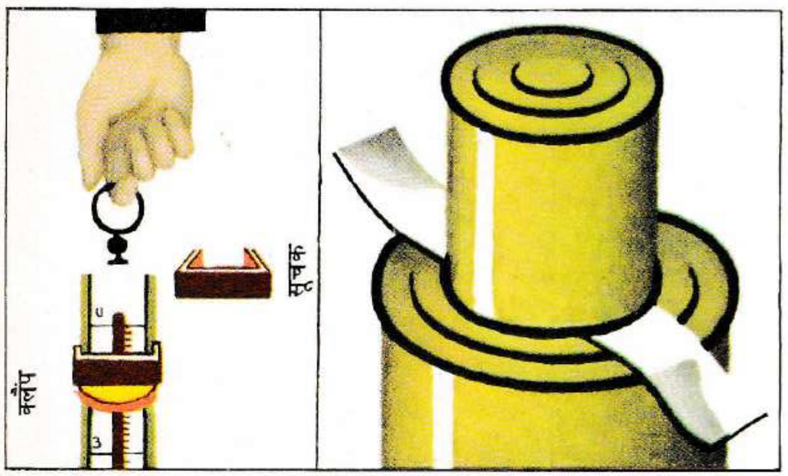
भारहीनता के साथ सरल प्रयोग. भार और गुरुत्व-बल एक ही चीज नहीं हैं: गुरुत्व-बल पिंड पर लगा होता है और भार ऐसा बल है, जो अवलंब पर लगा होता है (जिस पर पिंड स्थित होता है) या उस चीज पर लगा होता है, जिससे पिंड लटका होता है। जब पिंड गिरता है (स्वतंत्र अभिपातन), और गिरता है वह गुरुत्व-बल की क्रिया से, तो वह अवलंब को दाबना या खूँटी को खींचना बंद कर देता है। इसका मतलब है कि भार लुप्त हो जाता है, भारहीनता की अवस्था आ जाती है।

यदि भार नापने वाली कमानीदार तुला उससे लटके बोझ के साथ-साथ स्वयं भी गिरने लगे, तो क्या होगा? तुला दिखायेगी कि भार अनुपस्थित है, उसकी सूई शून्य पर होगी।

कमानीदार तुला लीजिये और उसमें सूई से ऊपर एक क्लिप इस प्रकार लगाइये कि वह पैमाने पर ऊपर-नीचे खिसक सके। तुला से करीब दो किलोग्राम का एक बोझ लटका दीजिये और

क्लिप को नीचे खिसकाकर सूई से सटा दीजिये। तुला को पकड़े हुए उसे तेजी से नीचे की ओर ले जाइये – गति ऐसी होनी चाहिये, मानो तुला स्वतंत्र रूप से गिर रही हो। जब उसे रोकेंगे, सूई वही भार दिखायेगी पर क्लिप शून्य पर खिसका हुआ नजर आयेगा। इसका मतलब है कि तेजी से गिरते वक्त बोझ अपना भार खो बैठा था, सूई शून्य तक ऊपर उठी थी और साथ-साथ क्लिप को भी धकेलकर ले गयी थी। सूई तो नीचे वापस लौट आयी, क्लिप ऊपर रह गया।

यदि आपके पास कमानीदार तुला नहीं है, तो इस तरह का उपकरण लकड़ी के संकरे पट्टे पर रबड़ की पट्टी का एक सिरा जड़कर बना सकते हैं। रबड़ के साथ निर्देशक सूई जड़ सकते हैं और इसके ऊपर क्लिप लगा सकते हैं। पैमाने पर शून्य



की स्थिति अंकित करनी चाहिये और बोझ लटकाने पर सूई की स्थिति अंकित करनी चाहिये, अन्य अंशों की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

एक अन्य प्रयोग करें। टिन के दो बंद डब्बे लें, दोनों के आकार भिन्न होने चाहिये। एक के ऊपर दूसरा इस प्रकार रखें कि एक की पेंदी दूसरे की पेंदी के घेरे में आ जाये। दोनों के बीच कागज का एक फीता इस प्रकार रखें कि उसका एक सिरा बिल्कुल बाहर निकला हो। उसे पकड़कर खींचने की कोशिश करें, आसानी से नहीं खींच पायेंगे, कुछ ताकत लगाना पड़ेगा।

अब फर्श पर चिथड़े आदि रखकर गद्दा-सा बना लें, ताकि न फर्श खराब हो, न डब्बे। एक हाथ से फीते का सिरा पकड़ें और दूसरे हाथ से दोनों डब्बे उठा लें (उनकी स्थिति पहले जैसी ही होनी चाहिये)। डब्बों को छोड़कर गिरने दें, वे भारहीन हो जायेंगे और उनके बीच से कागज सरलतापूर्वक खिंच आयेगा।

संकेतक युक्त भारहीनता. यदि आप स्कूल की भौतिकीय प्रयोगशाला को कोई उपहार देना चाहते हैं, तो निम्न उपकरण बनाइये, जो स्वतंत्र अभिपातन के वक्त भारहीनता की अवस्था का संकेत देगा।

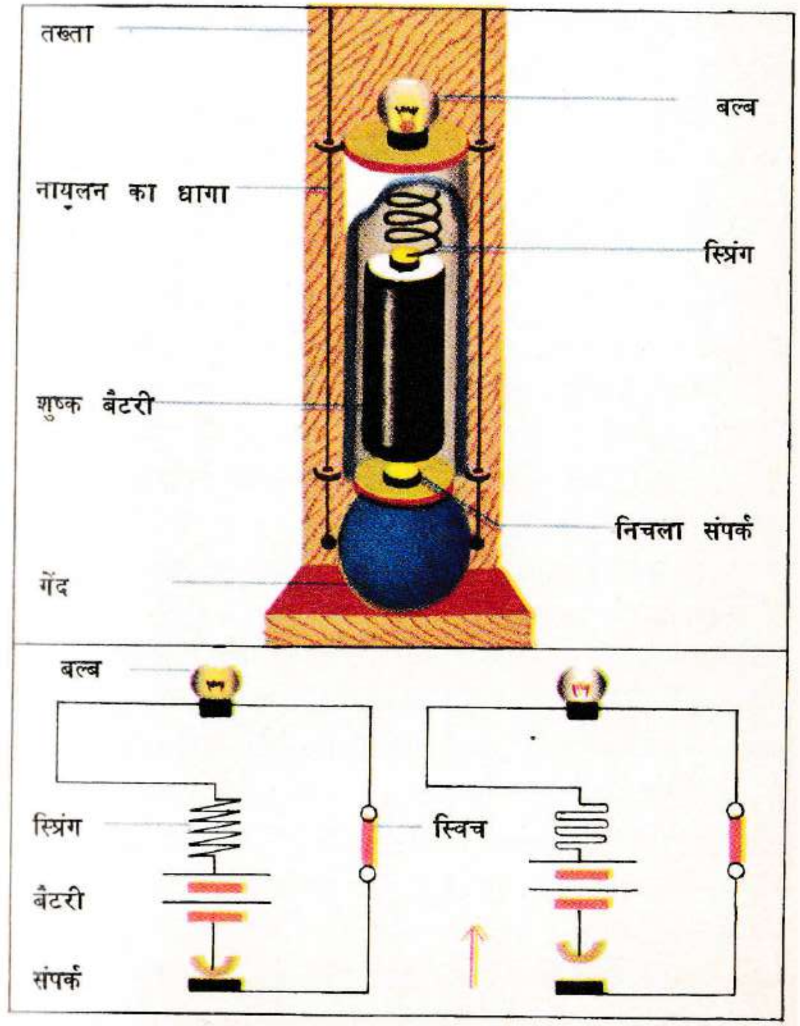
इसके लिये आपको बढ़ई, मिस्त्री और एलेक्ट्रिक फिटर का काम आना चाहिये। साथ ही गत्ते को काटना और चिपकाना भी आना चाहिये।

इसका कोर्पस मोटे कागज से बनाना होगा, इसे कई परतों

में मोड़कर नली का आकार दे दीजिये, जिसमें टार्च की दो बेलनाकार बैटरियां आराम से आर-पार निकल सकें। नली पर्याप्त कठोर होनी चाहिये। चिपकाने के लिये लकड़ी के मोटे रूल का उपयोग कीजिये, जो बैटरियों से एक सेंटीमीटर अधिक मोटा हो (इस रूल पर ही कागज कसकर लपेटते और चिपकाते जाइये, नली तैयार हो जायेगी)। नली की लंबाई दोनों बैटरियों की लंबाई के अतिरिक्त पाँच सेंटीमीटर और लंबी होनी चाहिये।

कागज और गत्ते से दो ढक्कन बना लें, जिनसे नली बंद की और खोली जा सके। ऊपरी ढक्कन पर लकड़ी के पतले तख्ते का वृत्त चिपका दीजिये (इसका व्यास नली के बाहरी व्यास के बराबर होना चाहिये) और उसपर टार्च का बल्ब लगाने के लिये स्पर्शक फिट कर दीजिये। वृत्त के नीचे का स्पर्शक पीतल का गोल पत्तर हो सकता है; इसके साथ लोहे या तांबे का स्प्रिंग जोड़ लें। स्प्रिंग छड़ पर तार लपेटकर बनाया जा सकता है। स्प्रिंग ऐसा होना चाहिये कि दो बैटरियों के भार से वह डेढ़ गुना लंबा हो सके। बैटरियों को शृंखल क्रम में एक के ऊपर एक रखकर बल्ब की सहायता से जाँच लें कि सारे संपर्क ठीक-ठाक हैं। इसी स्थिति में उनपर एक कागज लपेटकर चिपका दें। स्प्रिंग का निचला सिरा बैटरी के ऊपरी स्पर्शक के साथ सोल्ड कर दें।

निचले ढक्कन के भीतर भी लकड़ी के पतले तख्ते का वृत्त चिपका लें और उसपर पीतल का स्पर्शक बैठा दें। इसके साथ



निचली बैटरी की पेंदी का संपर्क होगा। इस स्पर्शक से एक तार लगाकर उसे ऊपरी ढक्कन पर बल्ब के पार्श्व स्पर्शक के साथ जोड़ दीजिये। उपकरण के कोर्पस पर दोनों तरफ तार के दो-दो हुक लगा दें।

अब उपकरण के पुर्जों को जोड़िये। बैटरियों को ऊपरी ढक्कन से स्प्रिंग के सहारे लटका लें। निचली बैटरी की पेंदी निचले स्पर्शक पर होनी चाहिये। बल्ब लगा दीजिये, वह जलने लगेगा। उपकरण को पकड़े हुए तेजी के साथ नीचे गिरायें (उसे छोड़ें नहीं)। यदि गिरने के क्षण बल्ब बुझ जाये, तो इसका मतलब है कि सब ठीक-ठाक बना है। यदि बल्ब बुझता नहीं है, तो दूसरा स्प्रिंग लगाना होगा, इसे अधिक या कम मोटे तार से बनाना होगा।

उपकरण की जाँच कर लेने के बाद उसे पहले काटकर बनाये हुए और चिकना किये हुए तख्ते पर फिट करना होगा। तख्ते की लंबाई दो मीटर और चौड़ाई पंद्रह सेंटीमीटर होनी चाहिये। तख्ते के ऊपरी सिरे पर एक हुक लगा देते हैं जिससे उसे दीवार पर उदग्र टांगा जा सके। नीचे एक छोटी तख्ती जड़कर पट्टी जैसा बना लीजिये और इसपर रबड़ की गेंद चिपका दीजिये। तख्ते की लंबाई के अनुतीर ऊपर से नीचे तक रेशम या नायलन के दो धागे लगा दें। धागों की आपसी दूरी उपकरण के व्यास के बराबर होनी चाहिये और उन्हें उपकरण के पार्श्व में लगे हुकों से गुजरना चाहिये और कसकर तना होना चाहिये। उपकरण का तख्ते से कोई स्पर्श नहीं होना चाहिये।

अब प्रयोग शुरू करें। जलते बल्ब के साथ उपकरण को ऊपर ले जायें। बल्ब का जलना इस बात का संकेत है कि बोझ (बैटरियों) का भार है। उपकरण को छोड़कर उसे गिरने दें। गिरने के क्षण भारहीनता की अवस्था आ जाती है। बोझ (बैटरियां) स्प्रिंग को खींचना बंद कर देता है। निचला संपर्क टूट जाता है, बल्ब बुझ जाता है। जब उपकरण चोटरक्षक गेंद पर गिरता है, तो भारहीनता की अवस्था खत्म हो जाती है और बल्ब पुनः जल उठता है।

बल्ब हर समय बेकार न जलता रहे, इसके लिये कोर्पस पर एक स्विच लगा दीजिये। फिर बल्ब सिर्फ प्रयोग के वक्त जलाया जा सकेगा।

हमारे प्रयोग में भारहीनता का संकेत बल्ब का बुझना है। आप ऐसा भी कर सकते हैं कि भारहीनता का संकेत बल्ब का जलना हो।

जीवन में भारहीनता. पृथ्वी पर पूर्ण तो नहीं, पर आंशिक भार-हीनता अक्सर अवलोकित होती है। पार्थिव परिस्थितियों में यह अवस्था अधिक समय तक नहीं बनी रह सकती।

लिफ्ट में आप जरूर चढ़े होंगे। उसमें नीचे उतरने के आरंभिक क्षण आंशिक भार-हानि विशेष रूप से प्रेक्षित होती है।

और झूले में? जब झूला नीचे जाने लगता है, उस समय भी भार की आंशिक हानि होती है।

तैराक जब ऊँचाई से पानी में छलांग लगाता है, गिरते वक्त वह अपना भार पूर्णतः खो बैठता है, वह पूर्ण भारहीनता की अवस्था में होता है। सरकस में आपने कलाबाजों का कौशल देखा होगा, जो गुंबज के नीचे से तनी हुई जाली पर छलांग लगाया करते हैं। हर ऐसी छलांग कुछ क्षणों के लिये भार-हीनता की अवस्था है।

सबसे लंबे समय तक आवर्ती रूप से भार-लोप की अवस्था तूफान के वक्त समुद्री जहाज में देखने को मिलती है। लहरों पर उठने के बाद जब जहाज गर्त्त में जाने लगता है, भार कम हो जाता है। कई लोग इस अवस्था को सहन नहीं कर पाते, उन्हें समुद्री बीमारी हो जाती है।

निष्कर्ष है: भारहीनता स्वतंत्र रूप से गिरते वक्त (स्वतंत्र अभिपातन के समय) उत्पन्न होती है। पृथ्वी के गिर्द उड़ता हुआ अंतरिक्ष-यान भी स्वंतत्र अभिपातन की अवस्था में होता है। उसपर पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण-बल काम करता है और वह हर समय गिरता ही रहता है। लेकिन उसे इतना बड़ा वेग संप्रेषित किया गया है कि वह पृथ्वी का चक्कर काटता हुआ पृथ्वी के साथ-साथ बढ़ता जाता है, जिससे उसका पथ सर्पि-लाकार हो जाता है।

और कक्षक पर गतिशील अंतरिक्ष-यान में जो कुछ होता है, उसे भी पृथ्वी अपनी ओर खींचती रहती है, लेकिन वह भी भारहीनता की अवस्था में होता है, अपने अवलंब को दबाता नहीं है। इसीलिये अंतरिक्ष-यात्री को कोई फर्क नहीं पड़ता कि

वह गद्दे पर बैठा है या कक्ष में उड़ रहा है। कोई अवलंब तो है नहीं। टेलीवीजन पर उड़ते हुए अंतरिक्ष-यान का कक्ष अक्सर दिखाया जाता है, जिसमें कलम, डायरी आदि वस्तुएं हवा में उड़ती रहती हैं।

भारहीनता की अवस्था का आदी होने के लिये बहुत अभ्यास की आवश्यकता होती है। प्रश्न सिर्फ आदी होने का नहीं है, इसी अवस्था में लगातार कई दिनों व महीनों तक काम भी करना पड़ता है।

ताप जीवन का आधार है. पृथ्वी पर जीवन सूर्य की किरणी ऊर्जा और वातावरण के कारण ही है। पृथ्वी पर बिल्कुल भिन्न प्रकार के जीव और पादप हैं। उन्होंने +50–58 से –60–70 डिग्री सेंटीग्रेड तक की सीमा में विभिन्न तापक्रमों के साथ अपने को अनुकूलित कर रखा है। कुछ ठंडे इलाकों में तापक्रम और भी कम होता है।

ताप के साथ प्रयोग

जीव-जंतु अपने को कड़ाके की ठंड के भी अनुकूल बना सकते हैं, इसका एक उदाहरण पेंग्विन है। एन्टार्कटिक की अत्यधिक ठंड में ही उनके बच्चे अंडों से बाहर निकलते हैं।

लेकिन अंतरिक्षी व्योम की ठंड या शुक्र ग्रह की गर्मी कोई भी जीव सहन नहीं कर सकता। शुक्र की सतह पर तापक्रम कुछेक सौ सेंटीग्रेड तक पहुँच जाता है।

जब अंतरिक्ष-यात्री बियाबान अंतरिक्ष के लिये रवाना होते हैं – जहां न कोई माध्यम है जो सूर्य से गर्म हो सके या न कोई ऐसी चीज ही है, जो सौर किरणों को अवशोषित या परावर्तित कर सके – तो वे पहले से सारा उपाय करके रखते हैं, जिससे यान के भीतर पर्याप्त गर्मी बनी रहे।

यान या कक्षीय स्टेशनों के भीतर हवा का दाब और उसका अवयवानुपात वही रखा जाता है, जो पृथ्वी पर होता है। तापक्रम भी वैसा ही रखा जाता है, जिसके पृथ्वी पर लोग आदी होते हैं। यह सारा काम स्वचल मशीनों के जिम्मे होता

है, वे ही यान या स्टेशन के भीतर छोटे-से वातावरण का अवयवानुपात, तापक्रम और उसकी आर्द्रता नियंत्रित करते रहते हैं।

सिर्फ भारहीनता की अवस्था के कारण ही यात्री महसूस करते हैं कि वे पृथ्वी पर नहीं, बल्कि एक छोटे-से कृत्रिम ग्रह पर हैं, जिसे मनुष्य की मेधा ने रचा है, जो विशाल वेग से निर्जीव अंतरिक्षी व्योम में उड़ता जा रहा है...

अंतरिक्षी रिक्तता में गर्म किरणें. इस प्रकार, पृथ्वी पर सभी प्राणी अपने अस्तित्त्व के लिये सूर्य के ऋणी हैं। जीवन का यह शक्तिशाली स्रोत आखिर है क्या?

सूर्य उत्तप्त गैसों का विराट गोला है। अनुमान है कि इसके गर्भ में विराट दाब और तापक्रम के अधीन निरंतर तापनाभिकीय प्रतिक्रिया चलती रहती है, यह हाइड्रोजन के हीलियम में रूपांतरण की प्रतिक्रिया है। इस तीव्र प्रतिक्रिया के साथ-साथ तापीय ऊर्जा की विराट मात्राएं उत्सर्जित होती रहती हैं। सूर्य की तापीय ऊर्जा सब ओर किरणी ऊर्जा के रूप में उत्सर्जित होती रहती है। पृथ्वी को इसका एक अत्यल्प भाग ही मिलता है। पर यह अत्यल्प भाग ही पृथ्वी पर जीवन के प्रादुर्भाव के लिये पर्याप्त है। इसी से घनघोर जंगल उपजे थे, जीव का जन्म हुआ था।

पृथ्वी पर ऊर्जा के जितने भी प्रकार हैं, सभी का उद्भव सूर्य ही है। अब प्रत्यक्ष ऊर्जा-स्रोत के रूप में भी सूर्य का उपयोग होने लगा है। पृथ्वी पर ऐसे संयंत्र बनाये जा चुके हैं, जो सौर

किरणों को कैद करते हैं और उन्हें पानी गर्म करने को विवश करते हैं, या उन्हें सीधा वैद्युत-ऊर्जा में परिणत कर देते हैं। आप जानते हैं कि पृथ्वी के कृत्रिम उपग्रहों पर, अंतरिक्ष-यानों और कक्षीय स्टेशनों पर, या चांद तथा दूरस्थ ग्रहों का अध्ययन करने के लिये उनकी ओर यात्रा करने वाले स्वचल उपकरणों पर ऊर्जा का मुख्य स्रोत सूर्य ही होता है। अंतरिक्षी उपकरणों के लिये सौर ऊर्जा सौर बैटरियों द्वारा बंदी बनायी जाती है और वैद्युत धारा में परिणत की जाती है।

सौर ऊर्जा हम तक करोड़ों किलोमीटर लंबा निर्वात व्योम पार करके आती है। ताप-प्रेषण की यह विधि, जिसमें ताप किसी मध्यस्थ माध्यम को गर्म किये बिना ही प्रेषित हो जाती है, विकिरण कहलाती है।

निम्न प्रयोग करें। उंगलियों से बिजली का बुझा हुआ बल्ब पकड़ें। आप काँच की ठंडक महसूस करेंगे। 2–3 सेकेंड के लिये बल्ब जलायें। जब तक वह जल रहा था, आपकी उंगलियां गर्मी महसूस कर रही थीं। बल्ब के बुझते ही आप पुनः काँच की ठंडक महसूस करने लगेंगे।

न काँच, न बल्ब में हवा की जगह भरी गयी गैस, दोनों में से कोई भी इतने कम समय में गर्म नहीं हो पाता। उंगलियों को गर्मी पतले उत्तप्त तार से निकलने वाली तापीय किरणें दे रही थीं।

पहले बल्ब भीतर से रिक्त हुआ करते थे, उनमें से हवा निकाल दी जाती थी। इस तरह के बल्ब सूर्य के नन्हें प्रतिमान थे,

जिससे ब्रह्मांड की निर्वात दूरियों के पार सभी ग्रहों तक ताप प्रसारित होता रहता है।

पर गैस से भरे बल्ब में भी आप देख सकते हैं कि उंगलियों को किरणों से गर्मी मिलती है, न कि काँच से जो स्वयं गर्म नहीं हो पाया था।

गर्म से ठंडे की ओर. अभी आपने विकिरण का परिचय प्राप्त किया था, जो बिना किसी मध्यस्थ माध्यम को गर्म किये ही किरणी ऊर्जा के रूप में ताप के प्रेषण की विधि है। पर ताप-प्रसरण की अन्य विधियां भी हैं। इनमें से एक को ताप-चालन कहते हैं।

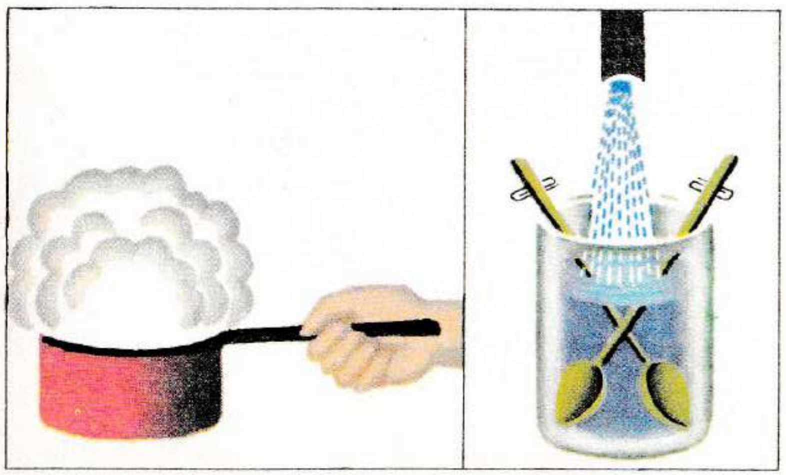
आपने आग पर चढ़ी डेगची का हत्था छूकर देखा है? हत्था यदि धातु का होगा, तो बहुत ही गर्म होगा। हत्थे को गर्म नहीं किया जा रहा था, डेगची को गर्म किया जा रहा था, लेकिन ताप डेगची से हत्थे तक पहुँच गया। ताप धातु पर एक जगह से दूसरी जगह तक एकबारगी से नहीं पहुँचता। पुराने जमाने में लोग ताप की इस गति की तुलना प्रवाहमान जल की गति से करते थे।

विभिन्न ठोस द्रव्य ताप का चालन विभिन्न प्रकार से करते हैं। सबसे अच्छा चालन धातु में होता है। पर धातुओं के बीच कुछ ऐसी हैं, जिनमें विशेष अधिक तापचालकता होती है। ये तथाकथित 'राजसी' धातु हैं – प्लैटिनम, सोना, चांदी। इन्हें महत्त्वपूर्ण वैद्युत परिपथों, उपकरणों आदि में काम लाते हैं।

भिन्न धातुएं ताप का चालन भिन्न प्रकार से करती हैं, यह देखने के लिये निम्न प्रयोग करें।

चाय के दो चम्मच लें – एक चांदी का और दूसरा निकेल के संमिश्र का। मोम की बूंद से उनपर क्लिप चिपका लीजिये। चम्मचों को गिलास में रखें, इस तरह कि क्लिपों के साथ हत्थे ऊपर और एक दूसरे से दूर रहें। अब गिलास में गर्म पानी ढालिये। चम्मच गर्म होने लगेंगे। चांदी के चम्मच पर मोम पिघल जायेगा और क्लिप गिर जायेगा। दूसरे चम्मच से वह बिल्कुल नहीं गिरेगा, यदि गिरेगा भी तो काफी देर बाद, जब चम्मच बहुत गर्म हो जायेगा।

दोनों चम्मच रूप और आकार में निश्चय ही समान होने चाहियें। यदि चांदी का चम्मच नहीं है, तो दूसरे चम्मच ले



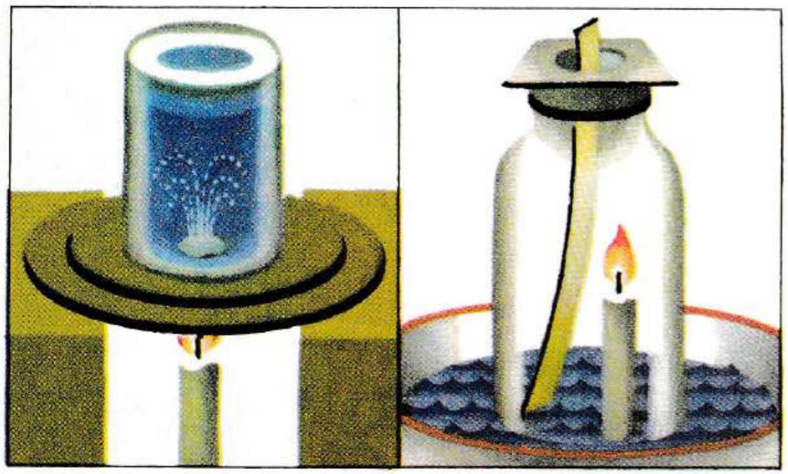
लीजिये, सिर्फ उन्हें भिन्न धातुओं का होना चाहिये। जिस चम्मच पर मोम पहले पिघलना शुरू करेगा, वह ताप का अच्छा चालक होगा।

ताप का सबसे बुरा चालन करने वाले ठोस द्रव्यों में निम्न नाम आते हैं: मृत्तिका, प्लास्टिक, लकड़ी, कपड़ा आदि। इसी-लिये आग पर चढ़ाने वाले बर्तनों के हत्थे प्लास्टिक या लकड़ी से बनाते हैं। यदि हत्था धातु का होता है, तो हाथ को जलने से बचाने के लिये इसपर कोई कपड़ा लपेटना पड़ता है। वह भी ताप का बुरा चालक (कुचालक) है और हाथ को जलने से बचाता है, ताप-पृथक्कारी होता है।

भार – ताप का नियंत्रक. प्रकृति में ताप-प्रसारण की एक और विधि है – संवहन। वह द्रवों तथा गैसों में प्रेक्षित होती है। इस विधि का आधार यह है कि द्रव या गैस के कुछ भाग गर्म होकर कम घने (विरल) हो जाते हैं और ऊपर उठने लगते हैं; इसके साथ ही ऊपर से अधिक घने हिस्से नीचे उतरने लगते हैं। ताप का स्रोत अक्सर नीचे रहता है, इसलिये बर्तन में गर्म परत का ऊपर उठना और ठंडी परतों का नीचे उतरना निरंतर चलता रहता है। लेकिन भारहीनता की अवस्था में, जैसे कक्षीय स्टेशन के कक्ष में, ताप-प्रसारण की यह विधि काम नहीं करती। वहां ताप का नियंत्रक – भार – अनुपस्थित होता है। द्रव में संवहन कैसे होता है, यह देखने के लिये निम्न प्रयोग करें।

धातु का पतला पत्तर ले लीजिये ; किसी टिन के ढक्कन से काम चल जायेगा। इसपर पोटाशियम परमैंगनेट के कुछेक क्रिस्टल रखकर उनपर पानी की एक बूंद डाल दें। इसे मोम की पतली परत से ढक दें। मोम की किनारी पत्तर से अच्छी तरह चिपकी होनी चाहिये। गिलास में पानी ढालिये और उसे पत्तर से इस प्रकार ढकिये कि मोम वाली सतह गिलास के भीतर हो। पत्तर को पकड़े हुए गिलास को उलट दीजिये और उसे दो अवलंबों पर रख दीजिये, इस तरह से कि दोनों के बीच खाली स्थान में जलती मोमबत्ती रखी जा सके।

मोमबत्ती की लौ मोम के ठीक नीचे लाकर गर्म कीजिये। मोम पत्तर से अलग हो जायेगा और गर्म पानी की बैंगनी धारा ऊपर को चल पड़ेगी।



आप जल-धाराओं का संचार देखेंगे : गर्म धाराएं ऊपर उठेंगी और ठंडी धाराएं नीचे की ओर गतिशील होंगी।

हवा की तापीय धाराओं की संचार-गति देखने के लिये निम्न प्रयोग करें।

जलती मोमबत्ती पर लालटेन का शीशा रख दें। वह जल्द ही बुझ जायेगी, क्योंकि ताजी हवा उस तक नहीं पहुँच पाती। गर्म हवा दहन उत्पादों के साथ ऊपर जाने लगती है, फिर ताजी हवा आये किधर से ! लेकिन यदि गत्ते की पट्टी शीशे में घुसाकर भीतरी व्योम को दो भागों में बाँट दिया जाये, तो जिस भाग में मोमबत्ती होगी उसमें हवा दहन-उत्पादों के साथ ऊपर उठेगी, और ठंडी ताजी हवा दूसरे भाग में उतरकर गत्ते के नीचे से मोमबत्ती के पास पहुँचने लगेगी।

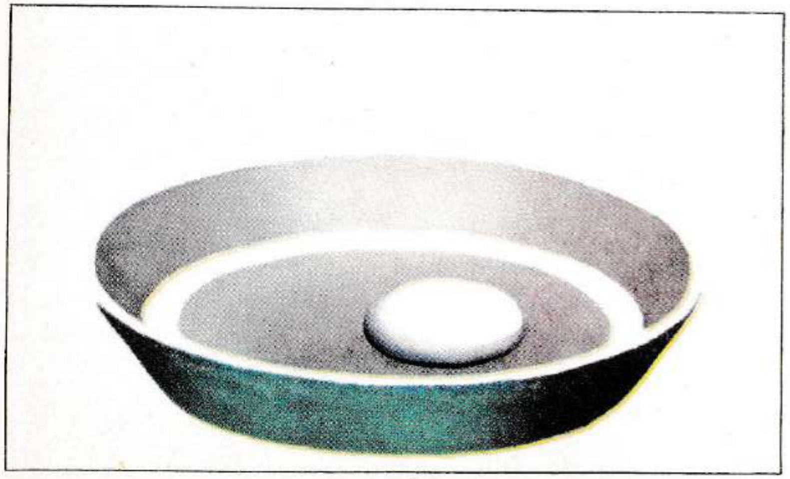
यह देखने के लिये कि गत्ते की दीवार मोमबत्ती तक हवा पहुँचाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है और यह कि उसके बिना हवा का संचार रुक जायेगा, गत्ते को निकाल लीजिये। मोमबत्ती तुरंत बुझ जायेगी।

ताप को रोकना. बर्फीली ठंड में सड़क पर निकलने के पहले आप ताप-पृथक्कारी का उपयोग करते हैं। यदि सरल भाषा में कहा जाये, तो आप कोट या फरकोट पहनते हैं। रूई के रेशों या फर के रोंओं के बीच स्थित हवा ठंडे से गर्म की ओर संचारित नहीं हो पाती और इसके बिना हवा क्या, कोई भी गैस ताप का कुचालक होती है। इसीलिये कड़ी बर्फीली ठंड में बहुत देर

तक रहने के बाद ही फरकोट गर्म करना बंद कर देता है।

लेकिन यहां यह बताना आवश्यक है कि फरकोट कभी भी शरीर को गर्म नहीं करता, वह सिर्फ उस गर्मी को सुरक्षित रखता है, जो हमारे शरीर में है।

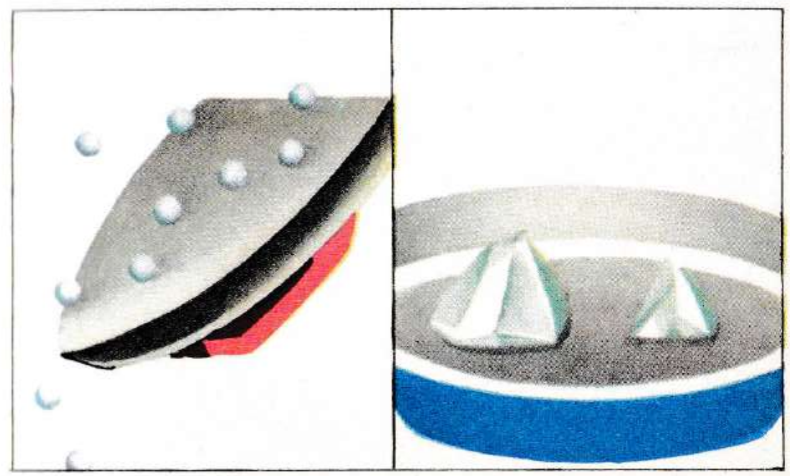
इस प्रकार, ठंड से बचाव के लिये ताप-पृथक्कारी का उपयोग करना पड़ता है। लेकिन अतिरिक्त ताप से बचने के लिये भी ताप-पृथक्करण का उपाय करना पड़ता है। जब अंतरिक्ष-यान (जिसमें अंतरिक्ष-यात्री को बैठाकर पृथ्वी से विदा किया जाता है) विशाल वेग से पृथ्वी के वातावरण में उड़ता है, तो उसकी वाह्य दीवारें हवा के साथ रगड़ खाने लगती हैं और खूब गर्म हो जाती हैं। लोगों की रक्षा करने के लिये, या यदि यह चांद या किसी अन्य ग्रह तक जाने वाला कोई



स्वचल प्रयुक्ति है, तो भीतर के उपकरणों की रक्षा करने के लिये ताप-पृथक्कारी, ताप-सह आवरण का उपयोग किया जाता है। वह ताप के कुचालकों से बना होता है, जो साथ ही बहुत ऊँचा तापक्रम सहन करने की क्षमता रखता है।

ऊपर बताया जा चुका है कि गैसें ताप की कुचालक होती हैं। यह देखने के लिये निम्न प्रयोग करें।

अलुमीनियम की तश्तरी आग पर चढ़ा दीजिये। जब वह खूब गर्म हो जाये, उसमें आधा चम्मच पानी डालिये; आप उम्मीद करते होंगे कि वह क्षण भर में वाष्पित हो जायेगा, पर ऐसा नहीं होगा। पानी गोलाकार होकर लुढ़कने लगेगा और तश्तरी में सबसे गहरे स्थान पर जाकर उत्तप्त धातु पर रुक जायेगा। बात विचित्र-सी लगती है कि पानी तुरंत वाष्प नहीं



बन जाता। पानी वाष्पित तो होता रहता है, पर यही वाष्प उत्तप्त धातु से इस बड़ी वर्तुलज बूंद की रक्षा भी करता रहता है। दी हुई परिस्थितियों में वाष्प एक अच्छे ताप-पृथक्कारी का काम करने लगता है।

इस प्रयोग का एक सरल रूप भी है। गर्म इस्त्री को उलटकर उसपर पानी के छींटे डालिये। छींटे तुरंत नन्हीं गोलियों में परिणत हो जायेंगे और इस्त्री की सतह पर लुघड़ने लगेंगे। वे भी तुरंत वाष्प में परिणत नहीं होतीं, इस्त्री की गर्मी से उनकी रक्षा वाष्प की परत करती है। वाष्प की परत या 'वाष्प की गद्दी' पर ही ये गोलियां गर्म इस्त्री पर अपनी यात्रा करती हैं।

अभी ऐसे वाहन बन चुके हैं, जो हवाई गद्दी पर चलते हैं, पानी या जमीन की सतह को छूते नहीं हैं। शक्तिशाली पंखे नीचे की ओर हवा फूँकते रहते हैं और हवाई गद्दी बना देते हैं, जो यात्रियों समेत वाहन का भार जमीन से ऊपर उठाये रखती है। हमारे प्रयोग में चलने की यही विधि प्राप्त होती है। फर्क यही है कि बूंदें हवाई गद्दी पर नहीं, धातु की उत्तप्त सतह द्वारा बनायी गयी 'वाष्प की गद्दी' पर चलती हैं।

एक और प्रयोग करें।

शुष्क बर्फ (जमे हुए कार्बन डायक्साइड) के चंद नन्हें टुकड़े अलुमीनियम की तश्तरी में रख कर उसे कभी इधर से, तो कभी उधर से भुकाइये। शुष्क बर्फ के टुकड़े तश्तरी की चिकनी सतह पर आसानी से फिसलने लगेंगे। तश्तरी की 'गर्म'

सतह (उसका तापक्रम शुष्क बर्फ के तापक्रम की तुलना में कम से कम 100° सेंटीग्रेड ऊँचा होता है) तेजी के साथ कार्बन डायक्साइड विलगित करने लगती है, शुष्क बर्फ के टुकड़े के नीचे 'कार्बन डायक्साइड की गद्दी' बन जाती है, जिसपर वह फिसलना शुरू कर देता है।

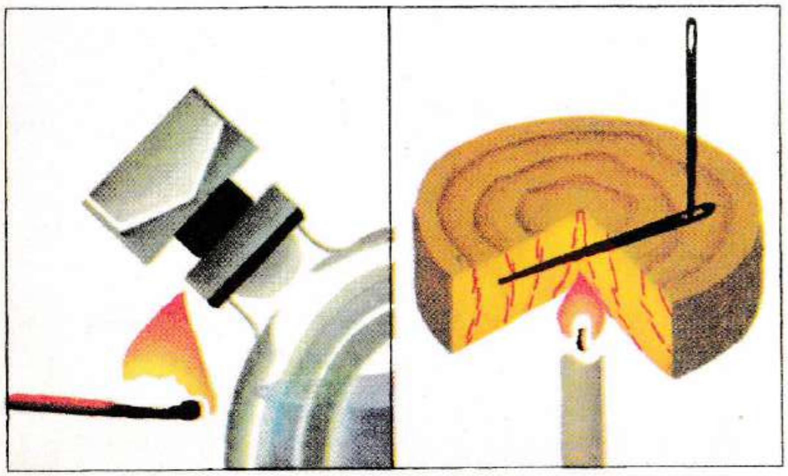
गर्म करने पर प्रसार. सभी जानते हैं कि गर्म करने पर पिंड प्रसारित होता है। थर्मामीटर का पारा या रंगीन स्पीरिट उसकी छोटी-सी घुंडी में जमा रहता है। गर्म करने पर पारा या स्पीरिट प्रसारित होता है और स्तंभ के रूप में अतिसूक्ष्म नली में चलना शुरू कर देता है। जब तापीय संतुलन स्थापित हो जाता है, स्तंभ रुक जाता है और हम पैमाने पर देखते हैं कि थर्मामीटर को आवृत्त रखने वाले माध्यम का तापक्रम कितना है।

एक और उदाहरण है, जिसमें पिंड को गर्म करने पर आप उसका प्रसारण देख सकते हैं। कभी-कभी काँच के फ्लास्क में से उसका काग निकालना मुश्किल हो जाता है। ज्यादा जोर लगाना खतरनाक होता है – फ्लास्क की गरदन टूट जा सकती है और हाथ कट जा सकता है। इसीलिये एक आजमायी हुई विधि का उपयोग करते हैं: माचिस की जलती हुई तीली फ्लास्क की गरदन के समीप लाते हैं और उसे घुमा-घुमाकर सब ओर से समरूपता के साथ गर्म करते हैं। एक तीली काफी होती है, जिससे गरदन का काँच फैल जाता है। काग गर्म नहीं हो पाता, अतः आसानी से निकल जाता है। यह भौतिकीय नियम के

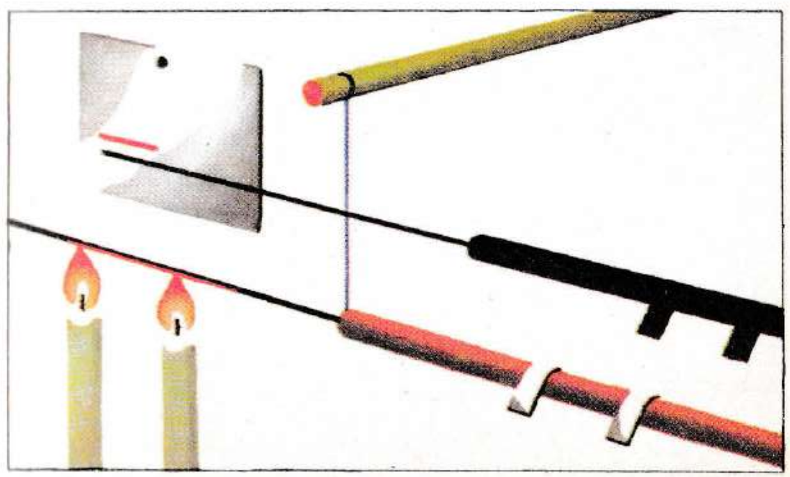
घरेलू उपयोग का उदाहरण है। ऐसे भी प्रयोग किये जा सकते हैं, जो यह दिखाते हैं कि गर्म या ठंडा करने पर धातु की लंबाई कैसे बदलती है।

लकड़ी के गोल या चौकोर तख्ते में से एक टुकड़ा काटकर निकाल लीजिये। कटी हुई किनारियों में से एक में एक क्षैतिज सूई चुभा दीजिये; सूई का छेद लकड़ी की दूसरी किनारी पर होना चाहिये। छेद से होकर लकड़ी में एक उदग्र सूई चुभा दीजिये। क्षैतिज सूई को गर्म करने पर वह लंबी होने लगेगी और उदग्र सूई को झुकाने लगेगी।

एक तापीय तुला बनाइये। इसके लिये तांबे का 1–2 मिलिमीटर मोटा और करीब 40 सेंटीमीटर लंबा एक सीधा तार लीजिये। लकड़ी की करीब इतनी ही लंबी छड़ी के सिरे में



छेद करके उसमें तार घुसाकर उसे लंबा बना लीजिये, आपको एक और भी लंबी छड़ी मिल जायेगी: आधी – लकड़ी की और आधी – तार की। धागे के सहारे इसे बीच से बांधकर लटका लें – यह तुला की डंडी होगी। इसे संतुलित करें ताकि यह क्षैतिज स्थिति में रहे (इसके लिये लकड़ी वाले भाग पर शायद थोड़ा कागज लपेटना पड़े या उसे काटकर थोड़ा छोटा करना पड़े)। लटकन-बिंदु दायें या बायें खिसकाकर भी संतुलन स्थापित किया जा सकता है। डंडी पर पर्याप्त प्रकाश डालिये, ताकि दीवार पर डंडी की सुस्पष्ट छाया पड़ने लगे। वहां एक कागज चिपका लीजिये, छाया कागज पर पड़ने लगेगी। छाया के स्थान पर पेंसिल से निशान लगा लीजिये। अब दो जलती मोमबत्तियां तार के नीचे रखकर उसे गर्म करें। गर्म



होने पर वह लंबा होने लगेगा और संतुलन बिगड़ जायेगा, क्योंकि डंडी की भुजाओं का अनुपात बिगड़ जाता है। तार का सिरा कुछ मिलिमीटर नीचे उतर आयेगा। छाया पर यह और भी स्पष्ट नजर आयेगा। मोमबत्तियों को हटा लेने पर तार थोड़ी देर में ठंडा हो जायेगा और हमारी तापीय तुला पुनः संतुलित हो जायेगी।

ताप का परावर्तन और अवशोषण. तापीय और प्रकाशीय किरणों को सबसे अच्छी तरह दर्पणी सतह परावर्तित करती हैं, फिर श्वेत या हलके रंग की वस्तुएं। इसीलिये गर्मियों में लोग सफेद या हलके रंग के कपड़े पहनना पसंद करते हैं। गाढे रंग के पतले कपड़े तापीय किरणों को बहुत बड़ी मात्रा में अवशोषित करते हैं इसीलिये उनमें अधिक गर्मी लगती है।

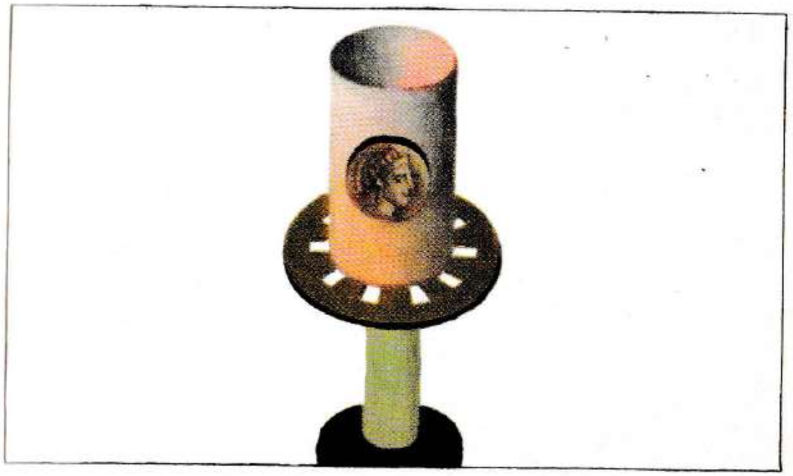
आपने ध्यान दिया होगा कि बसंत में धूल और कालिख से ढकी बर्फ जल्द पिघलती है, बनिस्बत कि खेतों में पड़ी हुई सफेद बर्फ।

निम्न प्रयोग करें। मोटे कागज को बेलन की तरह मोड़कर चिपका लें (इसका व्यास 5–6 सेंटीमीटर होना चाहिये)। भीतर माचिस की डिब्बी जितना क्षेत्र काले रंग से रंग लें। यह अनियमित आकार का एक धब्बा होगा। बाहरी दीवार पर समान प्रकार के दो छोटे सिक्के एक ही ऊँचाई पर मोम से चिपका लें–एक उस स्थान पर जहां भीतर काला धब्बा है, और दूसरा ठीक उसके सामने की दीवार पर (बाहर से ही)। बेलन जलती

मोमबत्ती पर पहना दीजिये। लौ बेलन के बीचों-बीच ठीक सिक्कों के सामने होनी चाहिये।

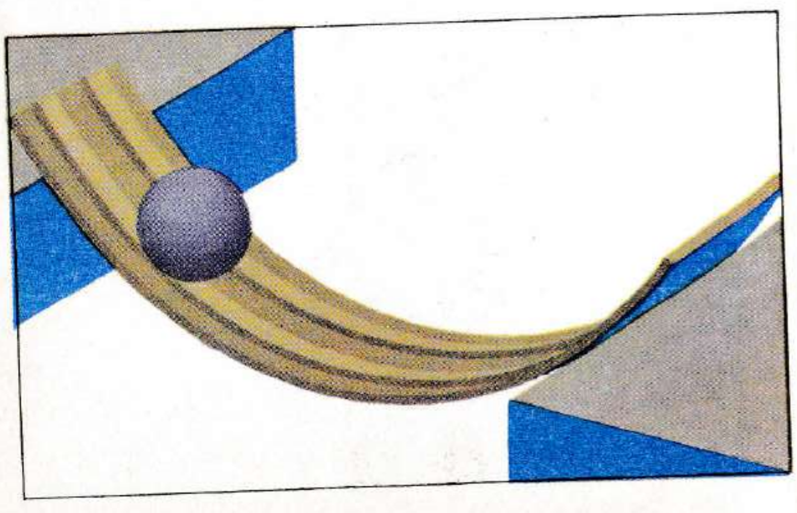
बेलन से मोमबत्ती ढकने के लिये मोटे गत्ते के एक वृत्त में मोमबत्ती की मुटाई जितना बड़ा छेद बनाकर उसे मोमबत्ती पर पहना दें। यदि छेद ठीक आकार का होगा, तो वृत्त को आवश्यक ऊँचाई पर इस तरह जड़ा जा सकेगा कि वह बेलन के भार से गिरे नहीं।

आप कितना भी बार प्रयोग दुहरायेंगे, हर बार यही देखेंगे कि पहले वह सिक्का गिरता है, जो काले धब्बे वाले स्थान के दूसरी ओर चिपकाया गया है। कागज की काली सतह तापीय किरणों को तेजी से अवशोषित करने लगती है, इसीलिये वह जल्द गर्म हो उठती है।



ऊर्जा-रूपांतरण के चंद प्रयोग. आप जानते हैं कि ऊर्जा उस कार्य द्वारा व्यक्त होता है, जो किसी आदमी या मशीन द्वारा संपन्न होता है।

जिस स्प्रिंग को चाबी देकर ऐंठा नहीं गया है, उसके बारे में हम कह सकते हैं कि उसमें कोई ऊर्जा नहीं है, इसीलिये घड़ी, जिसमें ऐसा स्प्रिंग होता है, चलना बंद कर देती है। लेकिन चाबी देते ही घड़ी के भीतर चक्कियां घूमने लगती हैं और सूई डायल पर अपनी यात्रा शुरू कर देती है। स्प्रिंग तबतक काम करती है, जबतक उसमें भरी गयी ऊर्जा का भंडार खत्म नहीं हो जाता। भंडार खत्म होने पर फिर चाबी देनी पड़ती है, ताकि ढीला स्प्रिंग फिर से तन जाये और काम करने की स्थिति में आ जाये।



ऊर्जा शाश्वत है, वह कभी नष्ट नहीं होती। वह सिर्फ अपने एक प्रकार से दूसरे प्रकार में परिणत होती रहती है। जब घड़ी रुक जाती है, तो इसका यह मतलब नहीं है कि ऊर्जा का नामोनिशान मिट गया। वह गायब नहीं होती, वह घड़ी में चक्कों आदि पुर्जों की यांत्रिक ऊर्जा में परिणत होती है। यांत्रिक ऊर्जा तापीय ऊर्जा में परिणत होती है। यह तापीय ऊर्जा निश्चय ही बहुत कम होती है और वह भी हवा गर्म करने में खर्च हो जाती है। यदि हम उसे पकड़ नहीं पाये, तो इसका यह मतलब नहीं होता कि वह है ही नहीं।

यहां पर हम ऊर्जा के कुछ प्रकारों के रूपांतरण के साथ चंद प्रयोग करेंगे।

गत्ते की लंबी, सँकरी पट्टी पर मोटे कागज की दो समांतर पट्टियां इस तरह चिपका लें कि उनके बीच सँकरी नाली बन जाये। गत्ते को चाप की आकृति में मोड़कर उसे दो मोटी किताबों के बीच रख दीजिये। धातु की एक गोली नाली में उसके एक सिरे के पास रखिये। गोली अपना वेग बढ़ाती हुई लुघड़ेगी और दूसरी तरफ चढ़ान पर कुछ दूर तक पहुँचकर वापस लुढ़क पड़ेगी; इस तरह दोनों तरफ कुछेक बार ऊपर-नीचे दोलन कर अंततः वह रुक जायेगी।

प्रयोग शुरू करते वक्त गोली में स्थितिज ऊर्जा थी। जब हमने उसे छोड़ दिया, स्थितिज ऊर्जा चाप की तरह मुड़ी नाली में गति की ऊर्जा का रूप ग्रहण करने लगी। गति के दरम्यान गोली की ऊर्जा नाली की सतह और हवा से घर्षण के साथ

लड़ने में खर्च हुई, और घर्षण से ताप उत्पन्न हुआ।

इस्पात की पतली पटरी को यदि झुकाया जाये, तो उसमें यांत्रिक ऊर्जा की एक मात्रा जमा हो जाती है। उसे छोड़ते ही वह तेजी से सीधी होती है और इस प्रक्रिया में पेंसिल का दाग मिटाने वाला रबड़ कमरे के दूसरे कोने तक फेंक दे सकती है।

जब आप सायकिल के ट्यूब में पंप से हवा भरते हैं, पंप बहुत गर्म हो जाता है। पंप में हवा को संपीडित करने (दबाने) की यांत्रिक ऊर्जा इस बार पर्याप्त बड़ी मात्रा में तापीय ऊर्जा का रूप ग्रहण कर लेती है।

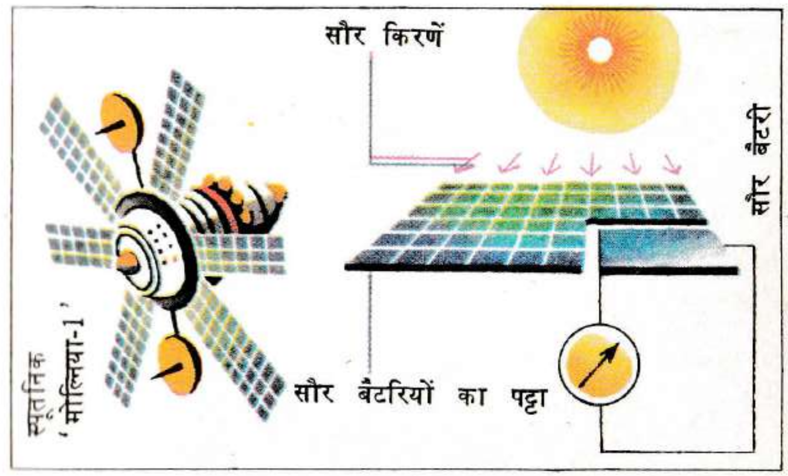
ऊर्जा का रूपांतरण आप हर दिन देख सकते हैं। इंधन की रसायनिक ऊर्जा तापीय ऊर्जा में परिणत होती है, तापीय ऊर्जा यांत्रिक ऊर्जा में बदल जाती है। यह मोटरकार में होता है, वाष्प-इंजन में होता है, हवाई जहाज में होता है। अंतरिक्ष-यान की उड़ान के प्रथम मिनटों में भी यही होता है, जब उसके चलित्र काम कर रहे होते हैं।

यांत्रिक ऊर्जा के प्रकाशीय ऊर्जा में रूपांतरण का एक बड़ा ही रोचक प्रयोग है:

मिसरी की डली और मिसरी फोड़ने वाली सँड़सी लीजिये। प्रयोग घनघोर अंधेरे में किया जाता है, जब आँखें उसकी आदी हो जाती हैं। सँड़सी दबाकर मिसरी फोड़िये और ध्यान से देखते रहिये कि क्या होता है। सँड़सी जिस क्षण टुकड़े को तोड़ती है, उसमें से नीला-सा प्रकाश कौंध उठता है। यह शीतल प्रकाश

की कौंध है। शीतल प्रदीप्ति क्रिस्टलों के टूटते वक्त उत्पन्न होती है और इसका नाम है – घर्षदीप्ति।

प्रकाश का विद्युत में रूपांतरण. विद्युत को प्रकाश में सरलता से परिणत करने के हम आदी हो चुके हैं। इसके लिये सिर्फ स्विच औन करना पड़ता है। लेकिन ऐसी भी संवृत्तियां हैं, जिनमें प्रकाश का विद्युत में रूपांतरण होता है। इस संवृत्ति को फोटोप्रभाव कहते हैं। इसका अन्वीक्षण और अध्ययन पिछली शती में रूसी भौतिकविद अलेक्सांद्र स्तोलेतोव ने किया था। उन्होंने स्थापित किया कि जस्ते के पत्तर पर वैद्युत आर्क का तेज प्रकाश डालने पर परिपथ में विद्युत-धारा



बहने लगती है (यदि पत्तर परिपथ में लगा हुआ है) । फोटो-प्रभाव का वर्त्तमान उपयोग भी इसी खोज पर आधारित है। इसका उद्योग और घरेलू जीवन, दोनों में ही विस्तृत उपयोग हो रहा है। इसके बिना 'बोलता सिनेमा' नहीं होता। फोटो-प्रभाव की अनुपस्थिति में टेलीवीजन का कोई अस्तित्व नहीं रहता।

लेकिन फोटोप्रभाव सिर्फ यही नहीं है कि विद्युत-परिपथ में स्थित कुछ धातुओं को प्रकाशित करने पर विद्युत-धारा पहले से कुछ तीव्र हो जाती है। फोटोप्रभाव अन्य रूप में भी प्रकट हो सकता है। कुछ अर्धचालकों को प्रकाशित करने पर विद्युत-धारा उनके भीतर उत्पन्न होती है, जो पहले वहां नहीं थी। प्रकाशीय ऊर्जा उनके भीतर वैद्युत ऊर्जा में परिणत हो जाती है।

इस संवृत्ति का एक उपयोग है – उद्भासनमापी में, जो फोटोग्राफी के काम में प्रकाश-संवेदी परतों पर दिये जाने वाले प्रकाश की आवश्यक मात्रा बताता है। प्रकाशित वस्तुओं की ओर उद्भासनमापी निर्दिष्ट करने पर आप देख सकते हैं कि उसकी सूई कैसे विचलित होती है।

अंतरिक्ष-यान, स्पूतनिक, चंद्रचर और कक्षीय स्टेशनों पर सौर बैटरियों से वैद्युत ऊर्जा प्राप्त होती है। आपने उन्हें अक्सर चित्रों में देखा होगा। सामान्यतया इनमें कई पैनल होते हैं, जिनपर अर्धचालकीय बैटरियां जड़ी रहती हैं। इन बैटरियों पर सौर प्रकाश आपतित होता है और वैद्युत धारा में परिणत हो जाता है।

जूल वेर्न का अंतरिक्षी प्रयोग. जूल वेर्न के विख्यात उपन्यास 'हेक्टर सेर्वादाक' के पात्र एक नन्हे ग्रह पर पहुँच जाते हैं। वे उसका नाम गालिया रखते हैं।

ग्रह पृथ्वी से निरंतर दूर होता अंतरिक्षी व्योम में उड़ता जा रहा था। उसपर कई लोग थे।

इन उपनिवेशकों के जीवन की एक घटना का सारांश यहां दे रहे हैं।

उपनिवेशक एक टापू पर थे ; चारों तरफ गालियाई समुद्र का पानी था, जो किसी भी तरह जम नहीं रहा था, यद्यपि तापक्रम शून्य से नीचे था। पानी जल्द से जल्द जमाना जरूरी था – टापू से बाहर आना-जाना सरल हो जाता। सभी उपनिवेशक तट पर एकत्रित हुए। कप्तान सेर्वादाक ने एक छोटी सी बच्ची के हाथ में बर्फ का टुकड़ा थमा दिया और सागर में फेंकने को कहा। बर्फ का टुकड़ा जैसे ही पानी में गिरा, सारा सागर कान बहरे कर देने वाली कड़क के साथ क्षण भर में जमकर बर्फ हो गया।

इस कहानी में काल्पनिक सिर्फ पैमाने की विशालता है – इतना बड़ा सागर जम गया। लेकिन संवृत्ति वास्तविक है, विज्ञान-सम्मत है।

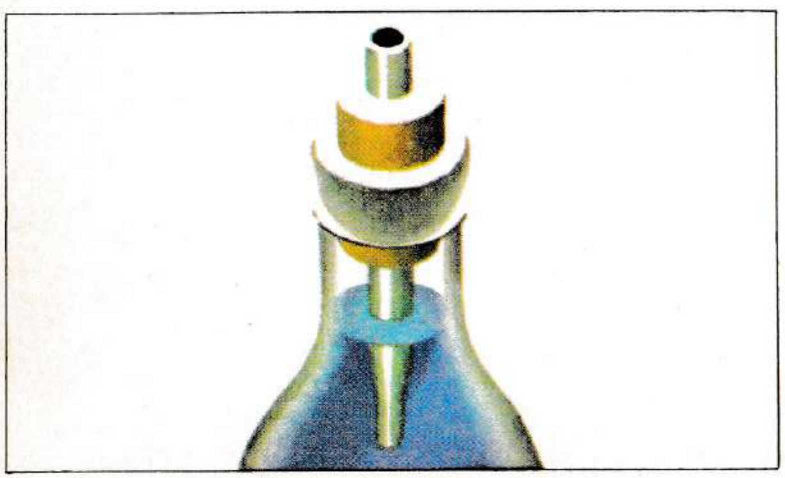
क्रिस्टलिक द्रव्यों का पिघलना और जमना एक ही तापक्रम पर होता है, जो हर दिये हुए द्रव्य के लिये स्थिर होता है (स्थिर दाब की स्थिति में) ।

उदाहरणार्थ, बर्फ $0^{\circ}C$ पर पिघलता है।

बर्फ पिघलाने के लिये उसका तापक्रम शून्य डिग्री तक पहुंचाने के बाद भी उसे गर्म करना जारी रखना चाहिये। यह अतिरिक्त ताप बर्फ का क्रिस्टल बनाने वाले अणुओं का आपसी 'गठबंधन' तोड़ने में खर्च होता है। पिघलने की प्रक्रिया में तापक्रम 0°C पर ही स्थिर रहता है।

पानी भी बर्फ में इसी तापक्रम पर रूपांतरित होता है और यह तापक्रम तबतक स्थिर रहता है, जबतक पानी की दी हुई मात्रा पूरी की पूरी बर्फ में परिणत नहीं हो जाती।

लेकिन, जमने पर क्रिस्टलिक संरचना प्राप्त करने वाले अन्य द्रव्यों की तरह पानी में भी एक रोचक गुण होता है — इसे शून्य से काफी नीचे के तापक्रम तक भी ठंडा किया जा



सकता है। शर्त यही है कि पानी को हिचकोले नहीं लगने चाहिये।

हम एक प्रयोग करेंगे, जो जूल वेर्न के प्रयोग की तरह ही होगा। फर्क यही होगा कि हम पानी के साथ नहीं, एक अन्य द्रव्य के साथ प्रयोग करेंगे, जो अधिक सुविधाजनक रहेगा। पैमाना भी छोटा ही होगा। हम हाइपोसल्फाइट के साथ प्रयोग करेंगे। यह एक क्रिस्टलिक द्रव्य है, जो फोटोग्राफी में फिक्सर का काम करता है। इसके लिये जब आप हाइपोसल्फाइट खरीदेंगे, तो इस बात पर ध्यान देंगे कि क्रिस्टल बड़े हों और शुष्क हों।

बोतल में हाइपोसल्फाइट भरकर उसे गर्म पानी से भरे बहगुने में रखें। बहगुना गर्म करना शुरू करें। आवश्यकता इस बात की है कि हाइपोसल्फाइट पिघलकर एक पारदर्शक द्रव में परिणत हो जाये। इसके लिये बोतल को इधर-उधर झुकाते रहिये, लेकिन इस प्रकार से कि उसमें पानी न चला जाये।

कागज का एक डाट बनाकर बोतल में लगा लें और उसमें ड्रौपर की नली इस तरह से घुसा लें कि उसका सँकरा भाग द्रव में डूबा रहे। नली का बाहरी सिरा रूई से बंद कर दें ताकि द्रव में कुछ गिरे नहीं। बोतल ऐसी जगह रखें कि उसे कोई ठोकर न लगे, वह हिले-डुले नहीं।

दो-तीन घंटे बाद बोतल कमरे के तापक्रम तक ठंडा हो जायेगा।

सावधानी से रूई निकालकर नली के सहारे द्रव में हाइपो-सल्फाइट का एक क्रिस्टल गिरा दें। उसका आकार इतना बड़ा होना चाहिये कि वह नली के सँकरे भाग में अँटक जाये।

आपकी आँखों के सामने नली के सँकरे सिरे से पूरे द्रव का क्रिस्टलीकरण शुरू हो जायेगा। सारा हाइपोसल्फाइट क्षण भर में जमकर क्रिस्टल में परिणत हो जायेगा।

सबसे दिलचस्प बात यह होगी कि बोतल, जो कुछ मिनटों पहले ठंडी थी, गर्म हो उठेगी। आप जानते हैं कि द्रवण और घनीभवन सदा एक ही तापक्रम पर होते हैं। द्रव से ठोस अवस्था में संक्रमण करने के लिये हाइपोसल्फाइट के अणु तेजी से नयी संरचना बनाते हैं और इसके फलस्वरूप तापीय ऊर्जा उत्सर्जित होती है।

गति-नियमों के साथ प्रयोग

जड़त्व – हमारे चारों तरफ. '**जड़त्व**' शब्द हम अक्सर सुनते हैं और स्वयं भी इसका प्रयोग करते हैं। इसका उच्चारण वे लोग भी करते हैं, जिनका अभी तक न्यूटन के प्रथम गति-नियम के साथ परिचय ही नहीं हुआ है, और वे लोग भी, जो इस नियम को कब के भूल चुके हैं।

'जड़त्व' का सामान्य अर्थ है निष्क्रिय पड़ा रहना, खुद कुछ नहीं करना।

भौतिकी में इस शब्द से पिंड का एक नियत गुण द्योतित किया जाता है। इसका प्रयोग भौतिकविद तब करते हैं, जब यह कहना चाहते हैं कि फेंका गया पत्थर या रेल की पटरी पर लुढ़कता हुआ डब्बा उस समय भी खुद ब खुद गति करता रहता है, जब गतिदायक बल अपनी क्रिया समाप्त कर चुका होता है।

इसके विपरीत, यदि पिंड स्थिर है, वह अपनी जगह से हिलता नहीं है और उसे अपनी जगह से हटाने के लिये उसपर एक नियत बल लगाना पड़ता है, तो इस स्थिति में भी 'जड़त्व' शब्द का उपयोग होता है।

इस प्रकार, हर पिंड में यह गुण होता है कि वह अपनी अवस्था को सुरक्षित रखे। हर पिंड में यह गुण होता है कि वह अपनी विरामावस्था या सरलरैखिक समरूप गति की अवस्था को तबतक सुरक्षित रखता है, जबतक उसे कोई वाह्य बल रुकने या विचलित होने को विवश न करे।

जड़त्व की संवृत्ति दिखाने के लिये दैनंदिन जीवन से कुछ उदाहरण लें।

कपड़े से टेबुल वगैरह पोंछने के बाद उसे झाड़ते वक्त ध्यान दीजिये कि उससे धूल-कण किस तरह उड़ते हैं।

धूल-कण तेजी से उड़ते हैं, जब कपड़े को आप किसी चीज पर, जैसे खंभे पर, पटकते हैं। चोट खाकर कपड़ा तेजी से रुक जाता है और धूल-कण जड़त्व के कारण उससे निकल पड़ते हैं।

जब आप गिलास का पानी फेंकते हैं, आप हाथ को तेज गति प्रदान करते हैं, फिर अचानक एकदम से रोक लेते हैं। पानी जड़त्व के कारण ही गिलास से निकलकर आगे बढ़ जाता है।

बुखार नापने के पहले थर्मामीटर को कुछेक बार कसकर झाड़ना पड़ता है। तभी पारे का स्तंभ जड़त्व के कारण नीचे उतरकर घुंडी में वापस आता है।

आस-पास क्या हो रहा है, इसका अवलोकन करके जड़त्व के अनेक उदाहरण आप स्वयं दे सकते हैं। उदाहरणार्थ, ट्राम, बस या रेलगाड़ी जब तेजी से रुकती है, आप एक धक्का-सा महसूस करते हैं, मानो किन्हीं अदृश्य हाथों ने आपको तेजी से आगे धकेल दिया हो।

जड़त्व का उद्योग और परिवहन में विस्तृत उपयोग है। कार रोकने के पहले मोटर बंद कर देते हैं और कार कुछ समय तक जड़त्व के कारण चलती रहती है। जब बड़े जहाज को किनारे लगाते हैं, उसके प्रोपेलर काम करना बंद कर देते हैं; जहाज

स्वयं जड़त्व के कारण धीमे-धीमे किनारे की ओर बढ़ता रहता है, जबतक कि अपने स्थान पर खड़ा नहीं हो जाता।

कभी-कभी जड़त्व के विरुद्ध संघर्ष भी करना पड़ता है। उदाहरणतया, हवाई जहाज उतरने के बाद भी जड़त्व के कारण तेजी से जमीन पर दौड़ता रहता है; उसका वेग इतना बड़ा होता है कि उसे रोकने के लिये विशेष ब्रेक का इस्तेमाल करना पड़ता है।

अंतरिक्ष-यात्रियों के पृथ्वी पर लौटने के वक्त भी पैराशूट खुलने के पहले वेग कम करना पड़ता है।

सर के बल गति के प्रयोग. प० नेस्तेरोव एक प्रतिभाशाली रूसी सैनिक पायलट थे। उच्च कोटि के हवाई करतब की नींव उन्होंने ही डाली थी। 1913 में उन्होंने विमान को एक ऐसे गतिपथ पर उड़ाया, जिसका नाम उनके सम्मान में 'नेस्तेरोव-पाश' रखा गया। विमान गति तेज करता था, कुछ नीचे उतरता था, फिर तेजी से ऊपर उठता था, पीठ के बल उलटता था, नीचे की ओर उतरता हुआ सीधा हो जाता था; इस प्रकार, विमान उदग्र तल पर एक गोल चक्कर लगाता था। विमान की इस चाल में जड़त्व की बहुत बड़ी भूमिका रहती है।

कुछ दशक पहले सरकस का एक कार्यक्रम दर्शकों को बहुत आकर्षित करता था, जिसमें एक सायकिल-सवार अपने पथ का एक हिस्सा उलटा लटककर तय करता था। इसके लिये विशेष पथ बनाया जाता था, जो उदग्र समतल पर एक फंदे (पाश)

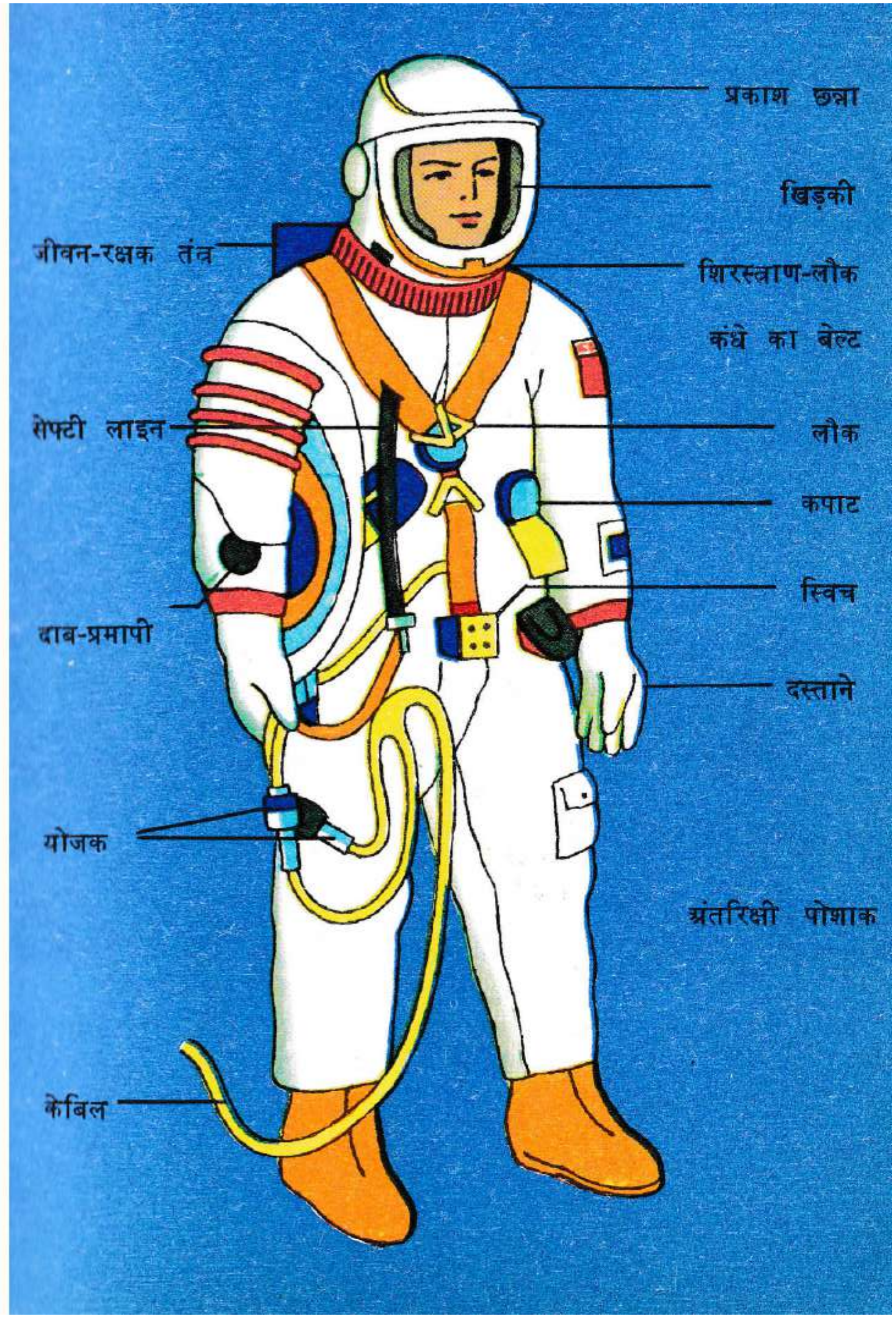
की आकृति बनाता था। इस पाश में आदमी बहुत तेज गति से सायकिल चलाता हुआ सर्पिल पथ तय करता था। पाश के ऊपरी भाग में आदमी सर नीचे और चक्के ऊपर किये हुए उल्टा होकर सफर करता था, फिर सही सलामत नीचे उतर आता था, तब जाकर दर्शक इतमीनान की साँस लेते थे।

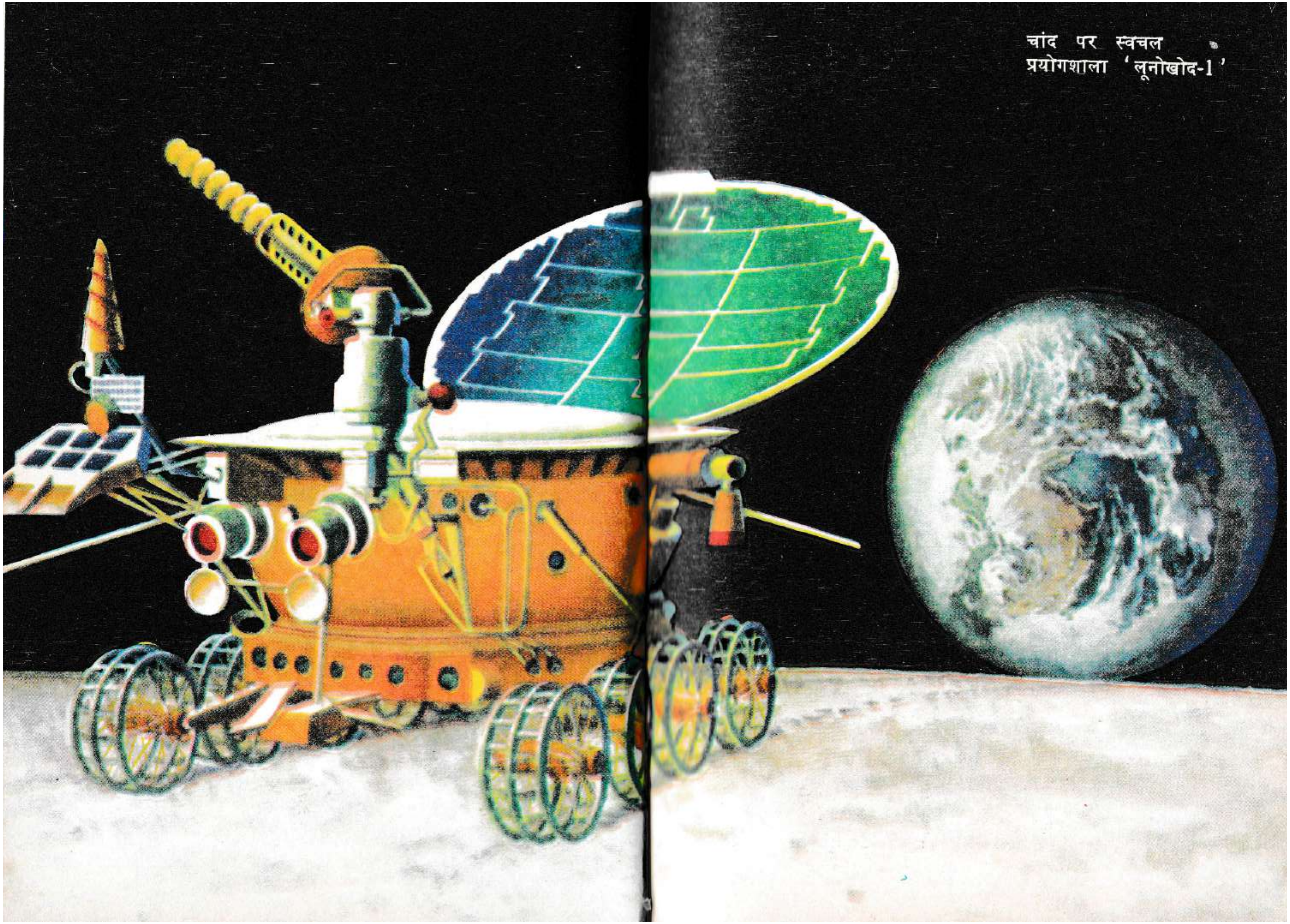
सायकिल-सवार का यह कौशल नेस्तेरोव-पाश की ही याद दिलाता है।

इस कौशल के सफल प्रदर्शन के लिये सायकिल की गति बहुत तेज करनी पड़ती है और यह काम एक नियत ऊँचाई से सायकिल चलाकर किया जाता था। प्रस्थान-बिन्दु पाश के ऊपरी बिन्दु की तुलना में बहुत ऊँचाई पर स्थित होता था। उदग्र खड़े छल्ले में सायकिल-सवार की गति रस्सी से बंधे पत्थर को घुमाने की गति से मिलती-जुलती है। रस्सी को ताने हुए पत्थर जब ऊपर पहुँचता है, तो वह गिरता नहीं है (यद्यपि लगता है कि वह रस्सी से नहीं लटक रहा है, रस्सी उससे लटक रही है!) ठीक इसी तरह से सायकिल-सवार भी अपने बड़े वेग के कारण अपने वलयाकार पथ को दबाता रहता है और, जब जड़त्व के कारण चक्का ऊपर किये हुए उल्टा चलना शुरू करता है, गिरता नहीं है।

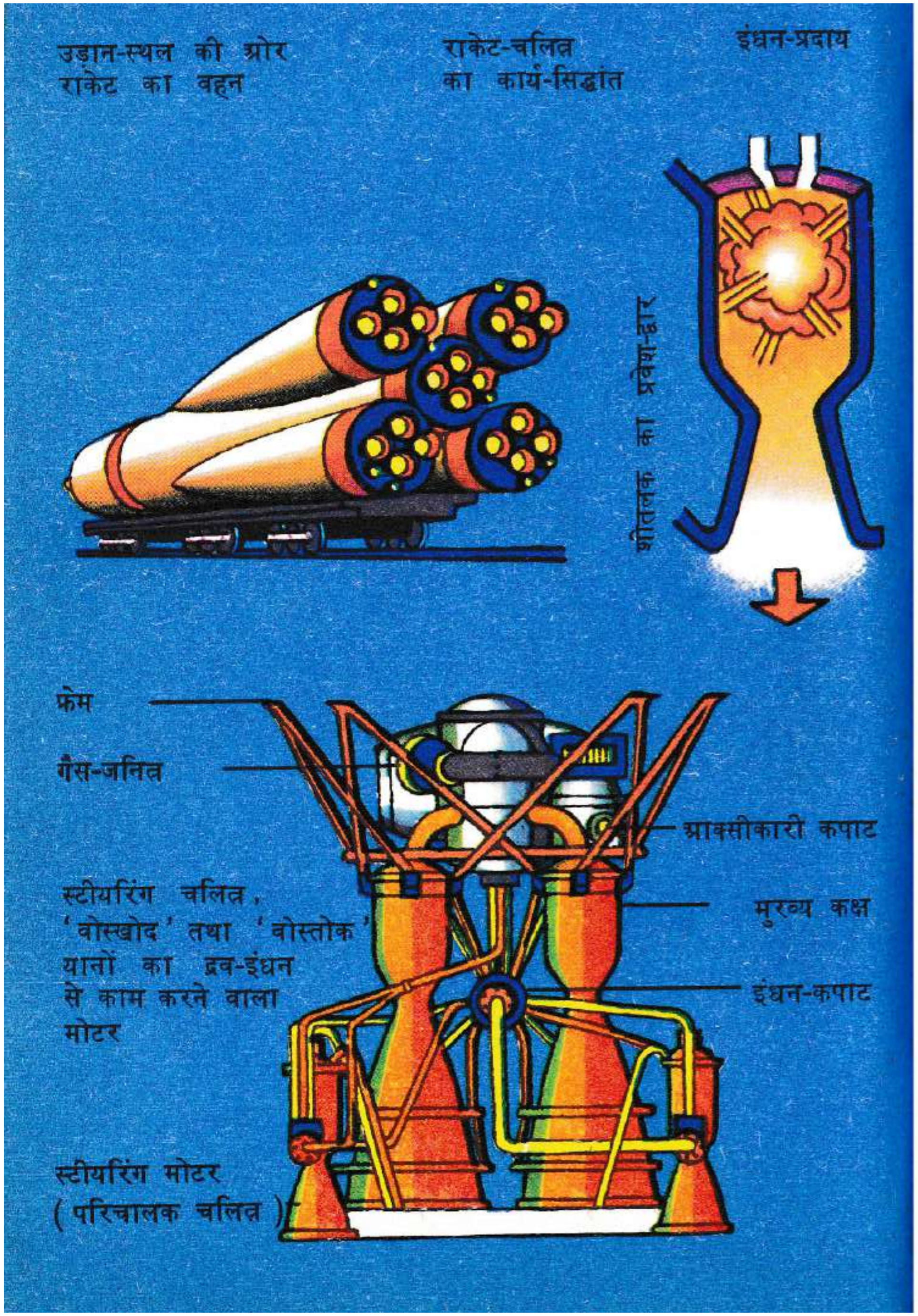
हमारे घरेलू प्रयोग में पायलट या सायकिल-सवार नहीं होगा, इनकी जगह हम इस्पात की एक सीधी-सादी गोली लेंगे (बॉल-बेयरिंग की)।

उदग्र पाश वाला पथ गोली की नाप के अनुसार बनाना





चांद पर स्वचल प्रयोगशाला 'लूनोखोद-1'



होगा। मान लें कि आपके पास 9 मिलिमीटर व्यास वाली गोली है। ड्राइंग-पेपर या पतला कार्ड लीजिये, इसमें से 2.5 सेंटीमीटर चौड़ी और 120 सेंटीमीटर लंबी एक पट्टी काट लीजिये (यदि इतना लंबा कागज नहीं है, तो दो-तीन टुकड़ों को चिपकाकर भी बना सकते हैं)। पट्टी को पूरी लंबाई के अनुतीर दोनों किनारों से सात-सात मिलिमीटर की दूरी पर मोड़कर दीवारें खड़ी कर लीजिये – आपको एक लंबी नाली मिल जायेगी। इसे मोड़कर पाश का रूप देने के लिये अंत से 26 सेंटीमीटर तक दीवारों में कैंची से हर 3-4 मिलिमीटर पर कटानें लगा लें। नाली के इस भाग को आप इस तरह से मोड़ें कि नियमित वृत्त की जगह सर्पिल जैसा आकार मिले अर्थात् पाश में नाली स्वयं को काटने की बजाय स्वयं से अपनी चौड़ाई जितनी दूर रहे; यहां पर आप नाली के लगभग समांतर भागों को एक गत्ते पर चिपका दे सकते हैं, ताकि वे एक-दूसरे से दूर न हों।

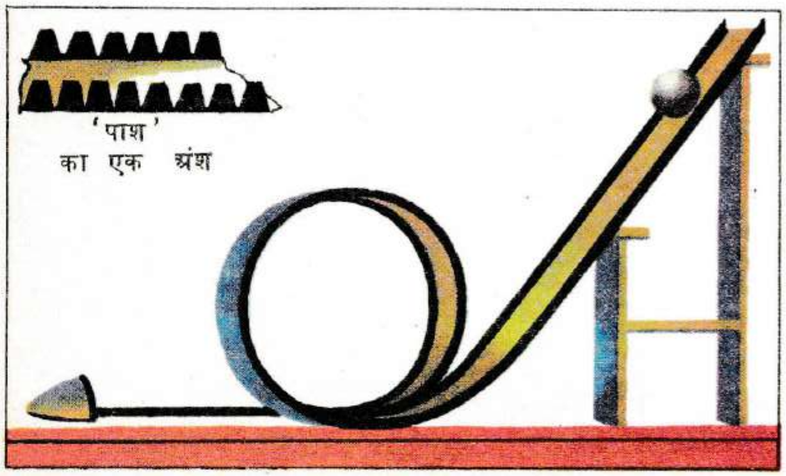
अब प्रतिमान बनाना शुरू कीजिये। यदि आप धीरज के साथ कोशिश करेंगे तो एक सुंदर बनावट मिलेगी, जिसे भौतिकी की कक्षा में दृष्टिगम्य उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकेगा।

कागजी पाश को उदग्र खड़ा कीजिये। पाश से 90 सेंटीमीटर दूर वाले सिरे को 40 सेंटीमीटर की ऊँचाई पर जड़ दीजिये। लगभग खड़ी ढलान के साथ उतरती हुई नाली धीरे-धीरे पाश के रूप में परिणत होगी (तेजी के साथ मोड़ लेते हुए नहीं, अन्यथा लुघड़ती गोली को झटका लगेगा)। पाश के दूसरी

तरफ नाली का 20 सेंटीमीटर लंबा भाग क्षैतिज स्थिति में चिपका लीजिये और इसके सिरे पर एक 'जेब' बना दीजिये, जिसमें गोली आकर फँस जाया करे (ताकि हर प्रयोग के बाद गोली को पूरे कमरे में ढूंढ़ना न पड़े)।

यह भी ध्यान रखें कि पूरी बनावट पर्याप्त कठोर हो, गोली के भार से झुके नहीं, और यह भी कि गोली का पथ ऐसा हो कि उसे कोई झटका न लगे, किसी रुकावट का सामना न करना पड़े।

अब गोली को नाली के ऊपरी बिंदु से छोड़ें। लुढ़कती हुई गोली आवश्यक वेग के साथ-साथ जड़त्व प्राप्त करेगी, पाश का ऊपरी बिंदु पार करती हुई फिर नीचे लुढ़क पड़ेगी। उसकी यात्रा कागज की जेब में समाप्त हो जायेगी।



भिन्न ऊँचाइयों से गोली को छोड़कर आप उसके आचरण में परिवर्तन का प्रेक्षण कर सकते हैं। आप वह ऊँचाई ज्ञात कर ले सकते हैं, जहां से गोली को छोड़ने पर वह पाश पार नहीं कर पायेगी।

इस प्रयोग को और विकसित किया जा सकता है – नाली में एक और (कुछ छोटा) पाश बनाकर। तब गोली एक नहीं, दो पाश पार करके जेब में पहुंचेगी।

चांद पर प्रयोग. हम '**द्रव्यमान**' शब्द का अक्सर उपयोग करते हैं, पर सही अर्थ में बहुत ही कम। यूरी सेलेज्नेव अपनी पुस्तक 'सरल भौतिकी प्रवेश' में द्रव्यमान के बारे में बड़े काव्यात्मक ढंग से लिखते हैं :

"खेद की बात है कि द्रव्यमान की अवधारणा के उपयोग में अक्सर गलती और अस्पष्टता ही देखने को मिलती है। कभी कहते हैं कि द्रव का नियत द्रव्यमान एक बर्तन से दूसरे में ढाला गया है, कभी धागे से लटके हुए या टेबुल पर पड़े हुए द्रव्यमान की बातें करते हैं। इस तरह की अभिव्यंजनाओं का कोई भौतिकीय अर्थ नहीं होता, साथ ही ये द्रव्यमान की अवधारणा के सार को अस्पष्ट करने में भी कोई कसर नहीं छोड़तीं।

पिंड का द्रव्यमान सबसे पहले तो उसका **गुण** है – नियत बल की क्रिया का एक निश्चित त्वरण से जवाब देना। **पिंड का द्रव्यमान उसके जड़त्व की माप है** – इस कथन का अर्थ यही है।"

आगे : "यदि द्रव्यमान पिंड का एक निश्चित गुण है, तो वह 'लेट', 'लटक' या 'बह' नहीं सकता। बर्फ की सफेदी को धागे से लटकाने की बात किसी के दिमाग में नहीं आती, पर पता नहीं क्यों द्रव्यमान को लोग '**लटका**' दिया करते हैं!"

भार निर्धारित करने के लिये कमानीदार तुला का उपयोग होता है। भार की इकाई, जैसा कि आप जानते हैं, किलोग्राम है। द्रव्यमान निर्धारित करने के लिये भी तुला का ही उपयोग होता है, पर बहंगी जैसी तुला का, जिसपर विचाराधीन द्रव्यमान की तुलना मानक (एक किलोग्राम) द्रव्यमान के साथ की जाती है।

आइये, अब एक काल्पनिक प्रयोग करें। हम चांद पर पहुंचते हैं, हमारे साथ छे किलोग्राम चीनी का एक पैकेट है। चांद पर कमानीदार तुला से पैकेट नापकर देखते हैं... उसमें सिर्फ एक किलोग्राम चीनी है। लेकिन यदि चीनी को हम कमानीदार तुला से नहीं, बहंगीदार तुला से नापेंगे, तो देखेंगे कि चीनी जरा भी गायब नहीं हुई है – एक पलड़े पर छे किलोग्राम का बाट होगा, दूसरे पर पैकेट होगा और डंडी क्षैतिज होगी। कम सिर्फ भार होता है; चीनी छे गुनी हल्की हो जाती है, क्योंकि चांद पृथ्वी से छोटा है और उसका गुरुत्वाकर्षण-बल पृथ्वी से छे गुना कम है। लेकिन क्रियाशील बल का जवाब त्वरण से देने के गुण, अर्थात् द्रव्यमान का जहां तक प्रश्न है, वह गायब नहीं होता, वह वैसा ही रहता है, जैसा पृथ्वी पर।

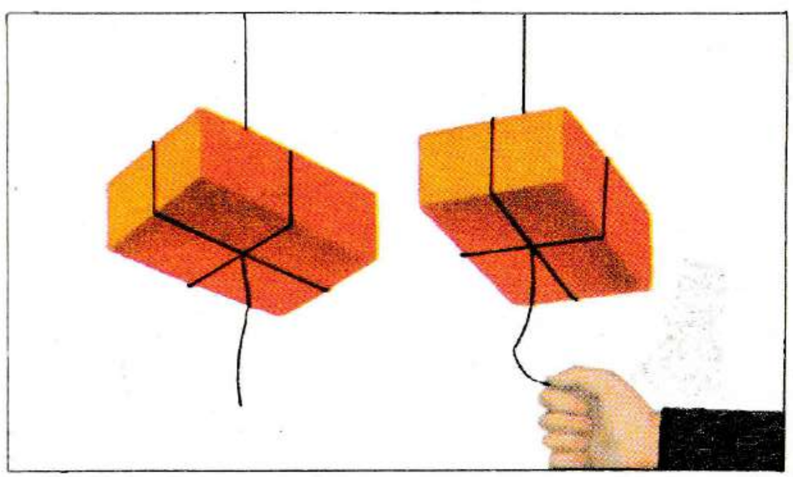
भार कम हो सकता है, यहां तक कि गायब भी हो सकता

है (जब पैकेट राकेट में चांद की ओर उड़ रहा था, उसका भार कुछ भी नहीं था), लेकिन द्रव्यमान कभी गायब नहीं होता।

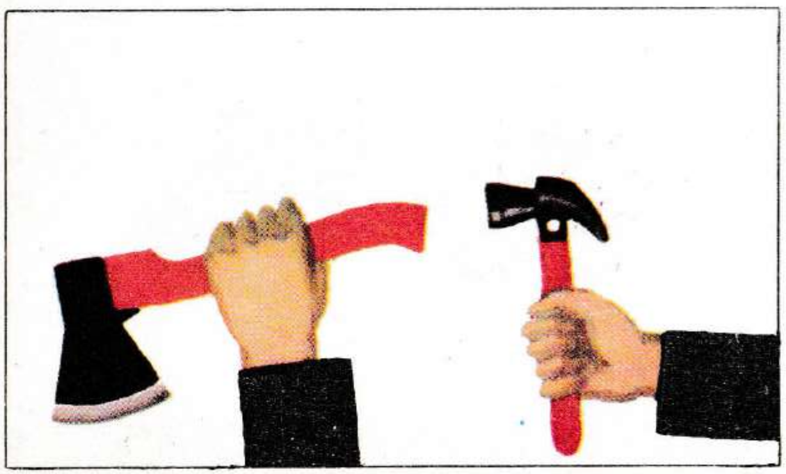
जड़त्व के साथ प्रयोग. आपको शायद विश्वास हो गया होगा कि जड़त्व की संवृत्ति कितनी रोचक है। प्रकृति में जो कुछ भी भौतिक है, उसमें जड़त्व का गुण होता है।

अब चंद प्रयोग करते हैं। अलग-अलग पिंड क्रियाशील बल का नियत त्वरण से किस प्रकार जवाब देते हैं, इसका अवलोकन करें।

गत्ते के एक जैसे दो डब्बे धागे से लटका लें। एक डब्बा



खाली होना चाहिये और दूसरा मिट्टी या बालू से भरा होना चाहिये। दोनों डब्बों से एक-एक वैसा ही धागा लटका दें, जिससे डब्बे खुद लटके हुए हैं। यदि आप खाली डब्बे से लटके धागे को पकड़कर जोर का झटका देंगे, तो दोनों में से कोई भी धागा टूट सकता है – या तो वह धागा, जिससे डब्बा लटक रहा है, या वह, जो डब्बे से लटक रहा है। खाली डब्बे का जड़त्व बहुत कम होता है, इसीलिये झटका दोनों ही धागों को समान रूप से लगता है। रेत या मिट्टी से भरे डब्बे के साथ बात दूसरी होगी। निचले धागे को तेजी से झटका देने पर सिर्फ निचले धागे को ही टूटना चाहिये। रेत या मिट्टी से भरे डब्बे में जड़त्व अधिक होता है; वह झटके की ताकत ऊपरी



धागे तक फैलने नहीं देता इसीलिये सिर्फ निचला धागा ही टूटेगा।

आपने कभी कुल्हाड़े को उसकी बेंट पर चढ़ाया है? इसका तरीका निम्न है: कुल्हाड़े को बेंट पर थोड़ा सा चढ़ाकर बेंट पकड़ते हैं और उसके पिछले सिरे पर हथौड़े से चोट करते हैं। फौलादी कुल्हाड़े का द्रव्यमान (और जड़त्व) अधिक होता है, बनिस्बत कि लकड़ी की बेंट का, इसीलिये वह चोट के जवाब में कम प्रतिक्रिया करता है। बेंट में कम जड़त्व होता है, वह हर चोट के साथ अपनी जगह पर बैठती चली जाती है – घर्षण बहुत अधिक होने के बावजूद भी।

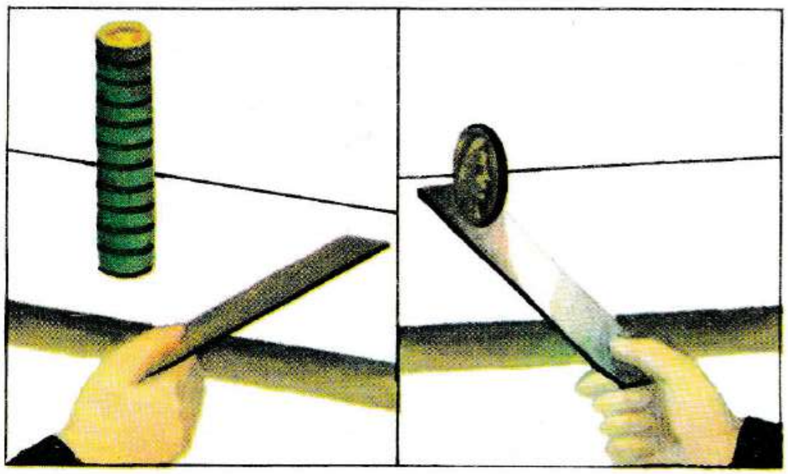
अगले प्रयोग के लिये हमें कैरम बोर्ड की गोटियों या समान प्रकार के सिक्कों की आवश्यकता पड़ेगी। चिकनी और कड़ी सतह पर उन्हें एक पर एक रखकर स्तंभ बना लीजिये (यदि सिक्के हैं, तो सबसे नीचे कोई बड़ा सिक्का रखिये)। एक लकड़ी की पटरी ले लीजिये (सिक्कों के लिये धातु की पाटरी चा-हिये)।

पटरी को सतह पर फिसलाते हुए सबसे निचली गोटी पर तेजी से चोट करके उसे निकाला जा सकता है; स्तंभ ज्यों का त्यों खड़ा रहेगा। इसमें उसका जड़त्व ही व्यक्त होता है। स्तंभ के नीचे स्थित गोटी को जो वेग दिया गया था, गोटी उसे पूरे स्तंभ को नहीं दे पायी।

मनोरंजक प्रयोगों के शौकीन लोग इस प्रयोग से पिछली शती में अपना मन बहलाया करते थे। उस जमाने का एक

और रोचक प्रयोग देखें। लेकिन इसे पूरा करने के पहले कुछ अभ्यास की आवश्यकता होगी।

टेबुल की चिकनी सतह के किनारे कागज की एक पतली पट्टी रख लीजिये (चौड़ाई 2–3 सेंटीमीटर)। पट्टी का दूसरा सिरा नीचे लटकते रहना चाहिये। टेबुल पर पड़े सिरे पर एक गोल मोटा सिक्का सीधा खड़ा कर दीजिये (सिक्का नया होना चाहिये, जिसकी किनारी घिसी हुई न हो)। पट्टी को अपनी ओर हल्का सा झटका दीजिये। कुछ अभ्यास के बाद आप कागज को सिक्के के नीचे से निकालना सीख जायेंगे, सिक्का ज्यों का त्यों अपनी जगह पर स्थिर रहेगा। किसी भी भौतिक पिंड की तरह सिक्के में भी जड़त्व होता है। हल्का-सा झटका उसे कोई

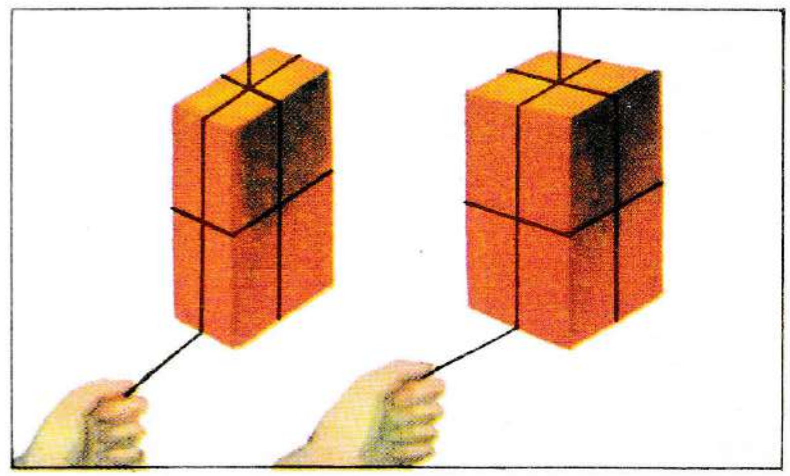


गति नहीं दे पाता, लेकिन कागज के लिये यह झटका पर्याप्त होता है। कागज की पट्टी को भिन्न शक्ति के झटके दे देकर सिक्के के आचरण का अवलोकन करें।

तीन ईंटों के साथ प्रयोग. ये प्रयोग दो डब्बों के साथ किये गये प्रयोग की तरह ही हैं।

रस्सी से एक ईंट लटका दें, बगल में दो ईंटों को एक साथ बाँधकर लटका दें।

आपके सामने दो 'भौतिकीय पिंड' हैं। एक का जड़त्व दूसरे से दुगुना अधिक है। सबसे छोटी उंगली के सिरे से दोनों पिंडों को बारी-बारी से धकेलकर देखें। दोनों समान दूरी तक



दोलन करने लगें, इसके लिये समान ताकत से काम नहीं चलेगा।

यह सिद्ध करने के लिये दोनों पिंडों के नीचे पतले रबड़ के फीते बांध लीजिये (उनकी लंबाई और मुटाई समान होनी चाहिये)। फीतों का सिरा पकड़कर खींचें। आप देखेंगे कि अकेले ईंट को अपनी जगह से हिलाने में फीता कम लमड़ता है, बनिस्बत कि दो ईंटों को। इसका मतलब है कि दो ईंटों को खींचने में अधिक बल लगता है।

आप कहेंगे कि इसमें आश्चर्य की क्या बात है – एक ईंट की तुलना में दो ईंटें अधिक भारी होती हैं, इसलिये उन्हें हिलाने में अधिक बल लगाना पड़ता है। लेकिन इसका संबंध भार से नहीं है। दो ईंटें अधिक जड़त्व रखती हैं, बनिस्बत कि एक ईंट, इसलिये दोनों को समान त्वरण संप्रेषित करने के लिये दो ईंटों पर अधिक बल लगाना पड़ता है।

लेकिन जब आप ईंटों को खींचते हैं, तो वे अपनी जगह से हटती ही नहीं हैं, कुछ ऊपर भी उठ जाती हैं। भौतिकविद कहेंगे कि प्रयोग शुद्ध रूप में नहीं किया गया है (और आप कहेंगे कि दो ईंटों को एक साथ उठाना कठिन है, इसीलिये अधिक बल लगाना पड़ता है)। इसलिये यही प्रयोग कल्पना में किसी कक्षीय स्टेशन पर करते हैं, जहां हर चीज भारहीनता की अवस्था में होती है। प्रयोगाधीन ईंटें भी भार खोकर हवा में स्वतंत्र उड़ान भरना शुरू कर देती हैं। लेकिन इसके बावजूद भी एक साथ दो ईंटों को और अलग से एक ईंट को समान त्वरण देने के लिये असमान बल की आवश्यकता पड़ेगी; एक ईंट के

लिये निश्चय ही कम बल चाहिये। भार नहीं है, पर द्रव्यमान गायब नहीं हुआ है और इसके साथ-साथ जड़त्व भी सुरक्षित है।

बंधन में पड़े हुए ग्रह. पृथ्वी अपने ऊपर स्थित सभी वस्तुओं को अपने शक्तिशाली गुरुत्वाकर्षण से रोक कर रखती है। वह सिर्फ हम और आपको ही नहीं, रेतकणों और चट्टानों को, वातावरण को, नदियों और सागरों के जल को भी अपने ऊपर रोके रखती है।

इसाक न्यूटन ने एक महत्त्वपूर्ण नियम को सूत्रबद्ध किया – गुरुत्वाकर्षण के नियम को। उन्होंने सिद्ध किया कि गुरुत्वाकर्षण सिर्फ पृथ्वी पर ही नहीं है, वह पूरे ब्रह्मांड में फैला हुआ है। ब्रह्मांड में सभी पिंड – सूर्य, ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र-मंडल – सभी एक दूसरे को आकर्षित करते हैं। इस आकर्षण का बल आकाशीय पिंडों के द्रव्यमान और उनकी आपसी दूरी पर निर्भर करता है। दूरी जितनी ही कम होगी, आकर्षण-बल उतना ही अधिक होगा। दूरी जितनी अधिक होगी, आकर्षण-बल उतना ही कम होगा।

किसी जमाने में किसी शक्तिशाली प्राकृतिक बल ने पृथ्वी तथा अन्य ग्रहों को गति प्रदान कर दी थी, तब से सौर-मंडल में सभी ग्रह सूर्य के गिर्द स्थायी नियत कक्षकों पर परिभ्रमण करते रहते हैं।

ध्यान दें: जब आप रस्सी से पत्थर बांधकर घुमाते हैं, वह सरल रेखा पर नहीं चल सकता। रस्सी उसे खींचकर वृत्ताकार कक्षक से इधर-उधर नहीं होने देती। यदि रस्सी टूट जायेगी

या उसे जानबूझकर छोड़ दिया जाये, तो पत्थर जड़त्व के कारण अपने कक्षक के साथ स्पर्शरेखा की दिशा में सरल रेखा पर उड़ चलेगा।

प्रत्येक ग्रह भी पत्थर की तरफ ही बंधा रहता है। उसके लिये रस्सी नहीं, सूर्य का गुरुत्वाकर्षण-बल बंधन का काम करता है। ग्रह जिस वेग से सूर्य की परिक्रमा करता है, वह बहुत बड़ा है। यदि सूर्य का आकर्षण-बल ग्रहों को सरल रैखिक पथ से निरंतर विचलित करते हुए उन्हें दीर्घवृत्ताकार कक्षकों पर रोके नहीं रहता, तो सूर्य के निकट एक भी ग्रह नहीं रहता।

इसी तरह से पृथ्वी भी अदृश्य गुरुत्वाकर्षण-बल के सहारे चंद्रमा को अपने गिर्द वृत्ताकार कक्षक पर रोके रहती है।



यदि अचानक पृथ्वी और चांद, सूर्य तथा ग्रहों के बीच से गुरुत्वाकर्षण की ये 'रस्सियां' टूट जायें, तो क्या होगा? जैसे हम टेलीवीजन या रेडियो औफ करते हैं, वैसे ही यदि गुरुत्वाकर्षण-बल औफ कर दें, तो क्या होगा?

इस प्रश्न का उत्तर अगले प्रयोगों से मिलेगा।

औफ गुरुत्वाकर्षण का प्रयोग. यह प्रयोग करने के पहले दो सहायक प्रयोग करने पड़ेंगे। पहला प्रयोग दिखाता है कि यदि ग्रह विरामावस्था में हो और उसपर सिर्फ सौर-गुरुत्वाकर्षण क्रियाशील रहे, तो क्या होगा। दूसरा प्रयोग – यदि ग्रह अपने कक्षक पर गतिशील रहे और उसपर सौर-गुरुत्वाकर्षण क्रियाशील रहे, तो क्या होगा।

इसके बाद मुख्य प्रयोग करेंगे – गुरुत्वाकर्षण अचानक औफ हो जाता है और सिर्फ जड़त्व का प्रभाव रह जाता है।

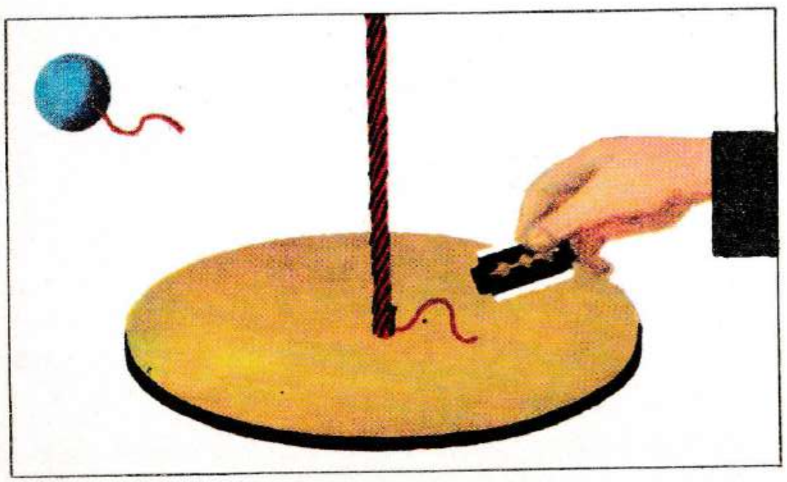
जब आप ये प्रयोग संपन्न कर लेंगे, आप देखेंगे कि प्रकृति में परस्परविरोधी प्रतीत होने वाली संवृत्तियों का सुसामंजस्य कितना बड़ा महत्त्व रखता है।

पहला प्रयोग बहुत सरल है। लकड़ी या धातु की गोली (या कोई गोल पत्थर) लीजिये। वह कहीं उड़ी नहीं जा रही है, वह आपके हाथ में विश्राम कर रही है। आप फर्श पर खड़ा होते हैं। हाथ से गोली छोड़ते हैं, वह फर्श पर गिरती है। प्रयोग बस इतना ही है। अब अपने प्रयोग को अर्थ देने का प्रयत्न करें, देखें कि कौन किसकी भूमिका निभा रहा है। गोली, जिसे आप

हाथ में पकड़े हुए थे, स्थिर ग्रह है। जमीन, जिसपर आप खड़े हैं, सूर्य है। गोली पर क्रियाशील पार्थिव गुरुत्वाकर्षण – सूर्य का गुरुत्वाकर्षण है। हुआ यह कि स्थिर 'ग्रह' 'सूर्य' द्वारा खिंचता हुआ उसपर गिर गया।

दूसरा प्रयोग कुछ जटिल है। पहले एक उपकरण बनाना होगा, जिसकी अन्य प्रयोगों में भी आवश्यकता पड़ेगी।

15–20 सेंटीमीटर व्यास वाली एक भारी चकती ले लीजिये, उसके केंद्र में छेद करके 1–1.5 मीटर लंबी दो रस्सियां उसमें से निकाल लीजिये और गाँठ बांध दीजिये। चकती को इसी गाँठ पर लटकते रहना चाहिये। गाँठ को छोटी काँटियों से चकती पर जड़ दीजिये, ताकि चकती के घूर्णन के समय रस्सियां



ऐंठन खाने लगें (इसलिये चकती लकड़ी का हो तो अच्छा है; आप पुराने चकले का उपयोग कर सकते हैं)।

चकती पर केंद्र में रस्सियों के पास एक छोटी सी काँटी ठोककर उससे एक पतली डोरी बांध दीजिये। डोरी के दूसरे सिरे पर पत्थर का एक नन्हा टुकड़ा बांध दीजिये। पत्थर ग्रह का काम करेगा, चकती या केंद्र – सूर्य का, और डोरी – गुरुत्वाकर्षण-बल का, जो हमारे प्रयोगाधीन ग्रह को सूर्य के गिर्द कक्षक पर रोके रहेगा। चकती को घुमाते हुए रस्सी को ढेर-सी ऐंठन देकर छोड़ दीजिये, वह उल्टी दिशा में तेजी से घूर्णन करने लगेगी। आपके सामने एक ग्रह द्वारा सूर्य की परिक्रमा का प्रतिमान होगा।

अब तीसरा, मुख्य प्रयोग शुरू करते हैं। जब चकती तेजी से नाचने लगे, ब्लेड के हल्के स्पर्श से डोरी काट दीजिये, जिससे पत्थर का टुकड़ा बंधा हुआ है। बेहतर होगा यदि आप डोरी को ठीक पत्थर के पास काटेंगे। इस तरह आप ग्रह के साथ सूर्य का गुरुत्वाकर्षण औफ कर देंगे। पत्थर (ग्रह) जड़त्व के कारण सरल रेखा पर चलता हुआ 'ब्रह्मांड' में कहीं खो जायेगा। यह प्रयोग कमरे में नहीं करना चाहिये – तेजी से उड़ता हुआ पत्थर कोई चीज तोड़ दे सकता है।

इस प्रयोग का एक सरल रूप आप चक्के पर चाकू पिजाते वक्त देख सकते हैं। घूर्णनरत चक्के की स्पर्शरेखा पर चिनगारियों की फुहार उड़ती है। ये धातु के उत्तप्त कण हैं। वे उस कक्षक पर परिभ्रमण नहीं कर सकते, जिसपर वे उत्पन्न होते हैं, क्योंकि

उन्हें वहां रोककर रखने वाला कोई बल नहीं होता। वे स्वतंत्र होते हैं, इसलिये सरल रेखा पर उड़ते हैं। उनकी तेज गति के कारण हम अलग से कोई कण नहीं देख पाते, हम देखते हैं– उनका चमकदार पथ, ठीक उसी तरह, जैसे रात को कभी-कभी उल्का का उत्पन्न प्रकाशमान पथ।

तीन गेंदों के साथ प्रयोग. बल जब किसी पिंड पर क्रियाशील होता है, वह पिंड का वेग बढ़ाने लगता है, अर्थात् वह पिंड को त्वरण संप्रेषित करता है। विदित है कि त्वरण द्रव्यमान और क्रियाशील बल पर निर्भर करता है। द्रव्यमान जितना अधिक होगा, पिंड में उतना ही जड़त्व होगा और उसे आवश्यक त्वरण देने के लिये उतने ही बड़े बल की आवश्यकता होगी।

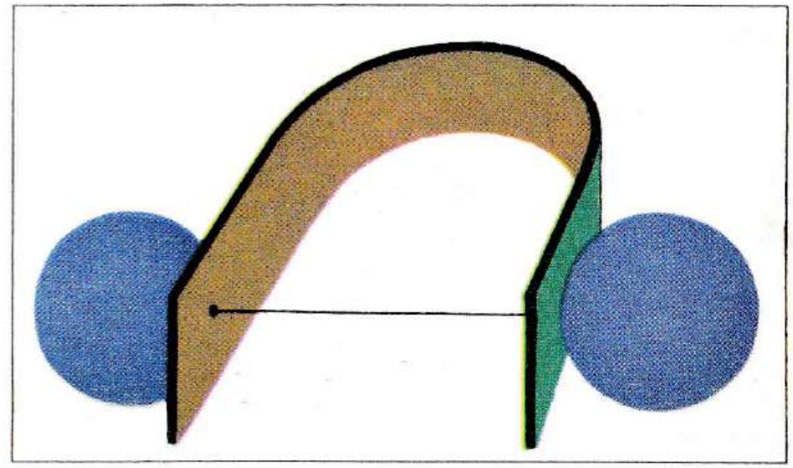
पृथ्वी से कृत्रिम स्पूतनिक या राकेट छोड़ने के लिये उसे आवश्यक अंतरिक्षी वेग तक त्वरित करना पड़ता है (यदि यान को पृथ्वी के गिर्द कक्षक पर भेजा जा रहा है, तो जैसा कि पहले बताया जा चुका है, उसे प्रथम अंतरिक्षी वेग – करीब 7.9 किलोमीटर प्रति सेकेंड – प्रदान करना पड़ता है)। जब वेग आवश्यक मान तक पहुँच जाता है, चलित्र अपना काम बंद कर देते हैं, स्पूतनिक या यान जड़त्व के कारण समरूप वेग से चल पड़ता है।

लेकिन बल पिंड पर अत्यल्प काल के लिये (जैसे एक धक्के के रूप में) भी लग सकता है। बल की ऐसी अल्प क्रिया के बाद पिंड जड़त्व के कारण गतिमान हो जायेगा।

अभी हम इसी तरह के प्रयोग करेंगे।

दुकान से रबड़ की एक ही तरह की तीन छोटी गेंदें खरीद लें (व्यास करीब 6 सेंटीमीटर हो)। एक में चाकू भोंककर दरार बना दीजिये, जो एक सेंटीमीटर से लंबा नहीं हो। इसमें शंकु घुसाकर गेंद में सूखी रेत कसकर भर दें और गोंद से चिपकाकर (बिना पैबंद के) छेद बंद कर दें। गेंद को हल्के से दबाने पर छेद का मुँह खुल जायेगा और आप आसानी से गोंद लगा सकेंगे।

गत्ते का एक टुकड़ा लीजिये, जो बहुत मोटा न हो, पर पर्याप्त प्रत्यास्थ (लचीला) हो। इसमें से करीब 40 सेंटीमीटर लंबी और 4–5 सेंटीमीटर चौड़ी पट्टी काट लीजिये। उसके एक सिरे में सूई से छेद करके धागा घुसा दीजिये, धागे के दूसरे



सिरे पर गाँठ लगा दीजिये, ताकि वह छेद से निकल न जाये। पट्टी को मोड़कर नाल की शक्ल दे दीजिये। उसे मोड़िये बहुत सावधानी से, नहीं तो मोड़ पर वह टूट जा सकता है। दूसरे सिरे पर भी सूई से छेद करके उसी धागे का दूसरा सिरा घुसाकर दूसरी तरफ से गाँठ बाँध दीजिये। आपको एक धनुष मिल जायेगा, जिसकी आकृति वर्ण U की तरह होगी।

अब प्रयोग शुरू करते हैं। गत्ते का धनुष कमरे के चिकने फर्श पर रख दें और उसके सिरों के पास दोनों तरफ एक-एक समान तरह की गेंद सटाकर रख दें। जलती तीली की लौ धनुष की डोरी के पास लायें; डोरी जल उठेगी और धनुष स्प्रिंग की तरह सीधा होगा और दोनों गेंदों को समान बल से क्षणिक धक्का देगा। गेंदें विपरीत दिशाओं में समान दूरियों पर जाकर रुकेंगी।

प्रयोग के बाद फिर से धनुष बनाइये (उसमें नया धागा लगा दीजिये)। इस बार उसके एक तरफ साधारण तथा दूसरी तरफ रेत से भरी गेंद सटाकर रखिये और पहले जैसा प्रयोग दुहराइये। धागा जैसे ही जलेगा, पट्टी सीधी होगी और गेंदों को विपरीत दिशाओं में धक्का देगी। पर गेंदें पहले की तरह समान दूरी तक नहीं लुढ़केंगी। रेत से भरी गेंद का द्रव्यमान बहुत अधिक है, इसलिये वह बहुत कम दूर जा पायेगी।

इन प्रयोगों के वक्त आग से सावधान रहियेगा। धागे को कैंची से भी काटा जा सकता है, पर इससे गेंदों को अतिरिक्त धक्के की संभावना होती है, जो अवांछनीय है।

गेंदों से राकेट तक. अभी जो प्रयोग आपने किया है, वह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण नियम दिखाता है, जिसपर कृत्रिम उपग्रहों, राकेटों और अंतरिक्ष यानों की उड़ान आधारित है। यह गतिमात्रा के संरक्षण का नियम है (गतिमात्रा को आवेग भी कहते हैं)।

भौतिकी के 'यांत्रिकी' नामक अध्याय में **गतिमात्रा (या आवेग)** एक गणितीय अवधारणा है और साथ ही न्यूटन के दूसरे गति-नियम की एक मूर्त्त अभिव्यंजना भी है।

यह अभिव्यंजना है: mv, अर्थात् पिंड के द्रव्यमान m और वेग v का गुणनफल।

जब हम समान द्रव्यमान वाली गेंदों के साथ प्रयोग कर रहे थे, वे समान बलों की क्रिया से समान दूरियों पर पहुँची थीं। यदि प्रत्येक गेंद के वेग में उसके द्रव्यमान से गुणा किया जाये, तो समान गुणनफल मिलेंगे। गेंदों की सिर्फ दिशाएं भिन्न थीं।

दूसरे प्रयोग में भी, जिसमें गेंदों के द्रव्यमानों और वेगों के गुणनफल समान होंगे। एक का द्रव्यमान अधिक था, पर वेग कम था; दूसरी का द्रव्यमान कम था, पर वेग अधिक था।

जब संवृत व्यूह (या तंत्र) में बल क्रियाशील होते हैं, तो वहां गतिमात्रा-संरक्षण का नियम लागू होता है। यदि फर्श और हवा के साथ घर्षण की उपेक्षा की जाये, तो हमारी गेंदें और धनुष भी एक संवृत तंत्र बनाते हैं।

उड़ते वक्त राकेट भी अपने आप में संवृत तंत्र होता है। वह अपने आंतरिक बल से गति करता है, बाहर से उसे कोई नहीं धकेलता।

जब वह उड़ने को होता है, उसकी गतिमात्रा शून्य होती है। जब उसके प्रतिकारी चलित्र काम शुरू कर देते हैं और उसकी टोंटियों से विशाल वेग के साथ उत्तप्त गैसें निकलने लगती हैं, राकेट ऊपर की ओर उड़ चलता है।

यदि इन गैसों के कुल द्रव्यमान में उनके वेग से गुणा कर दिया जाये, तो गुणनफल राकेट-काय के द्रव्यमान और वेग के गुणनफल के बराबर होगा। सिर्फ दिशाएं भिन्न होंगी: उत्तप्त गैसें पृथ्वी की ओर उड़ती हैं और राकेट पृथ्वी से दूर भागता है।

प्रतिकारी बेड़ा. शुरूआत एक ऐसे प्रयोग से करते हैं, जिसमें प्रतिकारी (जवाबी) गति को मूर्त्त रूप में देखा जा सके। प्रयोग काफी सरल है, पर इसकी सफलता के लिये तैयारी अच्छी तरह करनी पड़ती है।

प्रतिकारी गति के साथ प्रयोग

लकड़ी के 1.5 सेंटीमीटर मोटे तख्ते से 5 सेंटीमीटर चौड़ा और 10 सेंटीमीटर लंबा आयताकार टुकड़ा काट लीजिये। यह एक नन्हा-सा बेड़ा होगा और हमारे उपकरण का आधार भी होगा। उसकी चौड़ाई वाली भुजा की ओर बीच से फाड़ा हुआ एक काग पानी में अघुलनशील गोंद से चिपका दीजिये, फिर काँटी से भी ठोक दीजिये। काग इस तरह से जड़ना है कि उसकी निचली सतह आयत की निचली सतह के स्तर पर हो और ऊपरी सतह आयत से कुछ ऊँचाई पर हो (काग हल्की नर्म लकड़ी का होना चाहिये, जैसा बोतलों में लगाते हैं)।

गत्ते की दो सँकरी पट्टियां (आकार 0.5×10 सेंटीमीटर) काग से लेकर बेड़े की दूसरी किनारी तक चिपका देते हैं, ताकि बेड़े पर बीचों-बीच एक 5 मिलिमीटर चौड़ी नाली बन जाये।

एक ब्लेड लीजिये (बेहतर होगा यदि कई ब्लेड होंगे, क्योंकि वे बहुत आसानी से टूट जाते हैं)। उसे यथासंभव मोड़कर धनुषाकार रूप में डोरी से बांध दीजिये (जैसा कि पिछले प्रयोग में गत्ते के धनुष के साथ किया था)। यहां ब्लेड स्प्रिंग

का काम करेगा। उसे काग के पास इस तरह रखिये कि उसकी झुकी पीठ बेड़े पर टिकी रहे और सिरे ऊपर हों। एक सिरा तार के सहारे काग से कसकर बांध दीजिये।

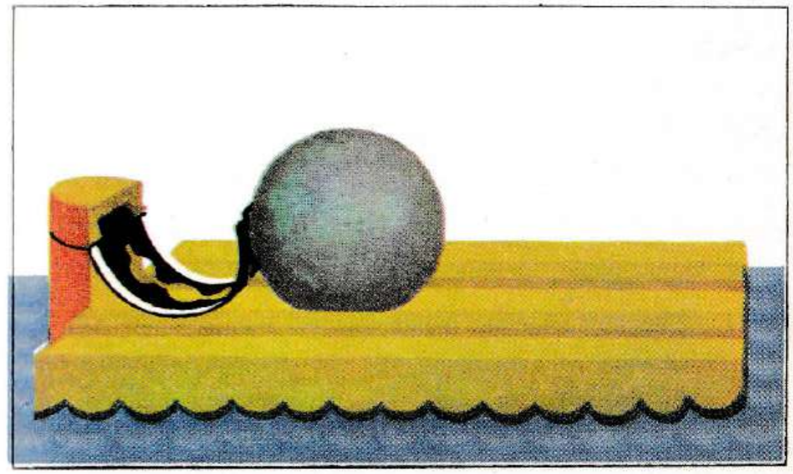
इस प्रयोग के लिये लकड़ी या प्लास्टिक की तीन सेंटीमीटर व्यास वाली एक गोली भी चाहिये। गोली का भार 10 ग्राम से अधिक नहीं होना चाहिये। लकड़ी की गोली से एक फ़ायदा है कि वह डूबती नहीं है – तालाब के किनारे इससे प्रयोग करने में आसानी होगी। पर प्रयोग आप चौड़े कठौते, टब या बाल्टी में भी कर सकते हैं। जरूरी बात यह है कि पानी की सतह शांत हो, उसपर लहरें, तेज हवा या धारा न हो।

बेड़े को पानी पर रख दीजिये, ब्लेड मुड़ी हुई स्थिति में तैयार रहे; गत्ते की पट्टियों से बनी नाली में गोली को ब्लेड से सटाकर रख दें। जब बेड़ा हिलना-डुलना बंद करके शांत हो जाये, ब्लेड के सिरों को बांध कर रखने वाले धागे के पास जलती तीली की लौ लाइये (इस तरह कि तीली धागे या ब्लेड को स्पर्श न करे)। धागा जल जायेगा, ब्लेड सीधा होगा और गोली पर चोट करेगा। गोली बेड़े पर लुढ़कती हुई पानी में पहुँच जायेगी और बेड़ा विपरीत दिशा में चल पड़ेगा।

यह पिछले प्रयोग की तरह ही है, जिसमें गत्ते का धनुष दो गेंदों पर चोट करता था और गेंदें विपरीत दिशाओं में चल पड़ती थीं। इस प्रयोग में भी यही हुआ है; फर्क यही है कि दूसरी गेंद की भूमिका बेड़ा खुद निभाता है। दोनों ही उदाहरणों में प्रतिकारी गति का सिद्धांत काम करता है।

बेड़े से भागी हुई गोली ईंधन-दहन के उत्पादों की तरह है, जो राकेट की टोंटियों से निकलते हैं। ब्लेड सीधा होते वक्त एक ही साथ गोली को भी दबाता है और 'दहन-कक्ष' की दीवार – काग – को भी (जिसके साथ वह बंधा हुआ है)। ब्लेड के दबाव में आकर गोली हमारे प्लवमान 'राकेट' से निकल पड़ती है और 'दहन-कक्ष' के सामने की दीवार इस दबाव से विपरीत दिशा में चल पड़ती है।

उड़ान के वक्त राकेट में ईंधन छोटे-से अंतराल में लगातार जलती रहती है। नीचे की ओर टोंटी से, जिसका मुँह निरंतर चौड़ा होता जाता है, दहन के उत्पाद बहुत बड़े दाब और वेग के साथ निकलते हैं। इससे राकेट त्वरित होता रहता है,



जबतक वह आवश्यक वेग नहीं प्राप्त कर लेता। उसकी गति गैस की फुहार की विपरीत दिशा में होती है।

राकेट कार्यरत इंजन के सहारे निर्वात व्योम में भी उड़ सकता है। दहन-कक्ष में ईंधन को जलने के लिये आक्सीजन की आवश्यक मात्रा मिलती रहती है। राकेट सिर्फ प्रतिकारी बल के कारण उड़ता है, न कि हवा को धक्का देकर।

प्रतिक्षेप (उल्टी दिशा में फेंका जाना) बंदूक से गोली निकलते वक्त भी होता है। गोली एक दिशा में निकलती है और बंदूक दूसरी दिशा में गति प्राप्त करती है। लेकिन गोली (या तोप के गोले) का द्रव्यमान बंदूक (या तोप) की तुलना में बहुत कम होता है। अलग-अलग भार वाली गेंदों का प्रयोग याद करें: कौनसी गेंद ज्यादा दूर भागती है? वह, जिसका द्रव्यमान कम होता है।

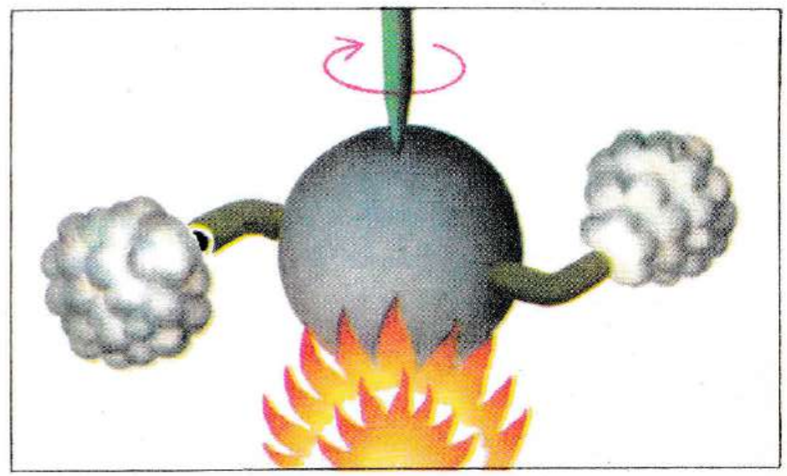
शुरुआत हुई थी खिलौने से. आश्चर्य की बात है कि प्रतिकारी गति, जिसका आज विमानन और अंतरिक्षी उड़ानों में विस्तृत उपयोग हो रहा है, प्राचीन काल से ही ज्ञात थी।

लेकिन उनका उपयोग मनोरंजक खिलौनों तक ही सीमित था। इस तरह की फिरकी का वर्णन मिलता है, जो वाष्प की फुहार निकलने के कारण घूमती थी, उसकी बनावट बहुत सरल थी। गोल बर्तन में पानी भरकर उसे आग पर चढ़ाया जाता था। पानी खौलता था और भाप में बदलकर तेजी से पार्श्व की दो मुड़ी हुई नलियों से निकलने लगता था। बर्तन दो उदग्र

धुरियों के सहारे घूर्णन कर सकता था। नलियों के मोड़ पर प्रतिकारी बल उत्पन्न होता था और बर्तन तेजी से नाचने लगता था। लेकिन उस जमाने में किसी ने सोचा भी नहीं था कि प्रतिकारी गति चांद, मंगल, गुरु, शुक्र और बुध पर यान भेजने में आदमी की सहायता करेगी।

ऊपर वर्णित खिलौने में प्रतिकारी गति का उपयोग करके इसकी संभावनाओं की प्रथम खोज ग्रीस में अलेक्सांद्रिया के हेरोन ने की थी। उनका जीवनकाल प्रथम ईसवी शती है।

1750 में हंगेरियन वैज्ञानिक यानोश सेग्नेर ने एक उपकरण बनाया, जो पानी की फुहार निकलने की प्रतिकारी शक्ति से नाचता था। इसे सेग्नेर-चक्र कहते हैं और आज हर स्कूल की भौतिकीय प्रयोगशाला में आवश्यक रूप से दिखाया जाता है।



जब बारूद का आविष्कार हुआ, इससे आतशबाजी के राकेट और अन्य खिलौने बनाये जाने लगे। खिलौने के राकेट का उपयोग युद्ध में संकेत देने के काम आने लगा और 19-वीं शती में राकेट अस्त्र के रूप में प्रयुक्त होने लगा।

इसके बाद लोगों के उड़ने के लिये अधिक शक्तिशाली राकेटों के उपयोग का विचार उत्पन्न हुआ। क्रांतिकारी निकोलाई किबाल्चिच ने मृत्युदंड के कुछ पहले जेल में बैठे-बैठे लोगों के उड़ने के लिये राकेट का प्ररेख रचा।

अंतरिक्ष में आदमी की उड़ान को पूर्ण वैज्ञानिक आधार कोन्स्तांतीन त्सियोल्कोव्स्की ने प्रस्तुत किया। उन्होंने दूसरे ग्रहों पर उड़ान के बारे में एक पूरे विज्ञान को जन्म दिया। उन्होंने हिसाब लगाया कि इसके लिये कैसे यान होने चाहिये, किस तरह का इंधन होना चाहिये, ऐसी उड़ानों के लिये कैसा पथ और कैसा वेग चाहिये।

अभी हमारे यहां और संयुक्त राज्य अमरीका में राकेटी तकनीक बहुत अधिक विकसित है। आप हमारे और अमरीकी अंतरिक्ष-यात्रियों की उड़ानें देख चुके हैं। प्रगतिशील विचारधारा के लोग प्रयत्न कर रहे हैं कि राकेटी तकनीक सिर्फ विज्ञान के विकास और मानव-जाति के कल्याण में प्रयुक्त हो।

हमारे दिनों पृथ्वी के सैकड़ों स्पूतनिक पृथ्वी के निकटवर्ती व्योम के अध्ययन में हमारी सहायता कर रहे हैं। वे पृथ्वी के एक सिरे से दूसरे सिरे तक बड़ी-बड़ी दूरियों पर टेलीवीजन-कार्यक्रम के प्रसार तथा टेलीफोन व टेलीग्राफ-संचार में भी सहायता

करते हैं, मौसम में होने वाले परिवर्तनों और खतरनाक आंधियों के शुरू होने की चेतावनी देते हैं। और सोवियत तथा अमरीकी अंतरिक्ष-यानों की चांद व सौर-मंडल के ग्रहों तक की उड़ानें? कृत्रिम स्पूतनिक चांद, मंगल और शुक्र के गिर्द चक्कर काटते हैं और उनके बारे में मूल्यवान वैज्ञानिक सूचनाएं भेजते रहते हैं।

प्रतिकारी गति सिर्फ अंतरिक्ष में ही प्रयुक्त नहीं होता। लगभग सभी आधुनिक विमान प्रतिकारी गति के सिद्धांत पर ही आधारित हैं। इससे बचत होती है, यह तेज और विश्वसनीय है।

क्या हेरोन अपना घूर्णनरत प्रतिकारी खिलौना देखकर इन सब बातों की कल्पना कर सकते थे? यहां तक कि भौतिकविद सेग्नेर ने भी अपना विख्यात 'चक्र' प्रदर्शित करते वक्त इस उपकरण और इसके आधार – प्रतिकारी गति – को शायद ही इतना महत्त्व दिया था!

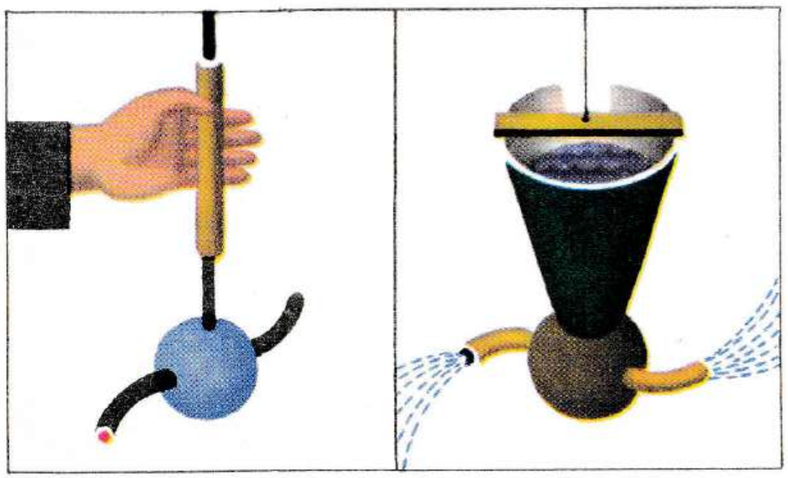
प्रतिकारी फिरकियों के साथ प्रयोग. इन प्रयोगों में हम हेरोन का ऐतिहासिक खिलौना और सेग्नेर का भौतिकीय उपकरण बनायेंगे।

पहले घूर्णनरत वर्तुल का प्रतिमान बनाते हैं। यह वर्तुल वाष्प से नहीं, बल्कि हवा से घूर्णन करेगा, पर इसकी गति का सिद्धांत वही रहेगा।

टेबुल-टेनिस वाली सेलुलोयड की गेंद और डौट पेन के कुछेक खाली रेफिल लें। एक रेफिल लंबा होना चाहिये, बाकी छोटे भी हो सकते हैं अन्यथा उन्हें काटना होगा। पिलास से

उनकी निब निकाल लें, पतले तार के सिरे पर रूई लपेटकर स्पिरिट में भिगो लें और उन्हें भीतर से साफ कर लें। आठ सेंटीमीटर लंबे दो रेफिल लें और उन्हें छल्ले की आकृति में मोड़ें। बिल्कुल वृत्त बनाने की आवश्यकता नहीं है, जरूरी है कि वे चाप का रूप ग्रहण कर लें। उनके सिरों को धागे से धनुष की तरह बांध दें, ताकि वे अपने इस रूप के 'आदी' हो जायें। इसके बाद धागा हटा लेना होगा।

सेलुलोयड की गेंद में तीन नन्हें छेद बनाइये, जिनमें रेफिल कसकर अँट जायें। एक छेद ध्रुव पर कीजिये, और दो विषुवक पर ठीक आमने-सामने। उत्तरी ध्रुव पर बने छेद में लंबा रेफिल घुसाकर उसके चारों ओर का छेद प्लास्टिलीन चिपकाकर बंद कर दें। विषुवक पर बने छेदों में चाप की आकृति वाले रेफिल



घुसा दें – आधी दूरी तक, लेकिन इस तरह कि उनके बाहरी हिस्से विषुवक तल पर एक ही दिशा में मुड़े हों और लगभग गेंद की सतह के समांतर चलें। गेंद और रेफिलों के जोड़ पर प्लास्टिलीन चिपका दें। 5–6 सेंटीमीटर लंबी कागज की पट्टी लीजिये और उसे पतली नली के रूप में मोड़ लीजिये। पट्टी का सिरा चिपका दीजिये। नली को लंबे रेफिल पर पहना दीजिये। गेंद को टेबुल की चिकनी समतल सतह पर टिकाइये और कागज की नली इस तरह पकड़े रहिये कि उसमें स्थित लंबा रेफिल उदग्र खड़ा रहे। इसमें अब ऊपर से फूँकना शुरू कीजिये। बेयरिंग का काम कागज की नली करेगी, जिसे आप पकड़े हुए हैं। टेबुल की सतह नीचे से अक्षीय बेयरिंग का काम करेगी।

गेंद तेजी से नाचने लगेगी – चापाकार रेफिलों के मुड़ने की विपरीत दिशा में।

इस उपकरण में कई सुधार किये जा सकते हैं। लंबे रेफिल को गेंद के आर-पार किया जा सकता है (उसके 'दक्षिणी ध्रुव के पार')। उसके निचले छोटे भाग में उसकी पुरानी निब, जिसे पहले आपने निकाल लिया था, फिर से लगा दें। लंबे रेफिल के उस भाग में, जो गेंद के भीतर होगा, फूँकने पर हवा निकलने के लिये कई छेद बना दें। निब को लकड़ी के तख्ते में बने हुए हल्के से गड्ढे में टिकाकर उपकरण को स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है।

दूसरा ऐतिहासिक उपकरण – सेग्नेर-चक्र – बनाने की विधि निम्न है। गत्ते का एक शंकु बना लें। आधार (चौड़े भाग)

की परिधि के आर-पार लकड़ी का एक सँकरा पट्टा चिपका दीजिये। उसके बीच में पहले से एक छोटा-सा छेद बना लीजिये। शंकु के भीतर और बाहर पहले रोगन लेप दें। इसके बाद उसे तैल रंग से रंग दें; सूखने के बाद उस पर वार्निश की परत चढ़ा दें, ताकि शंकु में पानी ढालने पर गत्ता गीला न हो। लकड़ी की पट्टी के छेद में धागा घुसाकर नीचे गाँठ बांध दें और शंकु किसी ऐसी जगह लटका दें, जहां पानी गिरने से कुछ खराब न हो। शंकु का शीर्ष (जो अब नीचे है) क्षैतिज काटकर उससे पिछले प्रयोग की तरह तीन छेद वाली गेंद चिपका दीजिये, जिसका ऊपरी ध्रुव वाला छेद (इसे कुछ बड़ा करना होगा) शंकु के भीतर हो, विषुवक तल वाले छेदों में एक ही दिशा में मुड़े हुए चापाकार रेफिल लगे हों। गेंद और शंकु के जोड़ पर सेलुलोयड चिपकाने वाला कोई गोंद (जैसे नाइट्रोसेलुलोयड गोंद) लेप दें। फिर कागज के छोटे-छोटे टुकड़े वहां इस तरह से चिपकायें कि उनका कुछ भाग शंकु पर हो और कुछ भाग गेंद पर हो। इनके ऊपर भी जोड़ के अनुतीर कागज की छोटी-छोटी पट्टियां चिपका दें (उनका एक अर्ध शंकु पर हो और दूसरा गेंद पर हो, एक पट्टी की किनारी दूसरी पर चढ़ी हो)। चिपकाने के स्थान पर पतला धागा लपेटकर कुछेक परतें बनायें, हर परत पर कोई गोंद लेपते जायें। जब सब कुछ तैयार हो जाये, शंकु में पानी भर दें। घर्षण का बल और शंकु का जड़त्व दूर करने के लिये शंकु को रेफिलों के मोड़ की विपरीत दिशा में हल्का सा घूर्णन दीजिये।

यहां शंकु का आकार नहीं बताया गया है, लेकिन आप यह ध्यान रखें कि पानी का दाब गेंद को शंकु से अलग भी कर दे सकता है। इसके लिये तांबे का 0.5 मिलिमीटर व्यास वाला तार लीजिये, उसे लकड़ी की पट्टी के छेद से नीचे निकालकर गेंद के 'दक्षिणी (निचले) ध्रुव' के छेद से बाहर कर लें। इस सिरे को धातु के वाशर से गुजारकर काँटी या लकड़ी की कील पर लपेट लें। तार का ऊपरी सिरा लटकन-बिंदु से इस तरह जड़ना है कि उपकरण के घूर्णन से तार खुद ऐंठन न खाने लगे। इसके लिये लटकन-बिंदु पर पहले एक चूल जड़ते हैं, जो स्वतंत्र रूप से घूर्णन करता हो, फिर चूल के अंकुश से तार बांध देते हैं। यदि ऐसा चूल न हो तो लटकन-बिंदु से पतला धागा लटका लें और धागे से तार बांध दें।

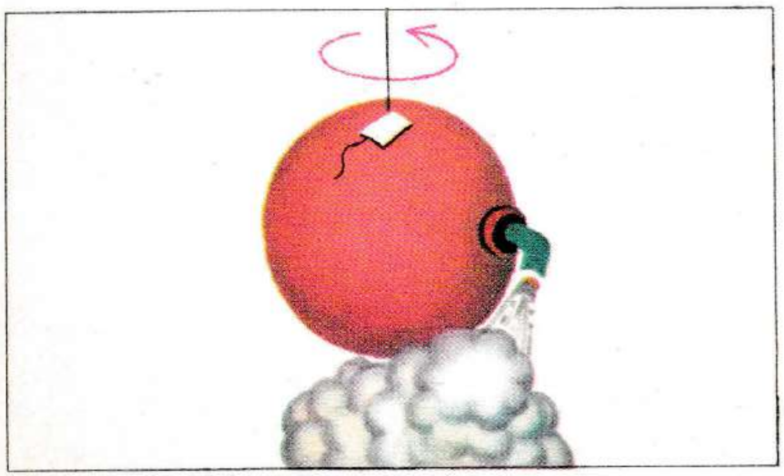
सेग्नेर-चक्र अब सिर्फ खिलौना नहीं रह गया है। खेतों या बागों में पानी पटाने के लिये इसका विस्तृत उपयोग हो रहा है। पानी की तेज धार की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप फुहार छोड़ने वाली चकरी नाचती रहती है। माली या किसान सिंचाई की हल्की मशीन किसी जगह पर रख देता है और पाइप को आगे बढ़ाता रहता है।

प्रतिकारी बैलून. प्रतिकारी गति पर आधारित घूर्णन के साथ प्रयोग खत्म करने से पहले निम्न प्रयोग करें। रबड़ का बैलून कसकर फुला लें। उसे धागे से बांधने के पहले छेद में मुड़ी हुई पतली नली घुसा लें। नली डौट पेन के खाली रेफिल से

बनायी जा सकती है। नली का बाहरी मुंह पहले ही जलती तीली से पिघलाकर बंद कर दें, ताकि हवा बाहर न निकले।

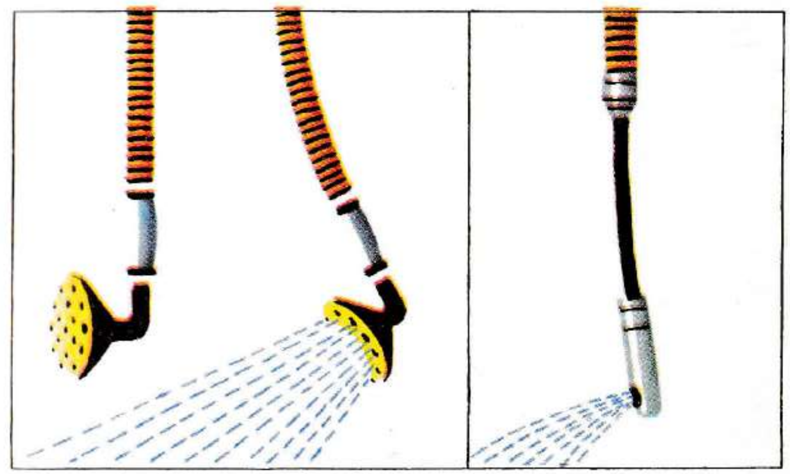
बगल से बैलून पर चिपकाऊँ प्लास्टिक से एक धागा चिपकाकर उसे लटका लें। इस तरह से मुड़ी हुई नली बैलून के विषुवक तल पर आ जाता है। विशेष ध्यान इस बात पर दीजिये कि नली की मोड़ क्षैतिज तल पर स्थित हो। जब बैलून का हिलना-डुलना बंद हो जाये, कैंची से नली का बंद मुँह काट लीजिये। हवा निकलने लगेगी और बैलून घूर्णन करने लगेगा।

यह प्रयोग बैलून को बिना लटकाये भी कर सकते हैं। कठौते में पानी भरकर उसमें बैलून रख दीजिये, वह एक ही जगह पर नाचता रहेगा। कठौते का व्यास बैलून से कम होना चाहिये।



प्रतिकारी फुहार. यदि आपके घर हाथ से काम में लाने लायक फुहारक है, तो इससे आप एक मनोरंजक प्रयोग कर सकते हैं (फुहारक नल से लगी हुई एक लचीली नली होती है, जिसके दूसरे सिरे पर हत्था होता है और हत्थे के बाद छोटे-छोटे छेद वाली चकती होती है, जिससे पानी फुहार के रूप में निकलता है ; यह स्नान के काम आता है)।

इसे टब के ऊपर उदग्र नीचे लटका दीजिये। हत्था और चकती पर्याप्त भारी होते हैं कि फुहारक उदग्र स्थिति में लटकी रहे। फुहारक चकती पर गुरुत्व-बल के अतिरिक्त कोई अन्य बल नहीं लग रहा है। पर नल खोलते ही चकती समेत हत्था उदग्र स्थिति से फुहार की विपरीत दिशा में विचलित हो जाता है। फुहारक में चकती तक पहुँचने के लिये पानी जिस जगह मुड़ता



है, वहां प्रतिक्रियात्मक बल क्रियाशील हो जाता है, जो फुहारक को उदग्र स्थिति से विचलित करता है।

सब के यहां ऐसा फुहारक नहीं होगा, इसलिये ऊपर वर्णित प्रयोग अन्य प्रकार से भी किया जा सकता है।

डौट पेन का प्लास्टिक निर्मित काय रबड़ की पतली नली से लटका लीजिये। उसके बड़े छेद में नली घुसी होनी चाहिये। सँकरा छेद, जिसमें से निब निकलती है, लकड़ी (तिनके) के काग से बंद करनी होगी। काय में पार्श्व से एक छेद कर लीजिये।

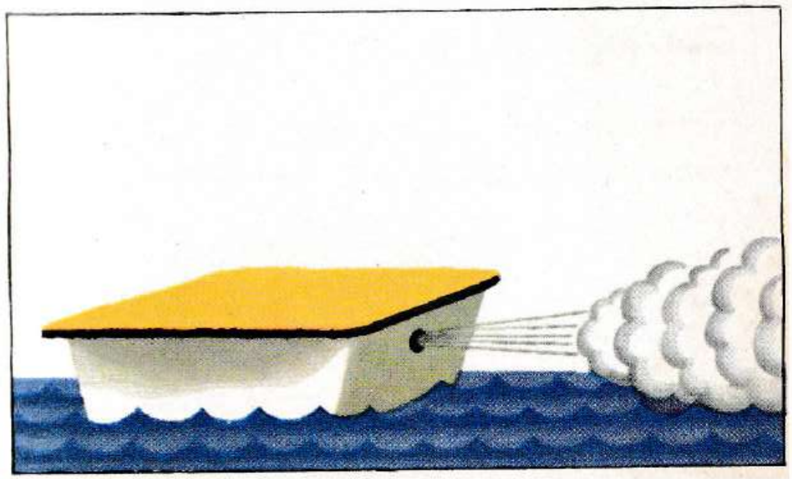
नली में यदि पानी बहाने लगेंगे, तो पानी पार्श्व-छिद्र से पतली धार के रूप में बहता हुआ सामने की दीवार पर प्रतिकारी बल उत्पन्न करेगा, जो रबड़ की नली को उदग्र स्थिति से विचलित कर देगा। यहां भी वही होता है, जो फुहारक के साथ होता है। धार बहने की प्रतिक्रिया का बल काम करने लगता है।

यदि आपके यहां पानी का नल नहीं है, तो पानी की धार निकालने के लिये आवश्यक दाब निम्न विधि से उत्पन्न कर सकते हैं: नली काफी लंबी लीजिये, और पानी का बर्तन ऊँचाई पर रख दीजिये। नली का स्वतंत्र सिरा इसी बर्तन में पेंदी तक पहुँचा दीजिये। दूसरे सिरे (पार्श्व-छिद्र) से थोड़ा चूसिये, पानी धार के रूप में बह निकलेगा और तबतक बहता रहेगा, जबतक दूसरा सिरा पानी में डूबा रहेगा। इस तरह की प्रयुक्ति को सायफन कहते हैं।

प्रतिकारी जहाज. यह कोई अंतरिक्ष-यान नहीं है, यह पानी पर तैरने वाला एक खिलौना है। काम भी करता है यह बिल्कुल साधारण इंधन से। और भी सही कहें, तो इसके गतिकारी बल का स्रोत है... कार्बन डायक्साइड।

प्लास्टिक की डिबिया लीजिये। ऐसी, जिसका ढक्कन अच्छी तरह कसकर बंद होता हो। विश्वसनीयता के लिये डिबिया की किनारी पर प्लास्टिलीन की एक परत लेप लीजिये। आवश्यक है कि यदि डिबिया में पानी भरकर ढक्कन बंद कर दिया जाये और डिबिया उलट दी जाये, तो पानी बाहर न रिसने लगे।

डिबिया में ठीक ढक्कन के नीचे खूब गर्म काँटी से एक छेद बना लीजिये।



प्रयोग के लिये शुष्क बर्फ के कुछ टुकड़ों की जरूरत पड़ेगी, जिनका कुल आयतन मुर्गी के अंडे से अधिक न हो।

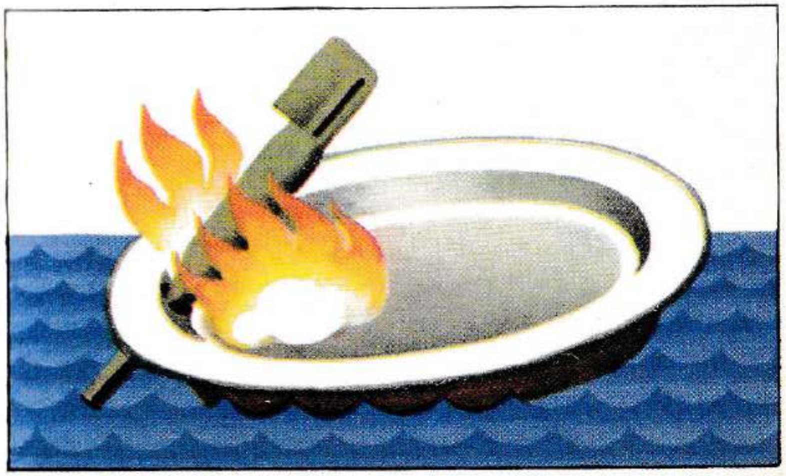
डिबिया में पेंदी पर धातु का एक पतला गोल पत्तर रख दीजिये और उसपर शुष्क बर्फ के कुछ टुकड़े समरूपता से फैला दीजिये। उनपर खौलता पानी ढाल दीजिये और तेजी से ढक्कन बंद करके डिबिया को पानी की सतह पर रख दीजिये। कार्बन डायक्साइड तेजी से वाष्पित होने लगेगा और फुहार के रूप में छेद से निकलने लगेगा। डिबिया विपरीत दिशा में चल पड़ेगी।

पहले शुष्क बर्फ की जगह खल्ली के टुकड़े रखकर अभ्यास कर लीजिये, यह जानने के लिये कि डिबिया में कितना पानी ढालना चाहिये। डिबिया को एक तरफ झुका हुआ नहीं होना चाहिये और छेद को पानी की सतह से ऊँचा रहना चाहिये।

स्पंदी जहाज. आप जानते हैं कि जब राकेट पृथ्वी से विदा लेता है, वह धीरे-धीरे, क्रमिक रूप से त्वरित होता है। उसके इंजन अलग-अलग चरणों पर काम शुरू करते हैं और एक लंबी दूरी के दौरान धीरे-धीरे वेग बढ़ाते हैं। क्रमिक वेग-वृद्धि, क्रमिक त्वरण आवश्यक है, ताकि अंतरिक्ष-यात्री का स्वास्थ्य अच्छा रहे, उपकरण खराब न हो जायें।

आपको याद है, कैसे जूल वेर्न के उपन्यास "पृथ्वी से चांद पर" के पात्र तोप के गोले में बैठकर अंतरिक्ष-यात्रा के लिये रवाना हुए थे? तोप की नली से निकलते वक्त उनका वेग 16 किलोमीटर प्रति सेकेंड था और यह वेग तोप की सिर्फ

210 मीटर लंबी नली में चलकर अर्जित की गयी थी। विज्ञान के विख्यात प्रचारक या. पेरेलमान ने हिसाब लगाया कि इतने छोटे पथ पर वेग 0 से 16 किलोमीटर प्रति सेकेंड बढ़ाने से एक भी यात्री जीवित नहीं बचता। लेकिन कथाकार की कल्पना क्षम्य है, क्योंकि इसके बिना एक भी कहानी नहीं लिखी जा सकती, वह भी खासकर वैज्ञानिक गल्प। लेकिन वास्तविकता कभी-कभी कल्पना को भी पीछे छोड़ जाती है। जूल वेर्न के यात्री चांद की सैर भी कर आये। यह बात और है कि वे तोप पात्रों ने चांद की सिर्फ परिक्रमा ही की थी, अमरीकी अंतरिक्ष-के गोले में नहीं, राकेट में उड़े थे, जो उन्हें जमीन से चांद तक सही सलामत पहुँचा सका था।



एक जमाने में एक सुंदर खिलौना हुआ करता था – स्पंदी बोट। वह धक्के खा-खा कर चलता था। धक्के एक के बाद एक लगते थे, बोट का वेग बढ़ता जाता था – तबतक, जबतक पानी का प्रतिरोध और बोट को गति देने वाला बल संतुलित नहीं हो जाते थे। तब बोट स्थिर वेग से चलने लगता था।

किस चीज से बोट चलता था? बोट धातु का, करीब 12–15 सेंटीमीटर लंबा होता था। भीतर पीतल का एक चपटा वाष्पित्र होता था; इससे पीतल की ही एक नली निकलती थी, जिसका दूसरा सिरा पानी में डूबा रहता था। बोट को पानी पर रखने के पहले ड्रौपर से उसके वाष्पित्र में पानी की कुछ बूंदें डाल दी जाती थीं (नली के सहारे)। वाष्पित्र के नीचे स्पिरिट में भीगी रूई की बाती जलाती थी, और बोट को पानी पर तैरा देते थे। वाष्पित्र में पानी खौल उठता था और नली के सहारे वाष्प की तेज धार के रूप में निकलता था। इससे प्रतिकारी धक्का उत्पन्न होता था और बोट आगे बढ़ता था। लेकिन वाष्पित्र से वाष्प के निकलते ही उसमें रिक्तता उत्पन्न हो जाती थी और बाहर का पानी नली के सहारे खिंचकर भीतर चला आता था। आग तो जलती ही रहती थी, इसलिये वाष्पित्र पर्याप्त गर्म रहता था जिसके कारण नया पानी भी तुरंत वाष्प बनकर बाहर निकल आता था। बोट को आगे की ओर नया धक्का मिलता था। यह क्रिया तबतक चलती रहती थी, जबतक आग जलती रहती थी। खिलौना दिलचस्प है और बहुचरणी राकेट की याद दिलाता है। यदि पानी का प्रतिरोध

नहीं होता, तो उसे बहुत बड़े वेग तक त्वरित किया जा सकता। हम इस बोट का एक सरलीकृत प्रतिरूप बना सकते हैं।

डौट पेन के लिये धातु का एक मोटा रेफिल भी होता है। ऐसे ही एक खाली रेफिल से उसकी प्लास्टिक की डाट और उसकी निब निकाल लीजिये। स्पिरिट में भीगी रूई से भीतर की स्याही भी साफ कर लीजिये। इसके बाद रेफिल के मोटे भाग में से करीब तीन सेंटीमीटर लंबा एक टुकड़ा काट लीजिये (धातु काटने की आरी से) और बचे हिस्से के मोटे सिरे को पिलास से करीब 3 मिलिमीटर पकड़कर दबा दीजिये, दो-तीन बार मोड़कर अच्छी तरह से चिपका दीजिये (यह सिरा बंद हो जायेगा)।

इस तरह आपको एक नली मिलेगी, जिसका मोटा भाग 5 सेंटीमीटर लंबा होगा (इसका सिरा बंद होगा) और पतला भाग 1.8 सेंटीमीटर लंबा होगा।

टिन के एक ढक्कन की एक किनारी थोड़ा सा सीधा कर लीजिये, वहां एक छेद करके उसमें रेफिल का पतला सिरा घुसा दीजिये; उसे पतले तार की सहायता से जड़ दीजिये, ताकि वह तिरछा खड़ा रहे और छेद से निकल न सके।

जब ढक्कन पानी पर तैरे, तो रेफिल का पतला सिरा पानी में डूबा रहे। अब 'वाष्पित्र' (रेफिल) में पानी भर देना है और उसके नीचे किरासन में भीगी रूई रख देनी है। किरासन जलाने से कालिख बहुत बनती है, अतः प्रयोग खुले स्थान में करना चाहिये।

रेफिल में पानी भरने का तरीका यह है: ऐसा ड्रौपर चुन लीजिये, जिसका सिरा रेफिल के पतले सिरे में घुस जाये। ड्रौपर में पानी भरकर उसे रेफिल में घुसा लीजिये और ड्रौपर के दूसरे (खुले) सिरे से कसकर फूँक मारिये। वाष्पित्र भरने का एक और तरीका है: जलती सलाई से उसे गर्म कर लीजिये और पानी में डुबो दीजिये; भीतर की गर्म हवा सिकुड़ेगी और पानी भीतर चला जायेगा।

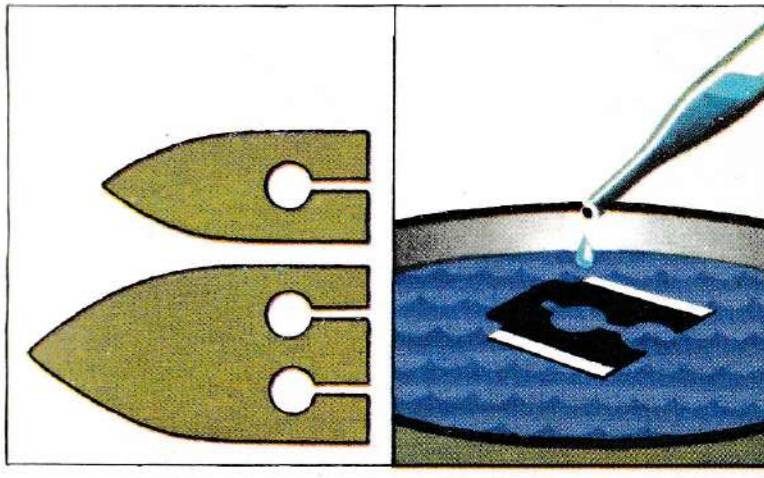
अब बोट चलाने के लिये एक बड़ा कठौता पानी से भर दीजिये। जब किरासन से भीगी रूई की लपट वाष्पित्र को अच्छी तरह गर्म कर देगी, हमारा बोट चलना शुरू कर देगा। उसका पथ गोलाकार होगा, क्योंकि ढक्कन से लटकती रेफिल की नली जब पानी में डूबी होती है, तो वह नाव को घुमाने के लिये पतवार का काम करती है। इसके अतिरिक्त रेचक नली (रेफिल) ठीक-ठीक ढक्कन के केंद्र की सीध में होगी – इसकी संभावना भी कम ही है। कुल मिलाकर ये ही बातें बोट को गोल पथ पर घूमने को विवश करती हैं। रेफिल से वाष्प के रेचन की आवृत्ति बहुत अधिक नहीं होगी, पर बोट चलाने के लिये पर्याप्त रहेगी। बोट तबतक चलती रहेगी, जबतक आग जलती रहेगी।

नियंत्रणीय सूक्ष्म राकेट. इसे अंतरिक्ष का सूक्ष्म प्रतिमान कह सकते हैं। इसे हम पानी की सतह पर चलायेंगे। इसकी गति प्रतिकारी बल पर आधारित होगी।

कठौते में पानी की सतह पर मोटे कागज से काटकर बनाया

हुआ राकेट रख दीजिये। इसका एक सिरा नुकीला होना चाहिये, और दूसरे, दुम वाले, सिरे पर छोटी सी नाली काट लेनी चाहिये, जिसका भीतरी सिरा गोल कक्ष की तरह हो (यह दहन-कक्ष होगा)। कक्ष का व्यास नाली की चौड़ाई से दुगुनी होनी चाहिये। नली के बाहरी सिरे को त्रिभुज के रूप में धीरे-धीरे चौड़ा होना चाहिये; यह टोंटी होगी।

एक छोटे बर्तन में साबुन घुला हुआ पानी पहले से तैयार रखिये। ड्रौपर में साबुनी पानी भरकर 'दहन कक्ष' में एक बूंद डालिये। साबुनी पानी स्वच्छ पानी की सतह पर तेजी से फैलता है; वह नाली और टोंटी से होकर बाहर बह जाता है और साथ ही 'दहन कक्ष' की सामने वाली दीवार पर दबाव डालता है और राकेट आगे बढ़ जाता है।



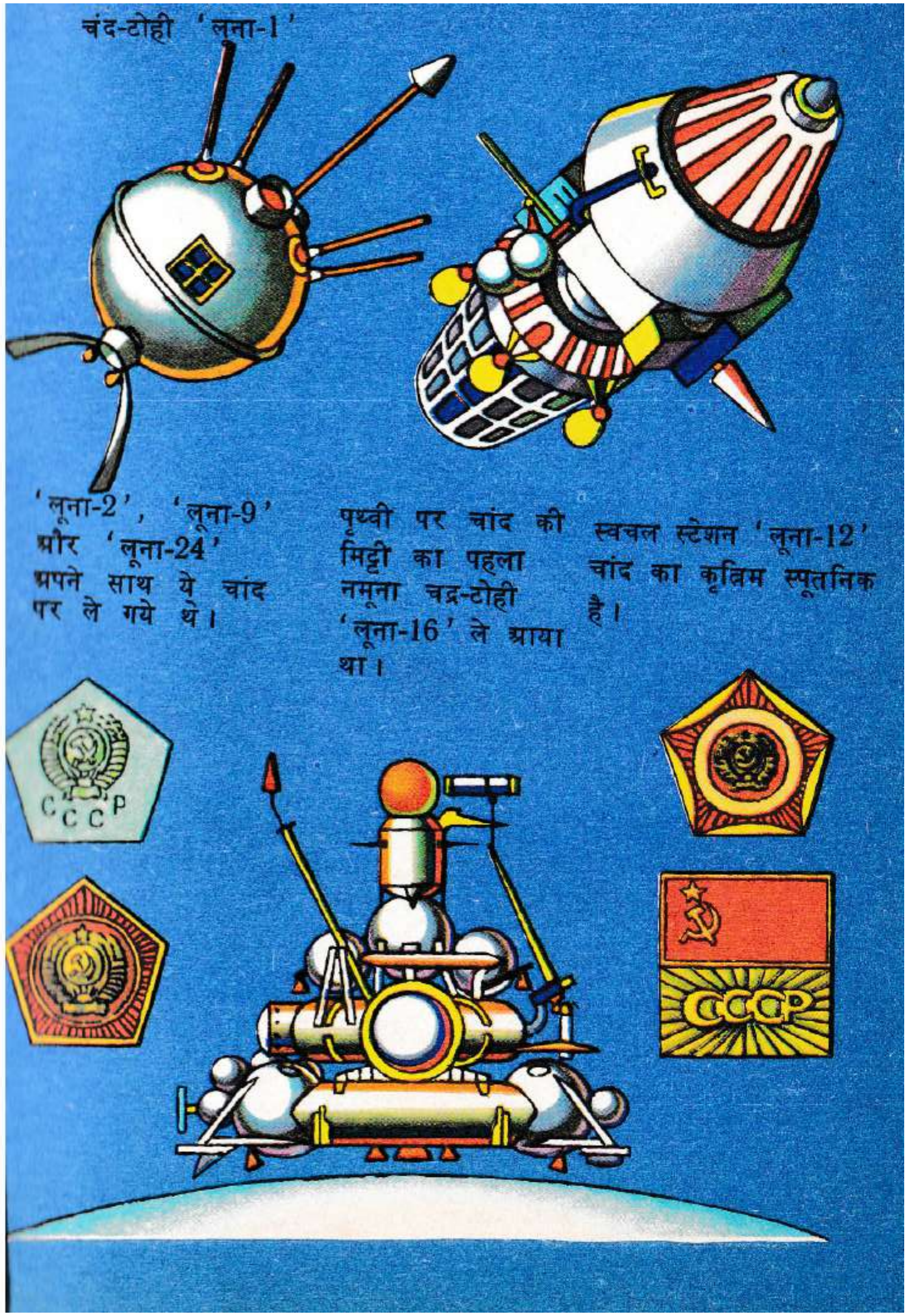
अब नियंत्रणीय सूक्ष्म राकेट बनाइये। इस बार कागज से कुछ चौड़ा 'राकेट' काटिये, जिसमें दो 'दहन-कक्ष' हों; इन कक्षों से अलग-अलग निकास-नलियां बना लीजिये, जिनके बाहरी सिरों पर टोंटियां हों।

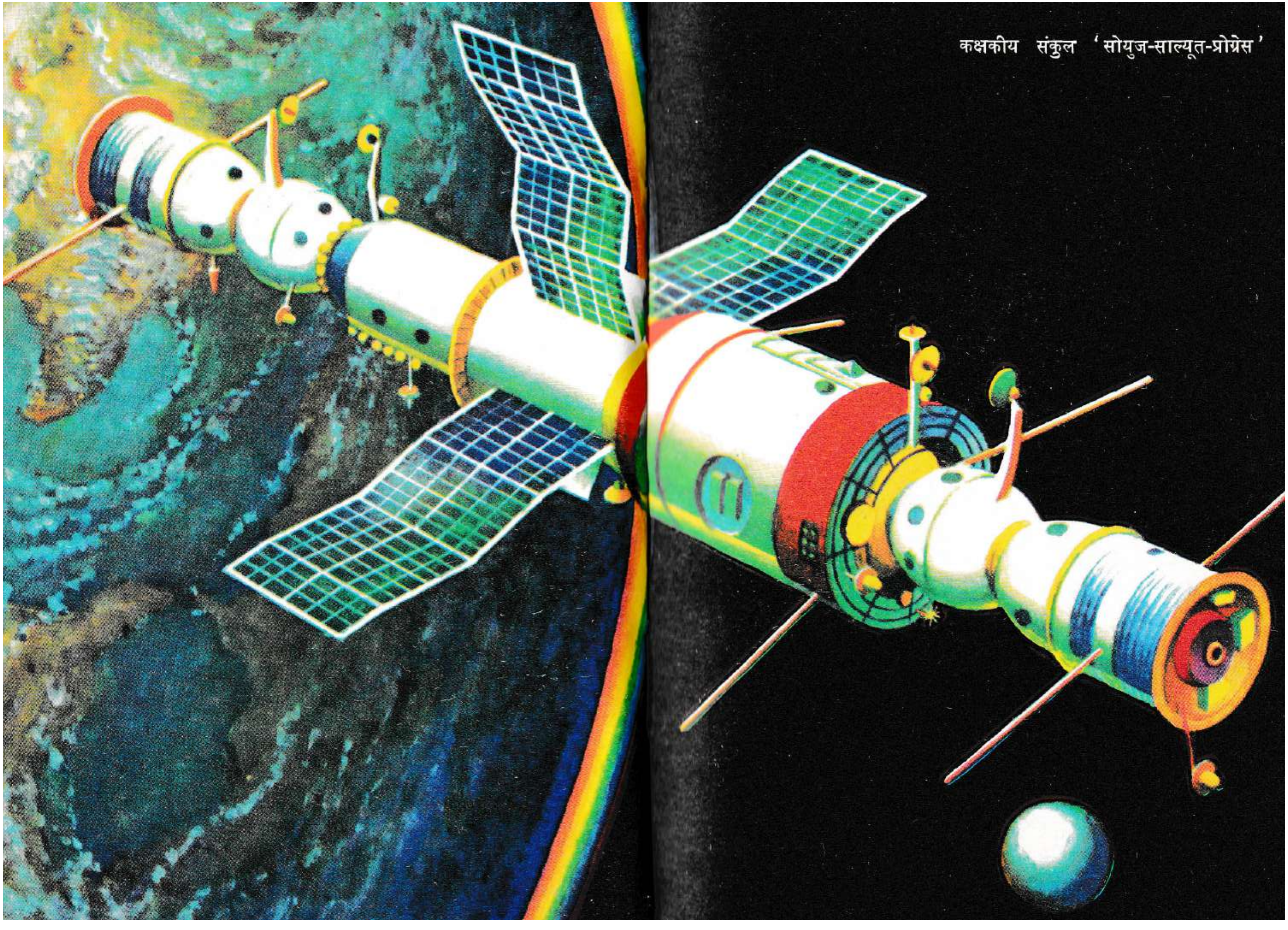
यदि साबुनी पानी की बूंद दायें 'दहन-कक्ष' पर डालेंगे, तो राकेट वक्र पथ पर बायीं ओर चल पड़ेगा और यदि बायें कक्ष पर डालेंगे, तो राकेट दायीं ओर चल पड़ेगा। दोनों दहन-कक्षों पर एक साथ डालने पर राकेट सीधा आगे चलने लगेगा।

अफसोस यही है कि पानी की सतह जल्द ही साबुनी पानी से छा जाती है, फिर नयी बूंदें डालने पर राकेट कोई प्रतिक्रिया नहीं करता। इसलिये हर 'उड़ान' के बाद कठौते का पानी बदलना पड़ता है।

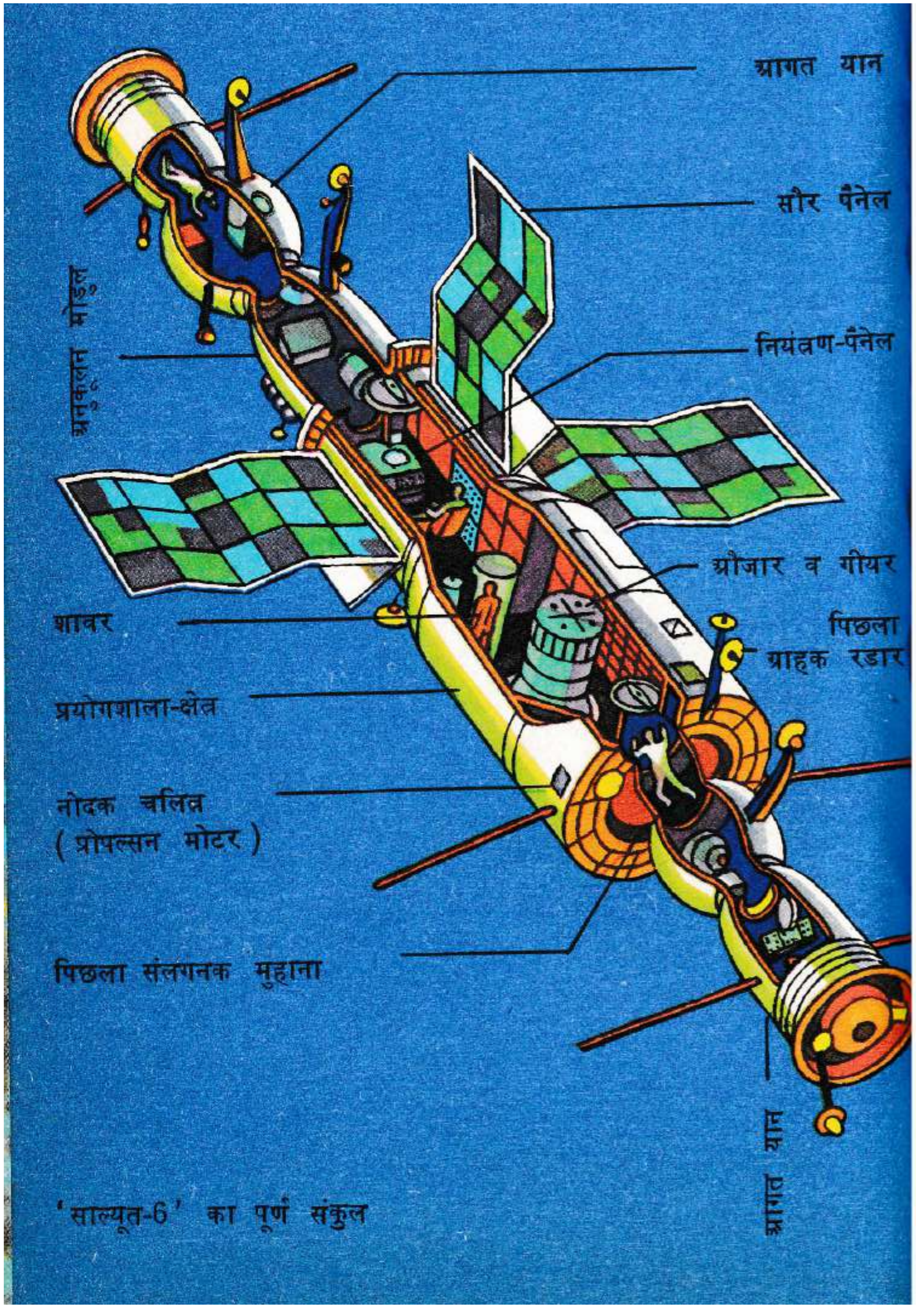
आप धातु का राकेट भी बना सकते हैं। लकड़ी के तख्ते पर ब्लेड का चौड़ा सिरा अड़ा दीजिये और दूसरे सिरे पर कागज लपेटकर (ताकि उंगली नहीं कटे) उसे इस तरह मोड़ें कि वह टूट जाये। आधे ब्लेड को सावधानी से पानी की सतह पर रखें। वह तैरता रहेगा। उसके गोल कटे भाग में ड्रौपर से साबुनी पानी की बूंद डालने पर ब्लेड आगे बढ़ जायेगा।

जलवात राकेट. यह राकेट इंजीनियर यू. मोरालेविच ने बनाया था और बच्चे इसे बहुत पसंद करते थे। इसकी बनावट बहुत सरल थी, उड़ता बहुत अच्छा था और इसे उड़ाने में कोई खतरा भी नहीं था।





कक्षकीय संकुल 'सोयुज-साल्यूत-प्रोग्रेस'



'साल्यूत-6' का पूर्ण संकुल

यह राकेट (जिसे हम अभी बनाना शुरू करेंगे) 20–25 मीटर की ऊँचाई तक उड़ सकता है। बेशक, इसे बहुत सावधानी से बनाना होगा, तभी यह बहुत बार उड़ सकेगा और इससे उड़ाने वाले के साथ-साथ देखने वालों को भी खुशी होगी।

इसे बनाने के लिये क्या-क्या चाहिये? सारी आवश्यक सामग्रियां पहले से ही जमाकर लीजिये, ताकि जरूरत पड़ते ही वे मिल जायें।

निम्न वस्तुओं की आवश्यकता होगी:

1. नायलन के कई बेकार मोजे।
2. धागे की खाली रील।
3. रबड़ के तीन निपुल।
4. लकड़ी के पत्तर के तीन टुकड़े (1–1.5 mm मोटा)।
5. जलरोधक गोंद। यह आप सेलुलोयड के टूटे-फूटे खिलौने, कंघियां या फोटोग्राफी की धोकर सुखायी हुई खराब फिल्म आदि एसीटोन या एमील एसीटेट में घोलकर स्वयं बना ले सकते हैं।
6. फूटबाल का पंप।

इन मुख्य सामग्रियों के अतिरिक्त लकड़ी का एक लोढ़े के आकार का टुकड़ा (जो राकेट की आकृति बनाने के लिये ढांचे का काम करेगा), धागा, रबड़ की नली, रबड़ का स्पंज, लकड़ी के बुरादे, एनामेल रंग आदि भी रख लीजिये। कुछ अन्य सामग्रियों की भी आवश्यकता पड़ेगी, जिन्हें राकेट बनाते वक्त बताते जायेंगे।

काम शुरू किया जाये। लकड़ी के लोढ़े से राकेट के लिये

ढांचा बनाना है। वह सब ओर से बिल्कुल सममित हो, इसके लिये पतले गत्ते से पहले एक सांचा बनाते हैं। इसे बीचों-बीच मोड़कर इसपर राकेट की आधी आकृति बनाते हैं और इसे काटकर अलग कर देते हैं। गत्ते को सीधा करने पर उसमें राकेट की पर्याकृति का छेद मिलेगा। लोढ़े को छीलकर ढाँचा बनाते वक्त उसकी सममिति इसी साँचे से जाँचते जायेंगे।

ढाँचा पहले चाकू से छीलकर बनाइये, फिर उसे रेगमाल (सैंड पेपर) से रगड़कर चिकना कर लीजिये। इसके बाद ढाँचे पर गीला कागज दो परतों में लपेट लीजिये। कागज के सूख जाने के बाद उसपर पाँच सेंटीमीटर चौड़ा फीता लपेटना शुरू कीजिये। फीता मोजों को सर्पिलाकार काटकर प्राप्त किया जाता है।

हर लपेटन गाढ़े गोंद से लेपते जाते हैं (गोंद प्राप्त करने की विधि ऊपर बतायी गयी है)। जब पहली परत अच्छी तरह से सूख जाये, तो दूसरी परत लपेटना शुरू करते हैं। इसके सूखने के बाद अगली परत लपेटना शुरू करते हैं। इससे नायलन की करीब एक मिलिमीटर मोटी परत मिलनी चाहिये। राकेट का ऊपरी कुंद भाग विशेष ध्यान से चिपकाना चाहिये। नायलन का फीता लपेटने का काम खत्म होने पर राकेट के ऊपरी सिरे पर टोंटी-सी बना लीजिये – इसके लिये वही गोंद लगा-लगाकर धागा लपेटते जायें।

फीता लपेटने के शुरू में ही ढाँचे के निचले सिरे पर बनाये गये गड्ढे में धागे की खाली रील घुसा लें। इसके पहले रील के

एक सिरे को छीलकर पतला करना पड़ता है और उसकी नाल में रबड़ की एक नली घुसा देते हैं; नली का वह सिरा, जो रील के पतले सिरे से निकलता है, भीतर से उलथा करके रील पर पहना देते हैं। यदि उसे उलथा नहीं किया जा सके, तो रबड़ की नली में भी एक धातु की नली कसकर फिट कर दीजिये। इससे रबड़ की नली हिल-डुल नहीं करेगी।

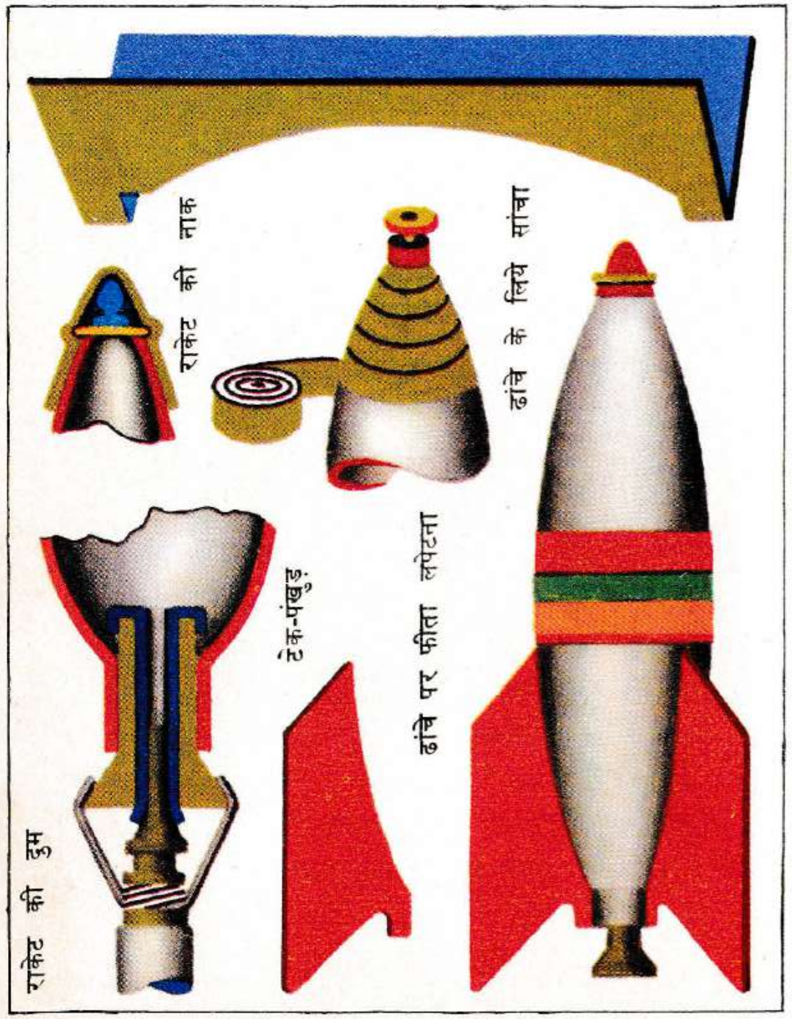
फीता लपेटने के बाद रील राकेट के काय से अच्छी तरह जड़ा रहेगा। रील अब राकेट की टोंटी का काम करने लगेगा। यह बात और है कि उसका बाहरी सिरा चौड़ा नहीं होता, पर अपना काम वह अच्छी तरह पूरा करेगा।

जब राकेट का काय सूख जाये, उसपर गोंद और सिलखड़ी का मिश्रण लेप दीजिये; बाद में उसे रेगमाल से रगड़ दीजिये।

राकेट के नीचले भाग में प्लाइ-वुड से काटकर बनाये गये तीन टेक-पंखुड़ गाढ़े गोंद से चिपका लीजिये (जिसका उपयोग आपने नायलन का फीता लपेटते वक्त किया था)। चिपकाने की जगह पर यदि पहले से लकड़ी के बुरादे और उसी गाढ़े गोंद का मिश्रण लेप दिया जाये, तो टेक और भी मजबूती से चिपके रहेंगे।

इसके बाद राकेट और टेकों को एनामेल रंग से लेप दीजिये। साधारण रोगन से भी काम चल सकता है।

राकेट को अच्छी तरह सुखा लेने के बाद उसके काय को बीच कमर पर से सावधानीपूर्वक चाकू से काटकर उसके दोनों अर्धों को ढाँचे पर से हटा लीजिये।



दोनों अर्धों के भीतर से कागज की निचली परत साफ कर लीजिये, फीते से चिपकी हुई कागज की परत ज्यों का त्यों रहने दे सकते हैं। अब दोनों अर्धों को सटा लीजिये और नायलन की पट्टी चारों तरफ से चिपका दीजिये, ताकि वे अलग न हो सकें।

एक निपुल में हवा भरकर उसका मुँह बांध दीजिये (यह गिरते वक्त राकेट को चोट से बचायेगा) और उसपर दूसरा निपुल चढ़ा दीजिये। इस निपुल का मुँह राकेट के सिरे पर चढ़ा दीजिये, जहां आपने धागा लपेटकर टोंटी बनायी है। फिर इसपर भी धागा लपेट दीजिये ताकि भीतरी निपुल अपनी जगह से इधर-उधर न हो।

भीतरी निपुल में हवा भरने के बजाय उसमें रबड़ का स्पंज भी रखा जा सकता है।

अब पंप तैयार करना चाहिये। उसके सिरे के प्रथम छल्ले को इस प्रकार घिसिये कि वह रील के छेद में ठीक-ठीक प्रविष्ट हो सके। प्रत्यास्थ तार से दो 'उंगलियों' का एक शिकंजा बनाइये और उसे पंप की टोंटी में निचले छल्ले पर तार लपेटकर बांध दीजिये।

राकेट में करीब एक-तिहाई भाग पानी भर दीजिये। रील के छेद में पंप की टोंटी घुसाइये, शिकंजों को रील की दीवारों से फँसा दीजिये और करीब तीस बार पंप चलाइये। शिकंजे अलग कीजिये और राकेट उड़ चलेगा। भीतर की हवा पानी को धकेलती है, जिससे पानी की शक्तिशाली धार फूट निकलती है; इसकी प्रतिकारी शक्ति राकेट को ऊपर की ओर गति देती

है। पहली बार राकेट छोड़कर यह जरूर देखें कि वह जमीन पर कैसे गिरता है। यदि वह नाक के सहारे गिरता है, तो सब ठीक-ठाक है। यदि वह टेक-पंखुडों के सहारे नीचे गिरता है या लेटी हुई स्थिति में गिरता है, तो नाक पर कुछ और फीता लपेटकर उसे कुछ और भारी करना होगा। सिलखड़ी छिड़कने और रंगने का काम तो इसके बाद करना ही पड़ेगा।

अपनी धुरी के गिर्द. सूर्य की परिक्रमा के साथ-साथ सभी ग्रह अपनी धुरियों के गिर्द घूर्णन भी करते रहते हैं।

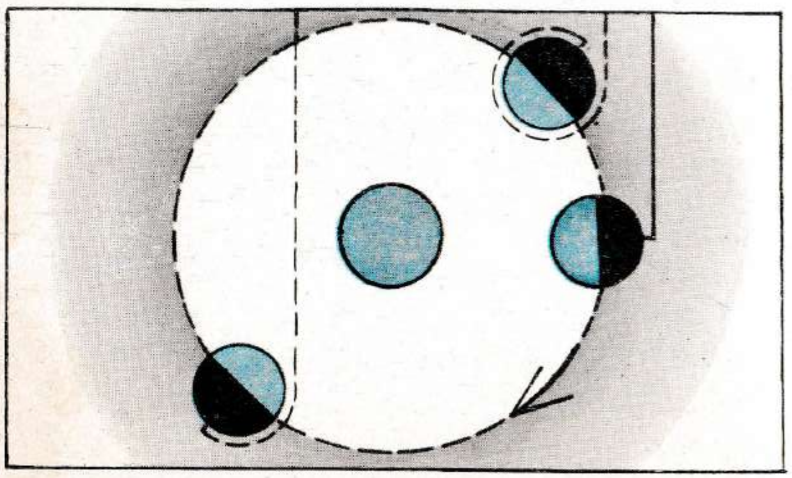
हम अपने प्राकृतिक स्पूतनिक – चांद – का हमेशा एक ही भाग देखते हैं, फिर भी वह पृथ्वी का एक अहर्निश (दिनरात) में एक परिक्रमा के साथ-साथ अपनी धुरी के गिर्द एक घूर्णन भी पूरा कर लेता है।

पृथ्वी अंतरिक्षी लट्टू है

यह अच्छी तरह से समझने के लिये हम एक प्रयोग करेंगे। कागज के एक पन्ने पर 20 सेंटीमीटर व्यास का एक वृत्त खींचिये। उसके केंद्र पर एक नन्हा वृत्त खींचिये – यह पृथ्वी होगा। टेबुल-टेनिस की गेंद चांद का काम करेगी। गेंद में एक सूई चुभाकर एक धागा बांध दीजिये। जिस तरफ धागा बंधा है, गेंद के उस अर्ध को स्याही से रंग लीजिये। गेंद को बड़े वृत्त की परिधि पर रखिये। आप समझ गये होंगे कि यह परिधि ही चांद के कक्षक का काम करेगी। गेंद इस प्रकार रखिये कि उसका श्वेत भाग पृथ्वी की ओर हो और धागा परिधि की स्पर्शरेखा के समांतर हो। अब 'चांद' को परिधि पर इस प्रकार फिराइये कि उसका श्वेत भाग हमेशा पृथ्वी की ओर उन्मुख रहे। गेंद से बंधा धागा गेंद के साथ-साथ खिसकता रहे, ताकि तनी हुई स्थिति में उसकी दिशा स्थिर रहे। आप देखेंगे कि धागा गेंद पर लिपटने लगता है। जब गेंद कक्षक पर एक परिक्रमा पूरी करती है, उसपर धागे का एक लपेटन पूरा हो जाता है। इसका मतलब यही है

कि कक्षक पर एक परिक्रमा के दौरान गेंद अपनी धुरी के गिर्द एक घूर्णन भी पूरा कर लेता है।

पहले यह माना जाता था कि बुध ग्रह सूर्य की इस तरह परिक्रमा करता है कि उसका हमेशा एक ही भाग सूर्य की ओर उन्मुख रहता है। लेकिन हाल के प्रेक्षण और नाप-जोख इस मान्यता को गलत सिद्ध करते हैं। सभी ग्रहों की तरह बुध भी अपनी धुरी के गिर्द घूर्णन करता रहता है। यह बात और है कि वह बहुत मंद गति से घूर्णन करता है – पृथ्वी से 59 गुना धीमा। जितनी देर में वह सूरज के दो चक्कर लगाता है, उतनी देर में वह अपनी धुरी के गिर्द सिर्फ तीन बार घूर्णन कर पाता है।



हमारा घर लट्टू पर. पृथ्वी एक बहुत बड़े लट्टू की तरह अपनी धुरी पर घूर्णन करती रहती है। और लट्टू चाहे कोई भी हो, उसके अक्ष में स्थायित्व का एक विलक्षण गुण होता है, जिसके कारण वह व्योम में अपनी दिशा स्थिर रखने का प्रयास करता है। यदि कोई वाह्य बल उसकी दिशा बदलने की कोशिश करता है, तो अक्ष बल की लंब दिशा में घूम जाता है।

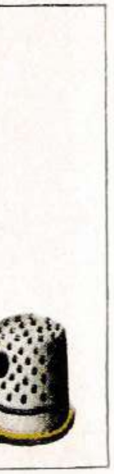
साइकिल के घूमते चक्के के साथ एक प्रयोग कीजिये, जो काफी प्रसिद्ध है। चक्का साइकिल के फोर्क से अलग करके दोनों हाथों से उसके अक्ष को क्षैतिज दिशा में पकड़े रहिये। किसी को कहिये कि वह चक्के को जहां तक हो सके, तेजी से चलाये। आप इस स्थिति में अक्ष को क्षैतिज से उदग्र स्थिति में घुमाने की कोशिश करें – आप देखेंगे कि यह आसान नहीं है।

अपने हाथों से एक गीरोस्कोप बनाइये, जो बहुत देर तक घूमता रहेगा। 10–12 सेंटीमीटर लंबी एक बड़ी सूई और टिन की एक चपटी डिब्बी लीजिये (इस तरह की डिब्बी सिनेमा के फिल्म की हो सकती है, या जूता-पालिश की)। डिब्बी के केंद्र में एक छेद करके उसमें सूई इस तरह से घुसाइये कि डिब्बी के दोनों तरफ सूई के भाग समान लंबाई के रहें। सतह पर से रंग आदि साफ करके सूई और डिब्बी के संपर्क स्थलों को रांगे से सोल्ड कर लें।

धातु के एक अंगुश्ताने की पार्श्व दीवार में करीब पाँच मिलिमीटर व्यास का एक छेद बना लीजिये। सूई के छेद में एक मोटिया धागा घुसाकर उसे सूई पर कुछेक बार लपेट दें। धागे

का दूसरा सिरा अंगुश्ताने के भीतर से दीवार में बनाये गये छेद से निकाल लें। सूई की नोक कड़ी चिकनी सतह पर टिकाकर उसके दूसरे सिरे पर अंगुश्ताना टोपी की तरह पहना दें। बायें हाथ से सूई को अंगुश्ताने से दबाते हुए दायें हाथ से धागा खींचकर निकाल लें। घिरनी नाचने लगेगी, तब अंगुश्ताना हटा लें। घिरनी देर तक सूई की नोक पर नाचती रहेगी ; सूई ही उसका घूर्णनाक्ष होती है। हमारे प्रयोग में टेक-बिन्दु के साथ घर्षण नगण्य है, पर हवा के साथ घर्षण घिरनी का घूमना तेजी से मंद करने लगेगा।

घिरनी बिल्कुल उदग्र दिशा में नचा सकना शायद ही संभव होगा। उसका अक्ष थोड़ा झुका रहेगा। अभी-अभी बताया जा



चुका है कि घिरनी का अक्ष अपना स्थायित्व बनाये रखने की प्रवृत्ति रखता है, पर हमारी घिरनी का अक्ष एक शंकु निरूपित करने लगता है। इसका कारण है कि घिरनी का गुरुत्व-केंद्र उदग्र रेखा से बाहर होता है और इसीलिये पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण-बल घिरनी को गिराने का प्रयास करता रहता है। घिरनी की नोक (टेक) से गुजरने वाली उदग्र रेखा के गिर्द अक्ष की गति को अयन कहते हैं। (अयन का अध्ययन करने में जिस उपकरण का उपयोग होता है, उसे गीरोस्कोप कहते हैं ; लट्टू, घिरनी आदि गीरोस्कोप के सरलतम रूप हैं। – अनु.)

यदि किसी कारणवश ऊपर वर्णित घिरनी आप नहीं बना सकते हैं, तो एक सरल घिरनी बनायें। गत्ते का पाँच सेंटीमीटर वाला एक वृत्त काटकर केंद्र में काँटी से छेद कर लीजिये और उसमें माचिस की तीली घुसा दीजिये। तीली का निचला सिरा छूरी से नुकीला बना लीजिये – बस घिरनी तैयार है। वह ज्यादा देर तक घूर्णन नहीं करेगा, पर अयन का प्रेक्षण उसमें भी अच्छी तरह संभव है।

अब पृथ्वी पर वार्त्ता की ओर लौटें। पृथ्वी का अक्ष भी अयन निरूपित करता है (पृथ्वी का अक्ष वह अदृश्य ज्यामितिक रेखा है, जिसके गिर्द पृथ्वी घूर्णन करती है)। पृथ्वी के अक्ष का ऊपरी अर्ध ऐसा शंकु निरूपित करता है, जिसका शीर्ष पृथ्वी के केंद्र पर होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि पृथ्वी का अक्ष दो शंकु निरूपित करता है, जिसके शीर्ष एक दूसरे की ओर होते हैं (वे संपात करते हैं – अनु.)।

लेकिन यदि टेबुल पर चलायी गयी घिरनी का अक्ष अयन का शंकु इसलिये निरूपित करता है कि पृथ्वी का आकर्षण-बल घिरनी को गिराने की कोशिश करता है, तो पृथ्वी के अक्ष का अयन किस वजह से होता है? आखिर पृथ्वी तो अंतरिक्ष में स्वतंत्र रूप से गति करती है न! उसे सूरज अपने पास बने रहने को मजबूर करता है। पर हम जानते हैं कि सूर्य की परिक्रमा करने वाले किसी भी वर्तुल (गोले) के सभी बिंदुओं पर सूर्य की ओर से समान आकर्षण-बल लगता है, क्योंकि वर्तुल अपने सभी अक्षों के सापेक्ष पूर्णतया सममित होता है; इसलिये वर्तुल की स्थिति में कोई भी टेढ़ापन नहीं आना चाहिये। फिर पृथ्वी में कहां से अयन उत्पन्न होता है?

पता चला कि पृथ्वी में भी अयन उत्पन्न होने का कारण है, और इस कारण का पता लगाया न्यूटन ने।

इस कारण से परिचय करने के लिये एक प्रयोग करें। देखें कि यदि पिंड की सतह सरलतापूर्वक अपनी आकृति बदल सकती है, तो तेजी से घूर्णन करते वक्त उसकी आकृति कैसी हो जायेगी। प्रयोग के लिये ऐसा उपकरण काम में लायेंगे, जिसे हम क्षिप्र (तेज) घूर्णन प्राप्त करने के लिये बना चुके हैं – यह प्लाई-वुड के दो वृत्तों के बीच दबी हुई एक भारी चकली है, जो दो परस्पर ऐंठी डोरियों के सहारे अपने केंद्र से लटक रही होती है।

अब चित्रकारी के मोटे कागज की 60 सेंटीमीटर लंबी और 2.5 सेंटीमीटर चौड़ी एक पट्टी काट लीजिये। उसके सिरों

को आपस में इस प्रकार चिपका लीजिये कि 18–19 सेंटीमीटर व्यास वाला एक छल्ला बन जाये। पट्टी के बीच में छल्ले पर आमने-सामने एक-एक छेद बना लीजिये। इन छेदों से होकर परस्पर ऐंठी हुई डोरियां निकल आयेंगी, जिनसे भारी चकती लटकी हुई है। एक छेद पट्टी के सिरों को चिपकाने वाले स्थान पर बनाइये। पट्टी में दूसरा छेद कुछ बड़ा होना चाहिये, ताकि डोरियां उससे बिना रगड़ खाये गुज़र सकें। कागजी छल्ले को डोरियों पर इस तरह से पहनाइये कि सिरे चिपकाये गये स्थान वाला छेद भारी चकती के पास हो। छल्ले के इस भाग को चकती से चिपका दीजिये (यदि वह प्लाइ-वुड की बनी हो)। यदि चकती धातु की बनी है, तो छल्ले को उससे चिपकाने के लिये प्लास्टिलीन का उपयोग करें। हमारा उपकरण तैयार है। चकती को बिल्कुल क्षैतिज रहना चाहिये और ध्यान रखना चाहिये कि छल्ला गोल रहे। यदि छल्ला अपने भार के कारण ऊपर से पिचकता है, तो उसे हटाकर दूसरा छल्ला बनाना चाहिये – ऐसे कागज से, जो पर्याप्त कड़ा और प्रत्यास्थ (लचीला) हो। छल्ले की प्रत्यास्थता जाँचिये: उसे हल्के से दबाइये और फिर छोड़ दीजिये; उसे पुनः गोल आकृति ग्रहण कर लेनी चाहिये।

छल्ले के ऊपर डोरियों पर काले कागज से एक क्लिप लगा दीजिये। क्लिप डोरियों को कसकर दबाये रहे, लेकिन इस तरह से कि जरूरत पड़ने पर उसे आसानी से ऊपर-नीचे खिसकाया जा सके।

अब प्रयोग शुरू करते हैं।

उपकरण के लटकन-बिंदु से कुछ दूर डोरियों के बीच एक गोल (बेलनाकार) छड़ी घुसा लीजिये और छल्ले के साथ-साथ चकती को घूर्णन देते हुए डोरियों को अच्छी तरह ऐंठिये। जब उसे छोड़ेंगे, तो डोरियां सीधी होने लगेंगी और चकती तेजी से चक्कर खाने लगेगी। घूर्णन-वेग बढ़ाने के लिये डोरियों के बीच फँसी छड़ी को उनके ऐंठन की जगह नीचे दबाइये। जब चकती अच्छी तरह घूर्णन करने लगे, तो आप थोड़ा दूर हट जाइये और कागजी छल्ले को देखिये। वह ऊपर से कुछ पिचका होगा। आपको एक पारदर्शक दीर्घवृत्तज (दीर्घवृत्ताकार बर्तन) नजर आयेगा, जो गोले से इसी बात में भिन्न होता है कि वह कुछ पिचका रहता है। प्रयोग के आरंभ में आपने डोरियों पर जो निशान लगाया था, उससे पता चलेगा कि गोल कागजी छल्ले को घूर्णन देने पर वह कितना पिचका है। जब घूर्णन बंद होगा, तक छल्ला अपना आरंभिक रूप ग्रहण करके पुनः उसी निशान तक पहुँच जायेगा। लेकिन ऐसा भी हो सकता है कि छल्ला ठीक-ठीक उस निशान तक न भी पहुँचे। इसका कारण यह होगा कि छल्ले के कागज में जो अपरूपण उत्पन्न होता है, वह कुछ मात्रा में अवशिष्ट रह जाता है।

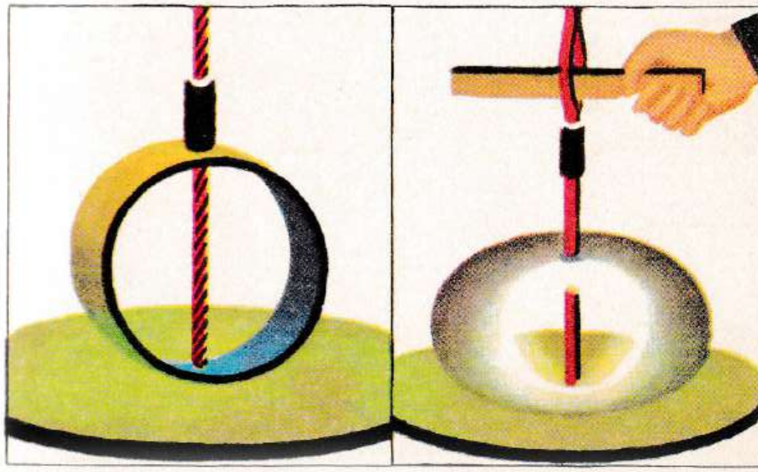
अब पुनः पृथ्वी की ओर लौटें। पृथ्वी पूरी तरह वर्तुल (गोला) नहीं है, वह ध्रुवों के पास कुछ पिचकी हुई है। नवीनतम आँकड़ों के अनुसार पृथ्वी में ध्रुव से उसके केंद्र तक खींची गयी त्रिज्या और उसके विषुवक से केंद्र तक खींची गयी

त्रिज्या में 21.383 किलोमीटर का अंतर है। इसाक न्यूटन के हिसाब से यह अंतर 24 km था।

न्यूटन ने सिद्ध किया था कि पृथ्वी अपने ध्रुवों के पास कुछ चिपकी हुई है (उसका विषुवक क्षेत्र कुछ फूला हुआ है)।

वे मानते थे कि विषुवक के पास पृथ्वी उस समय ही फूल गयी थी, जब वह मुलायम अवस्था में थी।

पृथ्वी की उत्पत्ति के बारे में चाहे जो भी परिकल्पना हो, – चाहे यह कांट-लैप्लेस की परिकल्पना हो, जिसके अनुसार पृथ्वी उत्तप्त द्रव्य से बनी थी और प्रारंभ में वह एक धधकता हुआ द्रव गोला थी, या चाहे यह सोवियत वैज्ञानिक ओ॰ श्मिद की परिकल्पना हो, जिसके अनुसार पृथ्वी धूसर बादलों और विरल (असघन) गैसों के कणों के धीरे-धीरे 'सटते' जाने से बनी



थी – सभी इस बात को ध्यान में रखते हैं कि पृथ्वी एकबारगी से ठोस नहीं हो गयी थी। अपनी धुरी के गिर्द तेज घूर्णन के कारण ही 'मुलायम' पृथ्वी विषुवक के पास फूली थी।

हमारे ग्रह की धुरी सूर्य के गिर्द परिक्रमा के तल के साथ काफी झुकी हुई है। झुकाव का कोण 66°33.5' है।

न्यूटन ने पृथ्वी की धुरी के अयन की उत्पत्ति को धुरी के झुकाव और पृथ्वी के पिचके रूप से समझाया था।

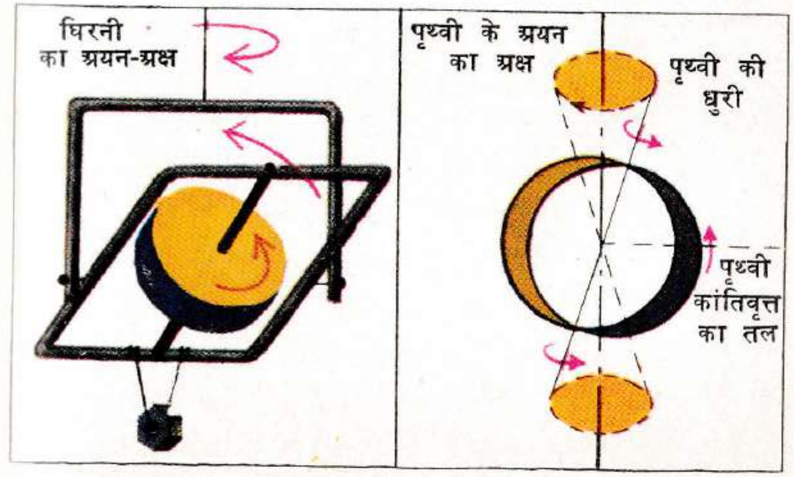
आदर्श वर्तुल में अयन नहीं होता। पृथ्वी का ऐसा रूप होने से ही (जैसा अभी है), उसके सभी बिंदु चांद या सूरज की ओर समान बल से आकर्षित नहीं होते, उसे उलटने की चेष्टा करने वाला बल उत्पन्न होता है। यह बल पृथ्वी की धुरी को उदग्र दिशा देने का 'प्रयत्न' करता है। कक्षक पर अभिलंब के गिर्द (जो अयन का अक्ष भी है) पृथ्वी की धुरी के सिरे करीब 26000 वर्ष में एक पूर्ण चक्कर लगाते हैं।

जैसा आप देखते हैं, पृथ्वी की धुरी बहुत धीमी गति से घूर्णन करती है।

यह समझने के लिये कि पृथ्वी की धुरी का अयन कैसे उत्पन्न हुआ, हम एक छोटा सा प्रतिमान बनायेंगे – उसी घिरनी में थोड़ा सा सुधार करेंगे, जिसे हमने टिन की डिब्बी से बनाया था। डिब्बी में मिट्टी भरकर उसे भारी कर दीजिये। अक्ष भी बदल दीजिये – इसके लिये एक सीधी काँटी का उपयोग कीजिये, लेकिन इसके पहले उसकी 'टोपी' काटकर अलग कर दीजिये और उसके दूसरे सिरे को और भी नुकीला बना लीजिये। काँटी

में एक छेद भी बना लीजिये, जिसमें उसे घुराने के लिए डोरी घुसायी जा सके।

दो फ्रेम बनाइये। भीतरी फ्रेम घिरनी के नाप का होना चाहिये, इसे पीतल या तांबे की पतली नली से बना सकते हैं। आमने-सामने की भुजाओं में एक-एक छेद कर लेना चाहिये, जिसमें घिरनी नाचेगी। जहां काँटी का नुकीला सिरा होगा, वहां नली में आर-पार छेद नहीं बनाना चाहिये, ताकि नुकीला सिरा नली की भीतरी दीवार पर टिका रहे। अक्ष के ऊपरी सिरे के लिये नली में आर-पार छेद बनाना चाहिये। इससे फ्रेम में घिरनी लगाने में सुविधा होगी। फ्रेम में मोड़ों पर नली थोड़ी पिचकी रहेगी, पर इससे कोई नुकसान नहीं है। फ्रेम की पार्श्व भुजाओं में भी बीचों-बीच एक-एक छेद कर लें, उनमें बाहर



से छोटी काँटी या धातु की सींक सोल्ड कर दें।

बाहरी फ्रेम में सिर्फ तीन भुजाएं होंगी। उसे भी वैसी ही नलियों से बनायें। उसके सिरों पर एक-एक छेद बना लें, जिनमें भीतरी फ्रेम की सींकें बैठ सकें। ये सींकें भीतरी फ्रेम के लिये अक्ष का काम करेंगी। बाहरी फ्रेम की ऊपरी भुजा के मध्य में एक हूक सोल्ड करके पूरे उपकरण को धागे के सहारे लटका लें। ध्यान रखें कि उपकरण में भीतरी फ्रेम बिल्कुल सीधा रहे, आड़ा-तिरछा न रहे।

अब प्रयोग शुरू करें। पतले धागे की सहायता से घिरनी तेजी से नचा लें। वह उसी स्थिति में नाचती रहेगी, जिसमें उसे नचाया गया है। जब वह रुक जाये, भीतरी फ्रेम की निचली भुजा से एक छोटा-सा बोझ लटका दें, जिससे फ्रेम कुछ तिरछा हो जायेगा। घिरनी फिर से नचाइये। बोझ भीतरी फ्रेम को खींचकर उदग्र स्थिति में लाने की कोशिश करेगा। यहां वही बात होगी, जो पृथ्वी के साथ होती है, जब चांद और सूरज के आकर्षक-बल पृथ्वी के अक्ष को एक तरफ से खींचकर उसे कक्षक पर सीधा रखने की कोशिश करते हैं। घिरनी जैसे ही नाचना शुरू करेगी, दोनों ही फ्रेम धागे के गिर्द घूर्णन करने लगेंगे, जिससे वे लटके हुए हैं। धागा घिरनी के अयन का अक्ष बन जाता है।

हमारे उपकरण की अयन-गति ज्यादा देर तक नहीं चलेगी। उसके समाप्त होने पर विपरीत दिशा में घूर्णन शुरू हो जाता है – इसका कारण है अक्षों का घर्षण और धागे की ऐंठन।

अलक्ष्य गति. इस प्रकार, हम एक विराट लटटू पर जी रहे हैं। लेकिन पृथ्वी जिस वेग से अपने कक्षक पर सूर्य की परिक्रमा करती है, उसका हमें पता नहीं रहता। पृथ्वी की सतह जिस वेग से अपनी धुरी के गिर्द घूर्णन करती है, उसे भी हम महसूस नहीं कर पाते।

लेकिन हम यह जानते हैं कि बसंत के बाद गर्मी आती है, गर्मी के बाद पतझड़ और पतझड़ के बाद शीत। बर्ष के दौरान यह ऋतु-परिवर्तन बहुत धीमी गति से होता है; हम इसके आदी हो गये हैं और इसे पृथ्वी द्वारा सूर्य की परिक्रमा के वेग से संबंधित नहीं कर पाते। यह वेग औसतन 29.765 किलोमीटर प्रति सेकेंड के बराबर है; यह कम नहीं है, पर हमें ऐसा नहीं लगता, क्योंकि हम किलोमीटर प्रति घंटा में ही वेग नापने के आदी हैं।

पैदल एक घंटे में करीब छे किलोमीटर के वेग से चला जा सकता है। मोटर और रेलगाड़ियां घंटे में 40–100 किलोमीटर चलती हैं। हवाई जवाज यात्रियों को घंटे में 300 से 800 किलो-मीटर तक या इससे भी ज्यादा गति से दूर तक उड़ा ले जाते हैं। हवाई जहाजों का वेग तो बढ़ता ही जा रहा है। अब ध्वनि से भी तेज चलने वाले विमान हैं (ध्वनि का वेग 1200 किलोमीटर प्रति घंटा है)। पृथ्वी की परिक्रमा करने वाले हमारे अंतरिक्ष-यान प्रति घंटा 28400 किलोमीटर तय करते हैं।

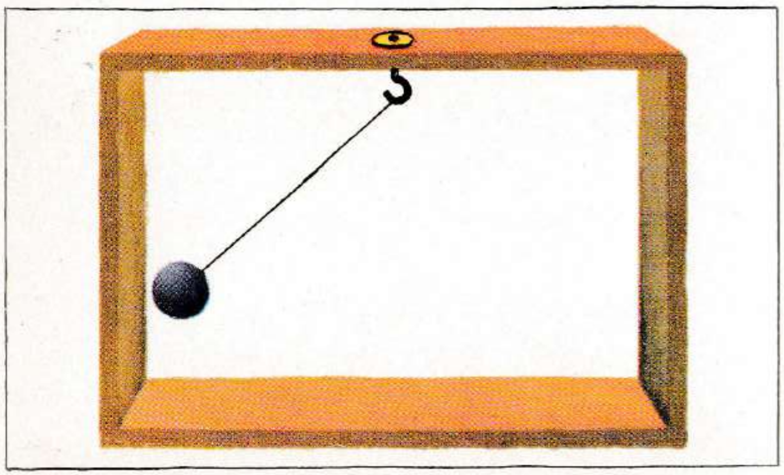
पृथ्वी अपने कक्षक पर सूर्य की परिक्रमा 107154 किलो-मीटर प्रति घंटा के वेग से करती है।

और धुरी के गिर्द पृथ्वी का घूर्णन-वेग कितना है? सबसे अधिक वेग विषुवक रेखा के पास है – करीब 1674 किलोमीटर प्रति घंटा।

इन वेगों को हम बिल्कुल ही महसूस नहीं कर पाते।

पृथ्वी के घूर्णन का प्रमाण. पृथ्वी अपनी धुरी के गिर्द घूर्णन करती है, इस बात पर 19-वीं शती में किसी को कोई संदेह नहीं रह गया था, फिर भी फ्रांसीसी वैज्ञानिक लेयोन फूको ने 1851 में एक प्रयोग किया, जिसमें पृथ्वी का घूर्णन प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सका।

अपने प्रयोग के लिये फूको ने दोलक (पेंडुलम) के एक गुण को काम में लाया था: यदि लटकन-बिंदु उदग्र-अक्ष के गिर्द



घूर्णन करता है, तो इससे दोलक अपना दोलन-तल नहीं बदलता।

पेरिस में पांतेयोन-भवन में फूको ने 67 मीटर लंबा एक दोलक लटका दिया। इसमें तांबें का गोला प्रयुक्त हुआ था, जो 28 किलोग्राम भारी था।

जब इस दोलक को झुलाया गया, तो कुछ मिनटों बाद देखा गया कि दोलक का दोलन-तल बदल गया है; प्रेक्षक के निकट वाली उसकी भुजा घड़ी की सूई के चलने की दिशा में पूरब से पश्चिम की ओर घूम गयी है। पर दोलक का दोलन-तल पहले जैसा ही रहता है, वास्तविकता में पृथ्वी पश्चिम से पूरब की ओर घूम जाती है।

इस तरह के दोलक हमारे यहां भी कई शहरों में बनाये गये हैं। लेनिनग्राद के इसाक चर्च में और भी बड़ा दोलक है – उसकी लंबाई 98 मीटर है।

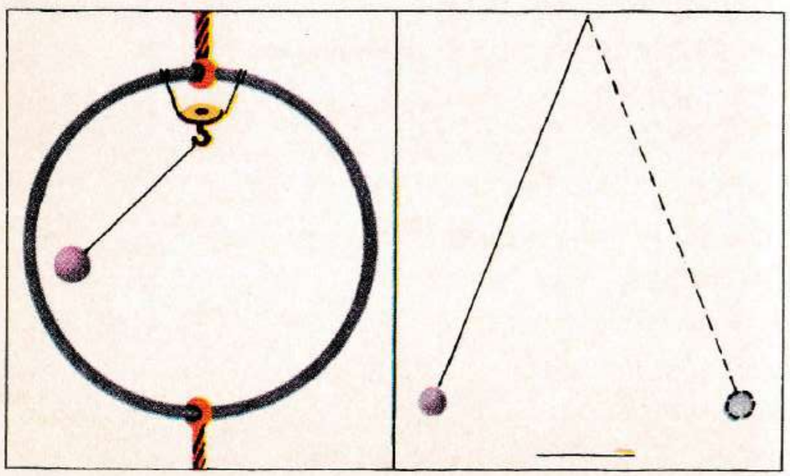
फूको के दोलक का एक प्रतिमान आप भी बना लीजिये।

लकड़ी का एक फ्रेम बना लीजिये जिसका आधार 50–60 सेंटीमीटर लंबा, 12–15 सेंटीमीटर चौड़ा और 2–3 सेंटीमीटर मोटा हो। फ्रेम की ऊँचाई करीब 30–40 सेंटीमीटर होनी चाहिये। ऊपरी पटरे के बीचों-बीच एक उदग्र छेद बनाकर उसमें कड़े तार का एक टुकड़ा घुसा लीजिये और उसका ऊपरी सिरा मोड़ दीजिये, ताकि वह छेद से गिर न जाये। तार का निचला सिरा अंकुश की तरह मोड़ लीजिये, जिससे दोलक लटकाया जायेगा। अंकुश ऐसा होना चाहिये कि वह छेद में निर्बाध रूप से घूर्णन कर सके।

पतले धागे के सहारे अंकुश से कोई भारी बोझ (चिथड़े में लिपटी हुई भारी गोली या सिर्फ मोटा-सा नट) लटका दीजिये।

दोलक को इस प्रकार झुलाइये कि उसका आयाम फ्रेम की लंबाई से अधिक न हो। फ्रेम को उदग्र अक्ष के गिर्द घड़ी की सूई के विपरीत घुमाइये – यह पृथ्वी की नकल होगी, जो पश्चिम से पूरब की दिशा में घूर्णन करती रहती है। हमारा पृथ्वी का प्रतिमान घूमता है, पर दोलक उसी तल पर दोलन करता रहता है, जिसपर उसे झुलाया गया था।

प्रयोग को और भी प्रभावशाली बनाया जा सकता है। मोटे तार का करीब 50 सेंटीमीटर व्यास वाला एक छल्ला लीजिये।



छल्ले को उदग्र खड़ा करके उसमें तार के दो टुकड़ों से टिन का एक गोल पत्तर क्षैतिज लटका दीजिये। पत्तर के बीच एक अच्छी तरह से साफ किया हुआ छेद पहले से बना लेना चाहिये, जिससे आप दोलक के लिये हूक लटकायेंगे। यह अतिरिक्त प्रयुक्ति चूल का काम करेगी। छल्ले को धागे से लटका लीजिये। छल्ले का निचला भाग भी उसी तरह के धागे से तानकर किसी अचल चीज से बांध दीजिये। इससे छल्ला धागों से तनकर उदग्र लटका रहेगा।

हूक से दोलक लटकाकर उसे झुलाइये। जब आप छल्ले को उसके उदग्र अक्ष के गिर्द घुमाना शुरू करेंगे, तो इससे दोलक के दोलन-तल की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आयेगा।

यदि आपको कोई ऐसा कमरा मिल जाये, जिसमें छत 4–5 मीटर या इससे ज्यादा ऊँची हो, तो आप फूको के दोलक के साथ प्रयोग कर सकते हैं; आपको उसका प्रतिमान बनाने की कोई आवश्यकता नहीं होगी। खुली जगह में दोलक लटकाने के लिये ऊँचाई पर बिन्दु ढूँढ़ना आसान है, पर अफसोस की बात है कि वहां यह प्रयोग नहीं किया जा सकता – हवा के हल्के झोंके से भी परिणाम गलत हो जा सकते हैं।

अभी हम दोलक के साथ एक प्रयोग करेंगे, जो पृथ्वी के घूर्णन को और भी दृश्य-सुगम बना देगा। नीचे एक प्रयोग का वर्णन दिया जा रहा है, जिसे आप अपनी परिस्थितियों में लागू कर सकते हैं।

छत में एक काँटी ठोकी गयी; उसके चारों तरफ तार का

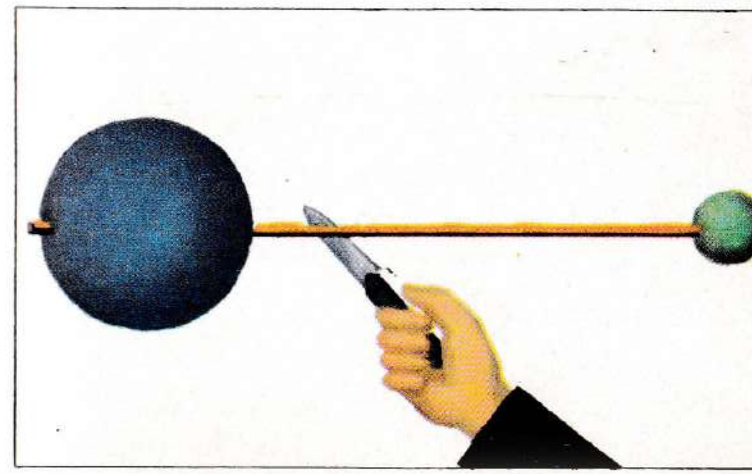
एक टुकड़ा लपेट दिया गया, जिसके निचले सिरे पर हूक बना हुआ था (हूक काँटी के गिर्द निर्बाध रूप से घूम सकता था)। इस हूक से पतले धागे के सहारे रबड़ की एक गेंद (व्यास 6 सेंटीमीटर) लटका दी गयी, जिसमें रेत भरा हुआ था। दोलक की पूरी लंबाई 410 सेंटीमीटर थी। फर्श से दोलक 6 सेंटीमीटर ऊँचा था। दोलक सावधानी के साथ भुलाया गया, ताकि वह एक ही समतल पर दोलन करता रहे, अपने अक्ष के गिर्द घूमने न लगे। भुलाने का समय नोट कर लिया गया। फर्श पर दोलन के अनुतीर 1 मीटर लंबी एक पटरी रख दी गयी थी। दोलक ठीक इस पटरी पर दोलन कर रहा था।

दोलन-तल कंपास की सहायता से निश्चित किया गया था, उसकी दिशा उत्तर से दक्षिण की ओर थी। प्रेक्षक प्रयोग के दौरान दक्षिण की ओर खड़ा था।

दस मिनट बाद बिल्कुल साफ दिखने लगा कि दोलन-तल अब पटरी के अनुतीर नहीं रह गया है, वह पटरी को मध्य बिन्दु पर काटता हुआ गुजर रहा है। पहली पटरी पर वैसी ही एक दूसरी पटरी इस तरह से रखी गयी कि दोलक ठीक उसके ऊपर दोलन करे। दोनों पटरियों के बीच एक कोण प्रेक्षित हुआ। ऐसा लगता था कि दोलक का पूरा दोलन-तल घड़ी की दिशा में – पूरब से पश्चिम की ओर – घूम गया है। पर वास्तविकता यह है कि दस मिनट के इस अंतराल में कमरे और प्रेक्षक के साथ-साथ पूरी पृथ्वी पश्चिम से पूरब की ओर घूम गयी थी।

पृथ्वी को चांद कैसे घुमाता है ? पृथ्वी को चांद घुमाता है – यह बात असंभव लगती है। शंका उचित भी है : चांद का द्रव्यमान पृथ्वी से 81 गुना कम है और चांद खुद पृथ्वी की परिक्रमा करता है, फिर वह पृथ्वी को कैसे घुमा सकता है।

पृथ्वी में कई प्रकार की आवर्ती गतियां हैं – वह खुद सूर्य की परिक्रमा करती है, अपनी धुरी के गिर्द घूर्णन करती है, उसकी धुरी अयन करती है। लेकिन पृथ्वी में एक और आवर्ती गति है, जो चांद के कारण उत्पन्न होती है। यदि चांद नहीं होता, तो यह गति पृथ्वी में नहीं होती। पारस्परिक आकर्षण-बलों के सहारे पृथ्वी और चांद बहुत मजबूती के साथ एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। यह बात और है कि पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण-बल चांद से काफी अधिक है, वह चांद को उसके कक्षक पर रोके रखता



है। चांद का आकर्षण-बल आवर्ती रूप से पार्थिव सागरों का जल ऊपर उठाता रहता है, जिससे ज्वार-भाटा की उत्पत्ति होती है (इस काम में उसे सूरज की भी सहायता मिलती है)।

वैज्ञानिकों ने जब हिसाब लगाया, तो पता चला कि चांद पृथ्वी की परिक्रमा तो करता है, पर पृथ्वी के केंद्र के गिर्द नहीं, बल्कि एक ऐसे बिंदु के गिर्द, जो पृथ्वी के केंद्र से करीब 4700 किलोमीटर दूर है। इस बिंदु को पृथ्वी और चांद से बने व्यूह का द्रव्यमान-केंद्र कहते हैं।

अक्सर 'गुरुत्व-केंद्र' जैसे शब्द का प्रयोग होता है। उदाहरणतया, डंडे का गुरुत्व-केंद्र उसके मध्य में होता है। यदि इस जगह डंडे को उंगली पर रखेंगे, तो डंडा संतुलित हो जायेगा, क्योंकि टेक-बिंदु ठीक गुरुत्व-केंद्र के नीचे होगा। गोले का गुरुत्व-केंद्र उसके ज्यामितिक केंद्र के साथ संपात करता है।

लेकिन व्यंजन 'गुरुत्व-केंद्र' का प्रयोग पृथ्वी पर (या उसके आकर्षण-क्षेत्र में) स्थित वस्तुओं के लिये करते हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि गुरुत्व-बल वह बल है, जिससे पृथ्वी वस्तु को आकर्षित करती है। पृथ्वी और चांद से बने व्यूह के लिये व्यंजन 'गुरुत्व-केंद्र' की जगह व्यंजन 'द्रव्यमान-केंद्र' प्रयुक्त होता है।

एक छोटा-सा उपकरण बनाइये। डौट पेन का एक खाली रेफिल लीजिये (उसकी लंबाई 12.7 सेंटीमीटर होती है); उसके सिरों पर एक-एक गोली जड़ दीजिये। गोलियां लकड़ी के पुराने खिलौने आदि से ले सकते हैं। उनके व्यास करीब एक और तीन सेंटीमीटर हों। बड़ी गोली का द्रव्यमान छोटी

गोली से कई गुना अधिक होगा (याद दिला दें कि 'द्रव्यमान' का प्रयोग जड़त्व की माप के अर्थ में करते हैं)।

रेफिल को गोलियों समेत छुरी की धार पर रखिये और छुरी को तबतक खिसकाते रहिये, जबतक गोलियों की 'बहंगी' संतुलित न हो जाये। रेफिल पर यह बिंदु चिन्हित कर दीजिये। यह दो गोलियों से बने व्यूह का गुरुत्व-केंद्र होगा। रेफिल के द्रव्यमान की हम उपेक्षा करते हैं, क्योंकि वह नगण्य है।

हमारे व्यूह के गुरुत्व-केंद्र पर 70 सेंटीमीटर लंबे दो पतले धागे बांध दीजिये (गुरुत्व-केंद्र बड़ी गोली के निकट होगा)। धागों के दूसरे सिरे किसी चीज से बांधकर लटका दीजिये – इस तरह से कि उपकरण निर्बाध घूम सके। रेफिल पर धागों को खिसका-खिसकाकर गोलियों की बहंगी को पूरी तरह संतुलित कर लीजिये। अब बहंगी को घुमाते हुए धागों को ऐंठना शुरू कीजिये। जितना अधिक ऐंठन दे सकेंगे, उतना ही अच्छा होगा। ऐंठन दे चुकने के बाद धागों को हाथ से पकड़े हुए जाँच कर लीजिये कि धागा गुरुत्व-केंद्र पर ही है, व्यूह पहले की तरह ही संतुलित है। यदि जरूरत हो, तो बहंगी को थोड़ा खिसकाकर स्थिति ठीक कर लें। जब वह बिल्कुल क्षैतिज रहे, उसे शांत कर लीजिये, ताकि भूले नहीं। अब उसे छोड़ दीजिये, बहंगी सीधे होते धागों के गिर्द घूर्णन करने लगेगी। ध्यान दें कि धागे (जो हमारे उपकरण का अक्ष हैं) बिल्कुल उदग्र लटके रहते हैं, उन्हें इस स्थिति से कोई भी बल विचलित नहीं कर सकता। जब धागों का ऐंठन खत्म हो जायेगा, वह क्षैतिज स्थिति में रुक जायेगा।

यही प्रयोग एक अन्य विधि से भी संभव है। धागों को गुरुत्व-केंद्र से छोटी गोली की ओर एक सेंटीमीटर दूर खिसका लीजिये। पहले की तरह धागों में अच्छी तरह ऐंठन भर दीजिये, उपकरण को शांत कर लीजिये, ताकि इधर-उधर झूले नहीं। आहिस्ते से हाथ हटा लीजिये। घूर्णन शुरू हो जायेगा। अब सीधे होते धागों का हाल देखिये। वे पहले की तरह उदग्र नहीं हैं, वे अब शंकु निरूपित कर रहे हैं। अब हमारे उपकरण का घूर्णन-अक्ष इस शंकु का (ज्यामितिक) अक्ष है, जो पहले की तरह ही उदग्र है और दोनों गोलियों के गुरुत्व-केंद्र से गुजर रहा है।

धागों को छोटी गोली के निकट खिसका-खिसकाकर प्रयोग को कई बार दुहराइये। अंत में रेफिल बिल्कुल ही तिरछा लटकने लगेगा और जब उपकरण तेजी से घूर्णन करेगा, आप देखेंगे कि रेफिल एक नहीं, दो शंकु निरूपित कर रहा है। दोनों के शीर्ष इस नन्हे व्यूह के गुरुत्व-केंद्र पर स्थित होते हैं। जब धागे रेफिल के मध्य में या छोटी गोली के निकट बंधे होते हैं, उपकरण का घूर्णन विशेष रूप से रोचक हो जाता है।

अब अंतरिक्ष की ओर लौटें। चांद पृथ्वी को कैसे घुमाता है? आप शायद समझने लगे हैं कि उपरोक्त प्रयोग पृथ्वी और चांद से बने व्यूह के साथ सीधा संबंध रखता है। अंतरिक्ष में रेफिल का काम चांद और पृथ्वी के पारस्परिक आकर्षण-बल करते हैं; छोटी गोली चांद है और बड़ी गोली – पृथ्वी। इस अंतरिक्षी व्यूह का दव्यमान-केंद्र, जैसा कि बताया जा चुका है, पृथ्वी के ज्यामितिक-केंद्र से 4700 किलोमीटर हटकर दूर है।

याद दिला दें कि विषुवक रेखा पर पृथ्वी की त्रिज्या 6378.16 किलोमीटर है। इसका मतलब है कि पृथ्वी और चांद के व्यूह का द्रव्यमान-केंद्र पृथ्वी के भीतर स्थित है।

जितने समय में चांद पृथ्वी का एक चक्कर लगाता है, उतने समय में पृथ्वी का ज्यामितिक केंद्र भी पृथ्वी और चांद के व्यूह के द्रव्यमान-केंद्र का एक चक्कर लगा लेता है।

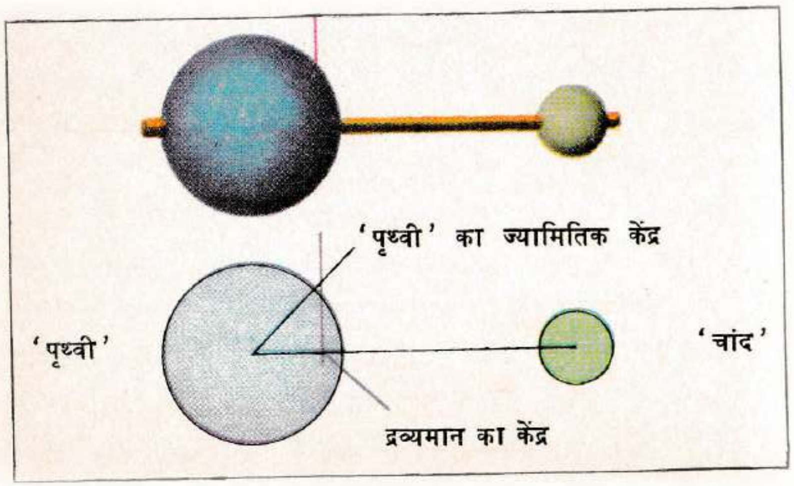
अब पृथ्वी और चांद के बने व्यूह का घूर्णन दिखाने के लिये एक बहुत सरल प्रतिमान बनायें, इसमें पैमाने पर ध्यान नहीं देंगे, चांद और पृथ्वी के द्रव्यमानों के अनुपात पर भी ध्यान नहीं देंगे; पृथ्वी के गिर्द चांद का पथ दीर्घवृत्ताकार नहीं, बल्कि वृत्ताकार रहेगा।

प्लास्टिलीन से तीन सेंटीमीटर व्यास की एक गोली बनाइये। यह 'पृथ्वी' होगी। अब खाली रेफिल के एक छोर से 2.5 सेंटी-मीटर की दूरी पर दो पतले धागे कसकर बांध लीजिये, ताकि वे अपनी जगह से खिसकें नहीं। रेफिल के इस सिरे पर 'पृथ्वी' बैठा दीजिये। रेफिल को ठीक व्यास के सहारे गोली के पार निकलना चाहिये। धागे प्लास्टिलीन की गोली को काटकर ठीक उस जगह के ऊपर निकल आयेंगे, जहां वे बंधे हैं।

प्लास्टिलीन ठीक से काटना चाहिये, ताकि धागे अपनी जगह से खिसकें नहीं। रेफिल जिस जगह पर धागों से बंधा हुआ है, वही हमारे उपकरण का द्रव्यमान-केंद्र होगी। अब धागों के सहारे उपकरण को लटका दीजिये और रेफिल के खाली सिरे पर प्लास्टिलीन की ही एक बहुत छोटी गोली बनाइये। इसमें

थोड़ा-थोड़ा प्लास्टिलीन चिपकाते हुए गोली को तबतक बड़ी करते जाइये, जबतक कि रेफिल क्षैतिज (संतुलित) न हो जाये। यह 'चांद' होगा।

अब उपकरण घुमाते हुए धागों को ऐंठन देना शुरू कीजिये। फिर सावधानी से, ताकि वह झूले नहीं, उसे छोड़ दीजिये। पृथ्वी और चांद से बने व्यूह का प्रतिमान घूर्णन करने लगेगा। 'चांद' 'पृथ्वी' की परिक्रमा करने लगेगा और 'पृथ्वी' का ज्यामितिक केंद्र, जो लटकन-बिंदु (अर्थात् द्रव्यमान-केंद्र) से एक सेंटीमीटर दूर है, लटकन-बिंदु की परिक्रमा करने लगता है। धागे, जिनसे उपकरण लटक रहा है, बिल्कुल उदग्र रहेंगे (यदि व्यूह पूर्णतया संतुलित है)।



ये प्रयोग दिखाते हैं कि मशीन के घूर्णनरत पुर्जों (टर्बाइन के रोटरों, जनित्र या चलित्र के धुरी-दंडों, गतिसामक-चक्कों) में अक्षों का ठीक उनके केंद्रों पर होना कितना महत्त्वपूर्ण है। यह बहुत ही जरूरी है कि मशीन के ऐसे पुर्जों के अक्ष उनके गुरुत्व-केंद्र से ही गुजरें, ताकि अनावश्यक कंपन न शुरू हो जाये, क्योंकि इसका मशीन पर बुरा असर पड़ता है।

कंपन के कारण बेयरिंग जल्द घिसते हैं, मशीन की नींव हिलने लगती है।

अंतरिक्ष की प्रकाशिकीय यात्रा. 1611 में प्रतिभाशाली जर्मन ज्योतिर्विद योगान केप्लेर ने एक वेध-नली बनायी थी, जिसे आधुनिक शक्तिशाली अपवर्तक टेलीस्कोपों का पूर्वज माना जा सकता है। वेध-नली का धीरे-धीरे विकास होता रहा: लेंसों की कोटि सुधरती गयी, उनके आकार बढ़ते गये, आकाश के नियत क्षेत्र की ओर नली को निर्दिष्ट करने के लिये यंत्र बनाये गये, प्रेक्षण-बिंदु पृथ्वी के घूर्णन पर निर्भर न करता हुआ स्थिर रहे, इसके लिये विधियां विकसित की गयीं। अन्यतः, वेध-नली धीरे-धीरे शक्तिशाली टेलीस्कोप में सुविकसित होती गयी। इन टेलीस्कोपों की सहायता से वैज्ञानिक लोग ब्रह्मांड में दूर-दूर के क्षेत्र देखने में समर्थ हुए। सौर मंडल के ग्रहों की निकट से विस्तृत जानकारी मिल सकी। अनेकों प्रकार के उपग्रह भी नजर आये, जिनके अस्तित्व के बारे में पहले कुछ भी मालूम न था, धूमकेतुओं का अच्छी तरह से प्रेक्षण संभव हुआ।

व्योम और काल की असीम दूरियां

अब प्रकाशिक टेलीस्कोपों के अतिरिक्त रेडियो तथा एक्सरे-टेलीस्कोपों का विस्तृत उपयोग होने लगा है। इनसे आकाशीय पिंडों के वाह्य रूप का ही नहीं, उनके भीतर चलने वाली प्रक्रिया-ओं का भी ज्ञान संभव हुआ है।

रेडियो-टेलीस्कोप से वैज्ञानिक लोग हमारी आकाश-गंगा के दूर-दूर स्थित क्षेत्रों के साथ-साथ इसके बाहर तथा अन्य

तारक-तंत्रों में घटने वाली अनेक रोचक घटनाओं की सूचनाएं पाते हैं।

अंतरिक्ष से आने वाली रेडियो-तरंगों और एक्सरे किरणों की सहायता से वैज्ञानिकगण अनेक नयी जानकारियां प्राप्त करते हैं। वे यह जान लेते हैं कि वर्षों पूर्व क्या हुआ था। हजारों वर्ष पूर्व ही नहीं, अरबों वर्ष पूर्व घटित बातें भी! प्रकाश तथा रेडियो-तरंगों का वेग 300000 किलोमीटर प्रति सेकेंड है। प्रकृति में इससे बड़ा वेग संभव नहीं है। सूर्य का प्रकाश हम तक क्षण भर में नहीं पहुँच जाता, वह सूर्य की सतह से निकलने के बाद करीब 8.3 मिनट में हम तक पहुँचता है। (इस तरह, ब्रह्मांड के किसी कोने से यदि प्रकाश हम तक एक अरब वर्ष में पहुँचता है, तो उसकी वर्तमान अवस्था हम एक अरब वर्ष बाद ही देख पायेंगे; अभी हम उसकी एक अरब वर्ष पूर्व की अवस्था देखते हैं। – अनु.)

लेकिन अतीत के विभिन्न प्रेक्षणों की तुलना करके वैज्ञानिक यह भी बता सकते हैं कि अभी ब्रह्मांड में क्या हो रहा है।

स्वनिर्मित अपवर्तक टेलीस्कोप. दो प्रकार के प्रकाशिक टेलीस्कोप होते हैं: अपवर्तक टेलीस्कोप और परावर्तक टेलीस्कोप।

अपवर्तक टेलीस्कोप में प्रकाश-तंत्र लेंसों से बना होता है। दृश्यक (प्रेक्ष्य वस्तु की ओर निर्दिष्ट प्रयुक्ति) और नेत्रक (प्रेक्ष्य वस्तु का बिंब दृष्टिगोचर कराने वाली प्रयुक्ति) दोनों ही लेंस होते हैं। परावर्तक टेलीस्कोपों में विचाराधीन वस्तु का बिंब

परवलयी दर्पण द्वारा प्राप्त होता है; इस बिंब को लेंसों से बनी प्रयुक्ति से देखते हैं।

यहां हम एक अपवर्तक टेलीस्कोप बनायेंगे, क्योंकि लेंस आसानी से मिल सकते हैं और इसे बनाना भी आसान है। परावर्तक टेलीस्कोप का परवलयी दर्पण खुद रगड़कर चिकना करना पड़ता है और यह एक काफी कठिन काम है, इसमें समय भी बहुत लगता है।

अभी जो टेलीस्कोप हम बनायेंगे, उसकी सहायता से आप आकाश की मजेदार 'सैर' कर सकेंगे (जाहिर है, यदि आकाश बादलों से नहीं ढका होगा और बाहर बहुत ठंड नहीं होगी)। घर में खिड़की के शीशे से होकर तारों का प्रेक्षण सुविधाजनक नहीं होगा, क्योंकि शीशा बिंब को बिगाड़ देता है। अपने हाथों से बनाये इस टेलीस्कोप की सहायता से आप चांद, सितारों और ग्रहों का प्रेक्षण कर सकेंगे; टेलीस्कोप सौ गुना बड़ा दिखायेगा। उदाहरण के लिये, जब आप मंगल ग्रह को वियुति के समय (अर्थात् पृथ्वी से निकटतम होने की स्थिति में) देखेंगे, वह आपकी आँखों से 30 सेंटीमीटर दूर रखे मटर के आकार के एक लाल वृत्त जैसा दिखायी देगा।

हमारे टेलीस्कोप के लिये दो लेंसों, मोटे कागज और गोंद की आवश्यकता होगी।

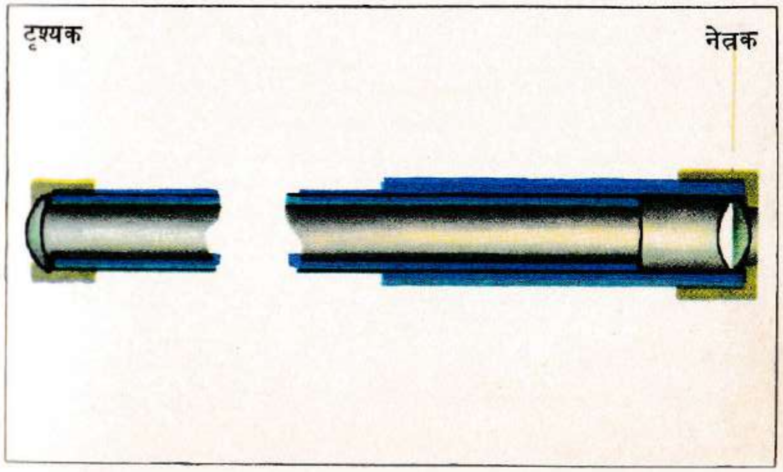
दृश्यक के लिये चश्मे की दूकान से +0.5 डिओप्ट्री का लेंस ले लीजिये। इसके व्यास के अनुकूल नली बनानी होगी – मोटे कागज को चिपकाकर।

नेत्रक के लिये 2 सेंटीमीटर नाभिक दूरी वाला विशालक लेंस लीजिये। विशालक का व्यास कुछ भी हो सकता है, पर 5 सेंटीमीटर से अधिक नहीं होना चाहिये।

टेलीस्कोप की मुख्य नली 1.9 मीटर लंबी होगी और नेत्रक वाली नली के साथ वह 2 मीटर लंबी हो जायेगी।

यदि आपको +0.5 डिओप्ट्री का लेंस नहीं मिले, तो +1 डिओप्ट्री का भी ले सकते हैं। तब टेलीस्कोप सिर्फ एक मीटर लंबा होगा। नेत्रक वहीं रखने पर टेलीस्कोप से 50 गुना वर्धन मिलेगा। लेकिन अनेक रोचक प्रेक्षणों के लिये यह वर्धन भी काफी रहेगा। ग्रहों के बिंब कुछ छोटे होंगे, पर वे स्पष्ट होंगे।

मुख्य नली बनाने के लिये मोटा और बड़ा कागज लें, जो अक्सर टेबुल पर बिछाया जाता है। उसे पाँच सेंटीमीटर



व्यास वाले डंडे या नली पर लपेटें। इसके बाद कागज को फिर से सीधा करके उसपर निशान लगा लें, यह जानने के लिए कि बनायी जाने वाली नली की आंतरिक सतह कितनी होगी। इस सतह को काले रंग से रंग दें (रंग चमकदार नहीं होना चाहिये ; नली की भीतरी सतह काली और अचमकदार होनी चाहिये)। अब कागज की किनारी पर गोंद लेप लें और उसी डंडे पर लपेटकर चिपका लें। कागज का बाकी भाग भी कसकर लपेट दें। कागज की भीतरी किनारी पर भी गोंद लेप दें, इससे कागज सीधा नहीं होगा, नली के रूप में ही रहेगा। यह ध्यान रखना चाहिये कि कागज की हर परत कसकर एक दूसरे से सटी रहे। 1.9 मीटर लंबी नली बनाने के लिये शायद ऐसी ही दो नलियां बनाकर उनके सिरों को चिपकाना पड़े। जोड़ पर कागज की लंबी पट्टी गोंद से चिपकाते हुए कई बार लपेट दीजिये। यदि आप टेलीस्कोप को किसी यात्रा पर साथ ले जाने का इरादा रखते हैं, तो नलियों को इस तरह से जोड़िये कि उन्हें आसानी से अलग भी किया जा सके।

नेत्रक वाली नली वैसे ही कागज़ से बनाते हैं ; उसकी लंबाई 20 सेंटीमीटर होनी चाहिये। उसका आंतरिक व्यास मुख्य नली के बाह्य व्यास के बराबर होना चाहिये। यह भी जरूरी है कि नेत्रक वाली नली मुख्य नली पर अच्छी तरह से फिट बैठे और उसपर उसे निर्बाध रूप से खिसकाया भी जा सके।

जब दोनों नलियां तैयार हो जायें, तो उनमें तदनुरूप लेंस जड़ना रह जायेगा।

कैंची और गोंद की सहायता से पतले गत्ते (या वैसे ही कागज) के दो ढक्कन बना लें – एक मुख्य नली के लिये, जिसमें दृश्यक होगा, और दूसरी नेत्रक वाली नली के लिये। ढक्कनों के बीच में लेंसों के व्यास से थोड़ा कम व्यास वाले गोल छेद बना लें। हर ढक्कन के छेद पर (बाहर से) उसका लेंस रखकर उसके चारों ओर गत्ते का फ्रेम रखकर उसे गोंद से चिपका दें। अब ढक्कनों को लेंस समेत जब चाहें निकालकर अलग रख ले सकते हैं। लेंसों को फ्लानेल से रगड़कर साफ कीजिये और उन्हें डिब्बे में बंद रखा कीजिये ताकि उन पर धूल न जमे।

दृश्यक का लेंस इस प्रकार फिट करना चाहिये कि उसका उभरा हुआ तल बाहर की ओर निकला रहे। जब सब तैयार हो जाये और लेंस साफ कर के अपनी जगहों पर लगा दिये जायें, तब समझना चाहिये कि टेलीस्कोप का प्रकाशिकीय भाग तैयार है। टेलीस्कोप को बाहर से तैल रंग से रंग कर अच्छी तरह सुखा लेना भी बुरा नहीं रहेगा।

बड़ी नलियां चिपकाने के लिये दीवार पर कागज चिपकाने वाला गोंद इस्तेमाल करना चाहिये। लेंसों को पकड़े रखने के लिये ढक्कन किसी कृत्रिम (संश्लिष्ट) गोंद से चिपकाना चाहिये। काम करते वक्त ध्यान रखना चाहिये कि काँच गोंद से गंदा न हो जाये। उसे बिल्कुल साफ होना चाहिये। लेंस की विपरीत किनारियों को उंगलियों से दबा कर ही उसे हाथ में लेना चाहिये।

फ्रेम में लेंस फिट करने के पहले उसे साबुन से अच्छी तरह धो लेना चाहिये फिर अच्छी तरह से सुखा कर फ्लानेल से पोंछ लेना चाहिये।

अब टेलीस्कोप का एक महत्त्वपूर्ण अंग – स्टैंड – बनाना रह गया है। स्टैंड के बिना टेलीस्कोप को काम में लाना असंभव है।

स्टैंड इतना ऊँचा होना चाहिये कि कुर्सी पर बैठ कर आकाश के विभिन्न क्षेत्र – सर के ठीक ऊपर वाले क्षेत्र से क्षितिज तक – बिना किसी कठिनाई के देखे जा सकें।

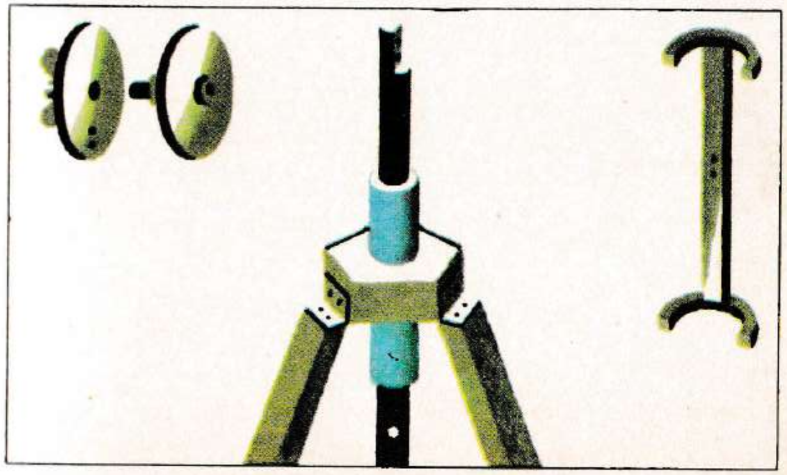
स्टैंड के दो हिस्से होंगे – एक अचल हिस्सा होगा और दूसरा चल हिस्सा होगा जो सब ओर घूम सकेगा।

स्टैंड के पाए लकड़ी के पट्टों से बनाये जायेंगे, जिसकी लंबाई 120 सेंटीमीटर होगी और अनुप्रस्थ काट 2×4 सेंटीमीटर होगी। 4 सेंटीमीटर मोटी तख्ती से एक त्रिभुज काट लीजिये, जिसकी भुजाएं करीब 12 सेंटीमीटर हों। त्रिभुज के बीचों-बीच एक छेद बना लीजिये, जिसमें 2–2.5 सेंटीमीटर व्यास का गोल डंडा अँट सके। यही हमारे टेलीस्कोप को पकड़े रखेगा। इस डंडे में हर 5 सेंटीमीट की दूरी पर आर-पार छेद कर दीजिये और छेद के आकार की एक खूंटी बना लीजिये (या धातु के छड़ के टुकड़े से भी काम चल जायेगा)। किसी छेद में इसे लगा देने पर यह त्रिभुज से टिक जायेगा और डंडा एक नियत ऊँचाई पर रुका रहेगा।

त्रिभुज के कोने काट कर कब्जों के सहारे पाये जोड़ दीं-जिये; पाये के निचले सिरे को नुकीला कर दीजिये।

डंडे के ऊपरी सिरे पर बगल से लकड़ी का एक वृत्त दो पेंचों की सहायता से कस दीजिये। इसके साथ नट-वोल्ट के सहारे दूसरा वृत्त भी जोड़ दीजिये। यह वृत्त वोल्ट के गिर्द घूम सकेगा; नट को पूरा कसने पर दोनों वृत्त आपस में सट जायेंगे। दूसरे वृत्त पर उसके चापकर्ण के सहारे धातु की एक पतली तथा 50–60 सेंटीमीटर लंबी पट्टी जड़ देते हैं। इसके सिरों पर लंबवत लकड़ी के दो वृत्त जड़ते हैं। इनका व्यास 12–15 सेंटी-मीटर होना चाहिये। वृत्तों को छल्ले का आकार दे कर उन्हें एक तरफ से काट कर मुँह बना दिया जाता है, जिसमें टेलीस्कोप रखा जा सके। मुँह के दोनों तरफ एक-एक फीता लगा देते हैं; इनसे टेलीस्कोप को बांध कर उसे गिरने से रोका जा सकता है।

यहां हमने एक सरलतम तिपाये का वर्णन किया है। आप



इसमें अपनी तरफ से कई सुधार ला सकते हैं। उदाहरणार्थ, स्टैंड में शिकंजे वाला पूरा भाग आप धातु का बना सकते हैं। लकड़ी की डंडी की जगह आप अलुमीनियम की नली का प्रयोग कर सकते हैं; शिकंजा (वृत्त, अर्ध छल्ले आदि) भी आप धातु का बना सकते हैं। स्टैंड में लकड़ी के बने जितने अंग हैं, उन्हें रेगमाल से रगड़ कर वार्निश कर देनी चाहिये।

नली कितनी ऊँचाई पर रखनी है, इसका नियंत्रण डंडी को ऊपर-नीचे खिसका कर किया जा सकता है; उसके छेद में घुसी हुई छड़ डंडी को नीचे नहीं गिरने देगी। डंडी बिल्कुल उदग्र रहे, इसके लिये त्रिभुज के छेद में पहले एक नली जड़ सकते हैं, डंडी इसी के भीतर ऊपर नीचे खिसका करेगी। तब पूरा संयंत्र टिकाऊ रहेगा और डंडी को अपने अनुतीरी अक्ष के गिर्द घुमाना सरल रहेगा।

टेलीस्कोप को आवश्यक झुकाव देने के लिये उस वृत्त को घुमाते हैं, जिसपर अर्ध छल्लों की सहायता से टेलीस्कोप टिका होता है। फिर नट को कसकर झुकाव को स्थिर कर देते हैं।

टेलीस्कोप को पकड़ने, झुकाने और घुमाने वाले अंगों को विशेष ध्यान से बनाना चाहिये। टेलीस्कोप को नियत वस्तु पर निर्दिष्ट करने के बाद भी उसे हर समय घुमाते रहना होगा, क्योंकि पृथ्वी घूमती रहती है और इसीलिये वस्तु टेलीस्कोप के दृष्टि-क्षेत्र से बाहर निकल जाया करती है। वेधशालाओं में ऐसी प्रयुक्तियां लगी होती हैं, जो टेलीस्कोप को उसी वेग से घुमाती रहती हैं, जिससे पृथ्वी वस्तु को टेलीस्कोप के दृष्टि-

क्षेत्र से बाहर निकालती रहती है। इसी कारण टेलीस्कोप आकाश के आवश्यक बिंदु की ओर स्थिर रूप से निर्दिष्ट रहता है और ज्योतिर्विद आराम से अपना प्रेक्षण करता रहता है, फोटो खींचता रहता है।

जब सब कुछ तैयार हो जाये और टेलीस्कोप स्टैंड पर फिट हो जाये, नली को क्षैतिज दिशा में घुमा कर उसे किसी दूरस्थ वस्तु (घर, वृक्ष या खंभा) की ओर निर्दिष्ट कीजिये। यह काम वैसा ही है, जैसा बंदूक से निशाना लगाना। बंदूक में नली के नजदीक वाले छोर पर लक्षक फ्रेम होता है और दूर वाले छोरे पर 'मक्खी' होती है; निशाना लगाने में लक्षक फ्रेम का मध्य बिंदु मक्खी की आँख (या छेद) और वस्तु एक सीध में होनी चाहिये। लेकिन टेलीस्कोप में ये प्रयुक्तियां नहीं हैं, आप सिर्फ इनकी कल्पना कर सकते हैं। वस्तु को टेलीस्कोप के ऊपर-ऊपर अनुतीर गुजरने वाली सरल रेखा की सीध में होनी चाहिये। 'निशाना लग चुकने' के बाद वस्तु को दृश्यक के क्षेत्र में लाना कठिन नहीं रह जाता। नेत्रक में देखते हुए उसे थोड़ा आगे-पीछे खिसकाइये, जबतक कि बिंब स्पष्ट न हो जाये। बिंब उल्टा होगा पर आकाशीय पिंडों को देखने पर इसका कोई महत्त्व नहीं रहता।

बिंब की स्पष्टता टेलीस्कोप में लेंसों के सुकेंद्रन पर निर्भर करती है। इसका अर्थ है कि दोनों लेंसों के केंद्र नली की मध्य रेखा (अनुतीरी अक्ष) पर ही स्थित रहें। सुकेंद्रता की जाँच करने के लिये नेत्रक की नली को अक्ष के गिर्द घुमाइये। यह काम

दिन में करना चाहिये। यदि बिंब सब ओर से समान तरह स्पष्ट रहता है, तो सुकेंद्रन ठीक है। अब शाम का इंतजार कीजिये; यदि आकाश साफ रहेगा, तो आप उसकी रोचक यात्रा आरंभ कर सकेंगे।

टेलीस्कोप सौर मंडल के अनेक ग्रहों, चांद के गड्ढों और सागरों के साथ आपका परिचय करायेगा। तारे उतने ही बड़े दिखेंगे, जितने बड़े वे नंगी आँखों से दिखते हैं; सिर्फ वे कुछ अधिक चमकदार लगेंगे। लेकिन टेलीस्कोप से ऐसे तारे भी दिखेंगे, जो नंगी आँखों से बिल्कुल नहीं दिखते।

यदि आपको ज्योतिर्वैज्ञानिक कैलेंडर मिल सके, जिसमें तारक-नभ का मानचित्र दिया रहता है, तो आपको यह पता रहेगा कि कब, कहां और क्या ढूंढ़ना है।

ज्योतिर्विद किस बात से असंतुष्ट हैं? किस बात से वे असंतुष्ट हैं? अभी एक से एक उत्तम वेधशालाएं बनायी जा चुकी हैं, जहां शक्तिशाली टेलीस्कोप तथा अन्य सुविकसित उपकरण लगे हुए हैं। उनकी सहायता से सौर मंडल के ग्रहों और हमारी आकाश-गंगा के अन्य तारक-तंत्रों का ही नहीं, दूसरी आकाश-गंगाओं के रहस्यों का भी अध्ययन संभव हो जाता है। ज्योतिर्विद वेधशालाओं के उपस्करों और संयंत्रों से तो पूरी तरह संतुष्ट हैं, पर पृथ्वी के वातावरण से... बिल्कुल नहीं! यह कुछ अजीब-सा लगता है। वातावरण और सौर किरणों की कृपा से ही पृथ्वी पर जीवन का अस्तित्व आया है। फिर ऐसी

चीज से असंतुष्ट कैसे हुआ जा सकता है?

पृथ्वी का वातावरण ग्रहों, सितारों, अन्य आकाश-गंगाओं से आने वाले प्रकाश को इस तरह अपवर्तित करता है कि उनका बिंब कुछ बिगड़ जाता है। इसके अतिरिक्त, वातावरण ब्रह्मांड की गहराइयों से आने वाले रेडियो-संकेतों को भी प्रभावित करता है। वातावरण में आर्द्रता होती है, धूल-कण होते हैं, उसमें तैरते बादल आकाश के ठीक उस क्षेत्र को ढक ले सकते हैं, जिसे अभी देखना है।

इसीलिये ज्योतिर्विदों का एक ही सपना है – पार्थिव वातावरण के पार अंतरिक्ष में जा कर प्रेक्षण करना। पर अभी उन्हें पृथ्वी पर ही रहना पड़ रहा है। सिर्फ अंतरिक्ष-यात्री जब कक्षीय स्टेशनों से प्रेक्षण करते हैं, वातावरण उनके काम में बाधा नहीं पहुँचा पाता। इसीलिये अंतरिक्ष-यात्री जब अंतरिक्ष में जाते हैं, उन्हें ज्योतिर्विदों की ओर से कई काम दिये जाते हैं। हमारे कक्षीय स्टेशन आधुनिक उपकरणों से लैस हैं। सिर्फ टेलीस्कोपों का आकार कुछ सीमित है। अंतरिक्ष यात्री वहां से फोटो-चित्र, उपकरणों द्वारा कागजी फीतों पर खींचे गये ग्राफ, विभिन्न प्रेक्षणों और अन्वीक्षणों के परिणाम आदि जमा कर के ले आते हैं। पृथ्वी पर वैज्ञानिक लोग इन सारी सामग्रियों का अध्ययन करके अंतरिक्ष में अगली बार जाने वालों के लिये काम तैयार करते हैं।

हमारे टेलीस्कोप से प्रेक्षण पर वातावरण के प्रभाव का कुछ ज्यादा महत्त्व नहीं होगा। हम अपने उपकरण और अपनी परिस्थितियों से पूरी तरह संतुष्ट रहेंगे।

दूर दुनिया से रंगीन संदेश. प्रकाशिक टेलीस्कोपों से हम दूर-दूर की दुनिया देख सकते हैं, या सविस्तार अध्ययन के लिये आकाश के किसी क्षेत्र का फोटो-चित्र प्राप्त कर सकते हैं। पर इन उपकरणों के अतिरिक्त ऐसे उपकरण भी हैं, जो हमारी आकाश-गंगा के दूरदराज के क्षेत्रों में चल रही जटिल भौतिक प्रक्रियाओं से उत्पन्न होने वाले रेडियो-संकेत ग्रहण करते हैं। अंतरिक्षी किरणों का अध्ययन करने के लिये भी उपकरण हैं। विशेष उपकरणों की सहायता से सूरज तथा सितारों से निकली एक्स-किरणों का भी अध्ययन किया जाता है।

पर दूरस्थ दुनिया का अध्ययन करने की एक बहुत रोचक विधि भी है, जिससे पता चलता है कि बहुत दूर स्थित तारा किन तत्त्वों से बना है, किस दिशा में और किस वेग से गतिमान है।

इस विधि का नाम है – स्पेक्ट्रमी विश्लेषण। कहा जा सकता है कि स्पेक्ट्रमदर्शी उपकरण की सहायता से वैज्ञानिकगण अंतरिक्ष से 'लिखित रूप में' समाचार प्राप्त करते हैं। रंगों की भाषा में लिखे इन संदेशों को पढ़कर वे ब्रह्मांड के बारे में अनेक बातें जान लेते हैं।

रंगों से लिखे गये इन संदेशों को कैसे पढ़ा जाता है, यह समझने के लिये हम चंद प्रयोग संपन्न करेंगे।

प्रकाश का धब्बा और उसकी परिणतियां. हम सूर्य के प्रकाश के साथ प्रयोग शुरू करेंगे।

काँच का तिनफलकी प्रिज्म आपके पास शायद ही हो, पर मोटे काँच का आईना घर में जरूर होगा। मोटे काँच के आइने की किनारी कुछ ढालू बनायी जाती है। एक छोटे से आईने से सूर्य को मोटे काँच वाले आईने पर प्रतिबिंबित कीजिये (आपको प्रकाश का धब्बा दिखेगा)। यदि सूर्य-किरणें आईने पर कोई कोण बनाते हुए गिरेंगी और फिर पारे के अमलगम से परावर्तित होकर ढालू किनारी से होकर निकलेंगी, तो सामने की दीवार या सफेद कागज पर इंद्रधनुष की सतरंगी पट्टी दिखायी देगी।

कभी-कभी कमरे में इंद्रधनुष की पट्टी संयोगवश भी उत्पन्न हो जाती है। धूप निकले दिन को आईने के सामने छत या दीवार पर अचानक ही खूबसूरत सी सतरंगी पट्टी दिखने लगती है।

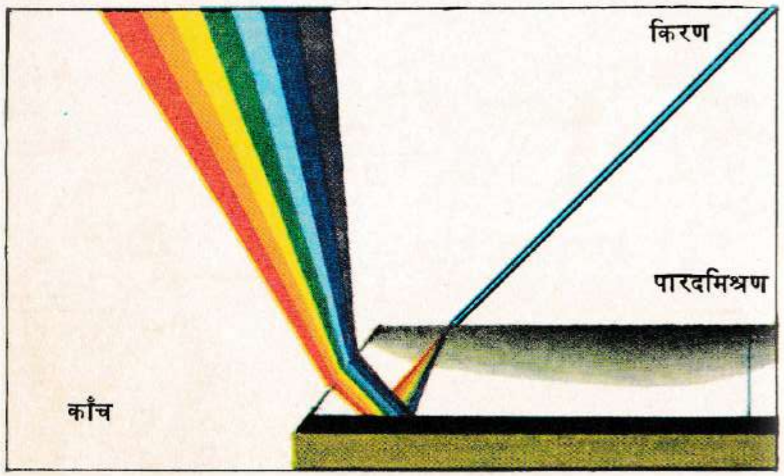
स्पेक्ट्रम (वर्णपट्टी) का कोई भी रंग दूसरे रंग में एकबारगी से नहीं बदल जाता, धीरे-धीरे उसमें परिणत होता है। न्यूटन ने स्पेक्ट्रम को मुख्यतः सात रंगों से बना हुआ माना था।

लाल
नारंगी
पीला
हरा
आसमानी
नीला
बैंगनी

स्पेक्ट्रम के अलग-अलग रंगों के साथ रोचक प्रयोग किये जा सकते हैं। उदाहरणतया, स्पेक्ट्रम से एक छोड़कर (एक के बाद एक) लिये गये दो मुख्य रंगों को मिलाकर स्पेक्ट्रम का तीसरा, उनके बीच का, मुख्य रंग प्राप्त किया जा सकता है।

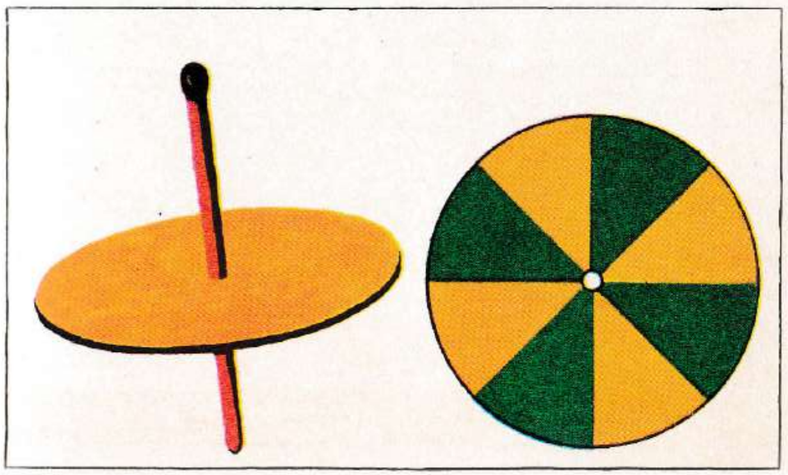
यथा, लाल और पीले रंग को मिलाने पर नारंगी प्राप्त होता है; नारंगी और हरे रंग को मिलाने पर पीला रंग मिलता है; पीला और नीला मिलाने पर हरा बनता है; हरे और नीले से आसमानी बनता है...

प्रयोगशाला में रंगों को मिलाने का काम प्रक्षेपक (चित्रक्षेपी लालटेन) और रंगीन शीशों – प्रकाश-फिल्टरों – की सहायता से किया जा सकता है। पर हमारे पास ये वस्तुएं नहीं हैं।



इसलिये हम लोग स्पेक्ट्रम के रंगों को नहीं, बल्कि रंगाई के रंगों को आपस में मिलायेंगे। इसके लिये अच्छे जलरंगों तथा अपने हाथों से बनायी गयी एक साधारण घिरनी का उपयोग करेंगे।

ड्राइंग के सफेद मोटे कागज से कुछेक वृत्त काट लें (व्यास 4.5–5 सेंटीमीटर) और एक वैसा ही वृत्त कुछ मोटे गत्ते से काट लें। वृत्तों को आठ समान खंडों में बाँट लें। इस क्रिया में पेंसिल से बहुत हल्की रेखाएं खींचनी चाहिये, ताकि वांछित रंग गंदे न प्राप्त हों। वृत्त-खंडों को एक-एक करके उन रंगों से रंग लीजिये, जिन्हें आपस में मिलाना है। उदाहरणतया, एक खंड को लाल से रंग दीजिये, दूसरे को – पीले से, फिर लाल से, फिर पीले से, आदि। रंग बहुत गाढ़ा नहीं होना चाहिये;



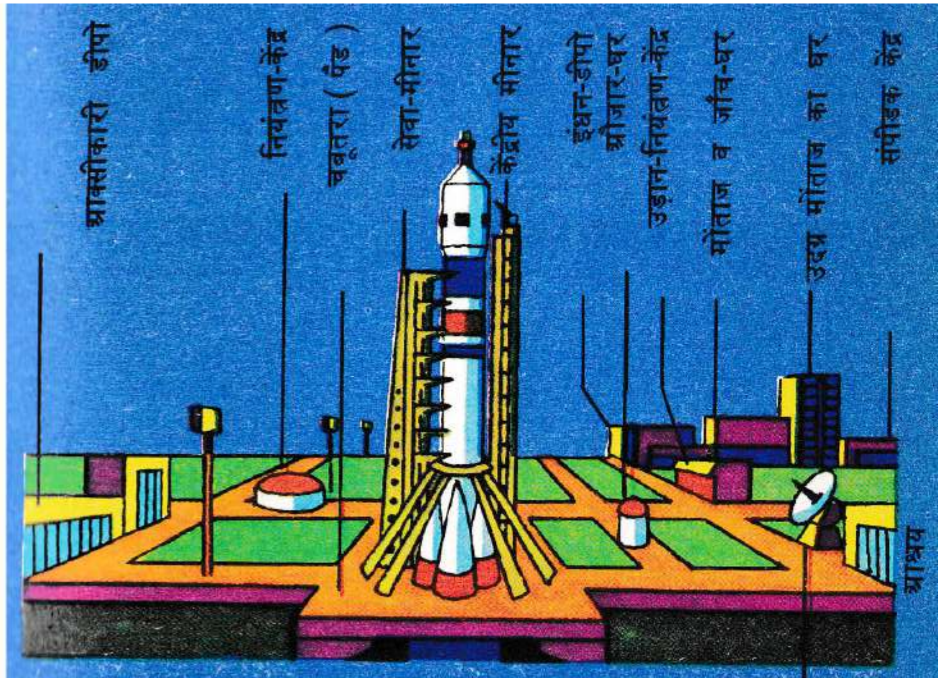
वैसा ही हो, जैसा जलरंग से सामान्यतया रंगते हैं: रंग चटकदार हो, पर पारदर्शक रहे, कागज झलकता रहे। रंग समरूप रहे, कहीं गाढ़ा और कहीं पतला न दिखे। रंगने के पहले खंड को सादे पानी से गीला कर लीजिये, कूँची से अतिरिक्त पानी दूर कर लीजिये; समरूपता से गीले खंड पर रंग पानी में मिलाकर लेपिये। जब रंग सूख जाये, वृत्त को सीधा करके उसे गत्ते के वृत्त पर रखिये और उनके केंद्र पर नुकीली तीली चुभाकर आर-पार निकाल लीजिये। आपको एक घिरनी मिल जायेगी। अब उसे चिकनी सतह पर नचाइये; आपको लाल और पीले रंगों को मिलाने से बना हुआ एक नया, नारंगी, रंग दिखेगा।

प्रयोग को कई बार दुहराने के लिये आप गत्ते पर सफेद कागज चिपकाकर एक साथ कई वृत्त काट ले सकते हैं। हरेक वृत्त को दो-दो रंगों से रंग लीजिये, जिन्हें आप मिलाना चाहते हैं।

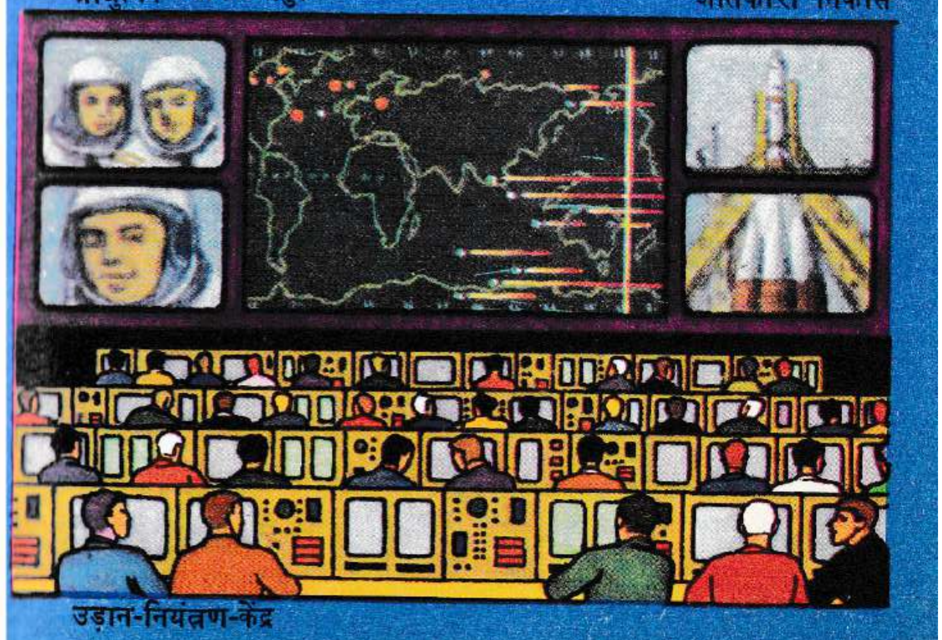
रंग मिलाने के निम्न प्रयोग भी कर सकते हैं। स्पेक्ट्रम में तथाकथित अतिरिक्त रंग भी होते हैं। प्रकाशिक रूप से इन्हें मिलाने पर सफेद रंग प्राप्त होता है। ये रंग हैं: लाल और आसमानी-हरा, नारंगी और आसमानी, पीला-हरा और बैगनी। यदि घिरनी की सहायता से तीन रंगों – लाल, हरा और नीला – को मिलाया जाये, तो इससे भी सफेद रंग ही मिलेगा।

लाल, हरा और नीला ऐसे रंग हैं, जो रंगीन फोटोग्राफी, फिल्म और टेलीवीजन में मुख्य रंगों की तरह प्रयुक्त होते हैं।

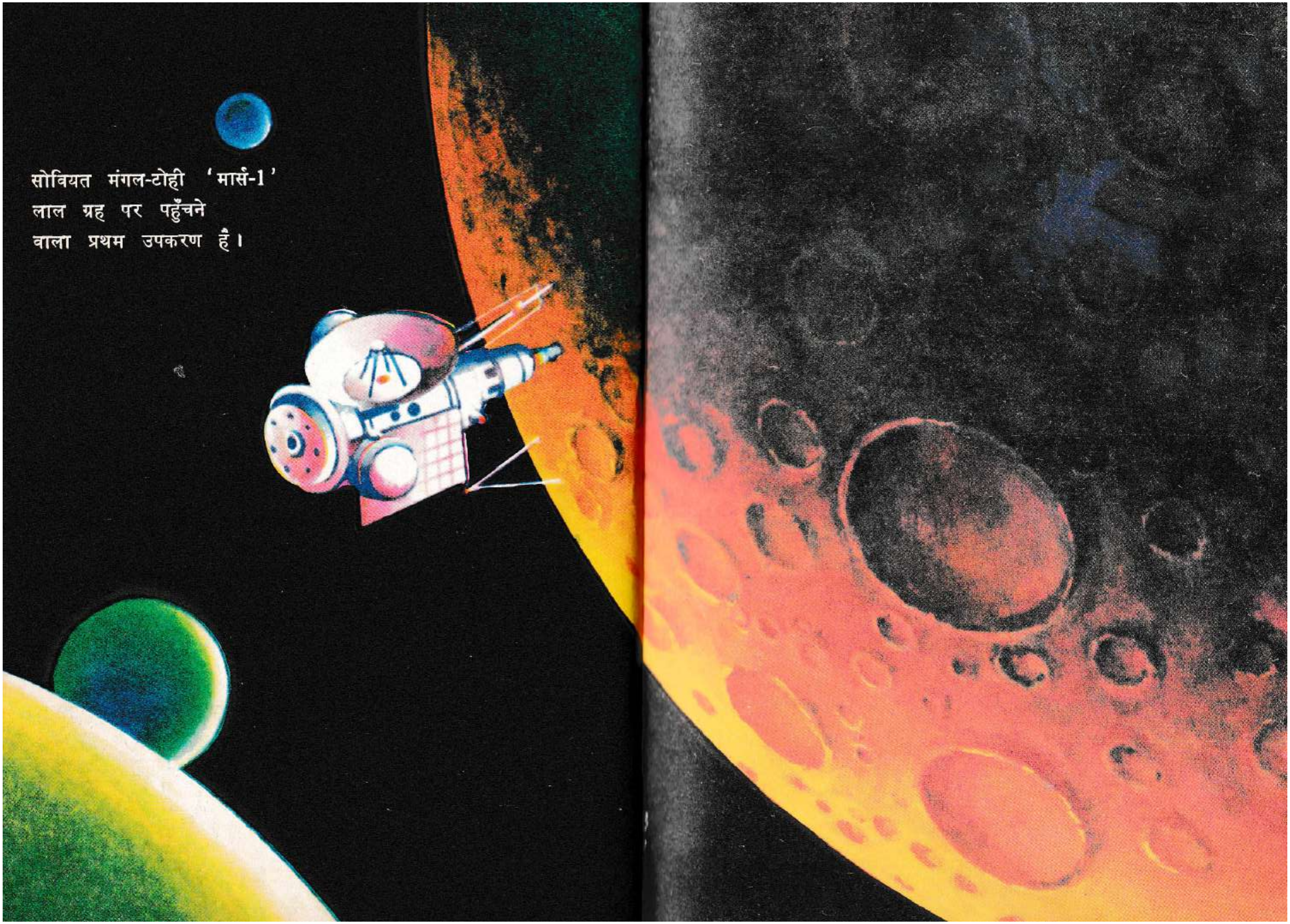
निश्चय ही आपकी घिरनी से बिल्कुल शुद्ध श्वेत रंग प्राप्त करना कठिन होगा, क्योंकि अच्छे से अच्छे जलरंग में भी कुछ

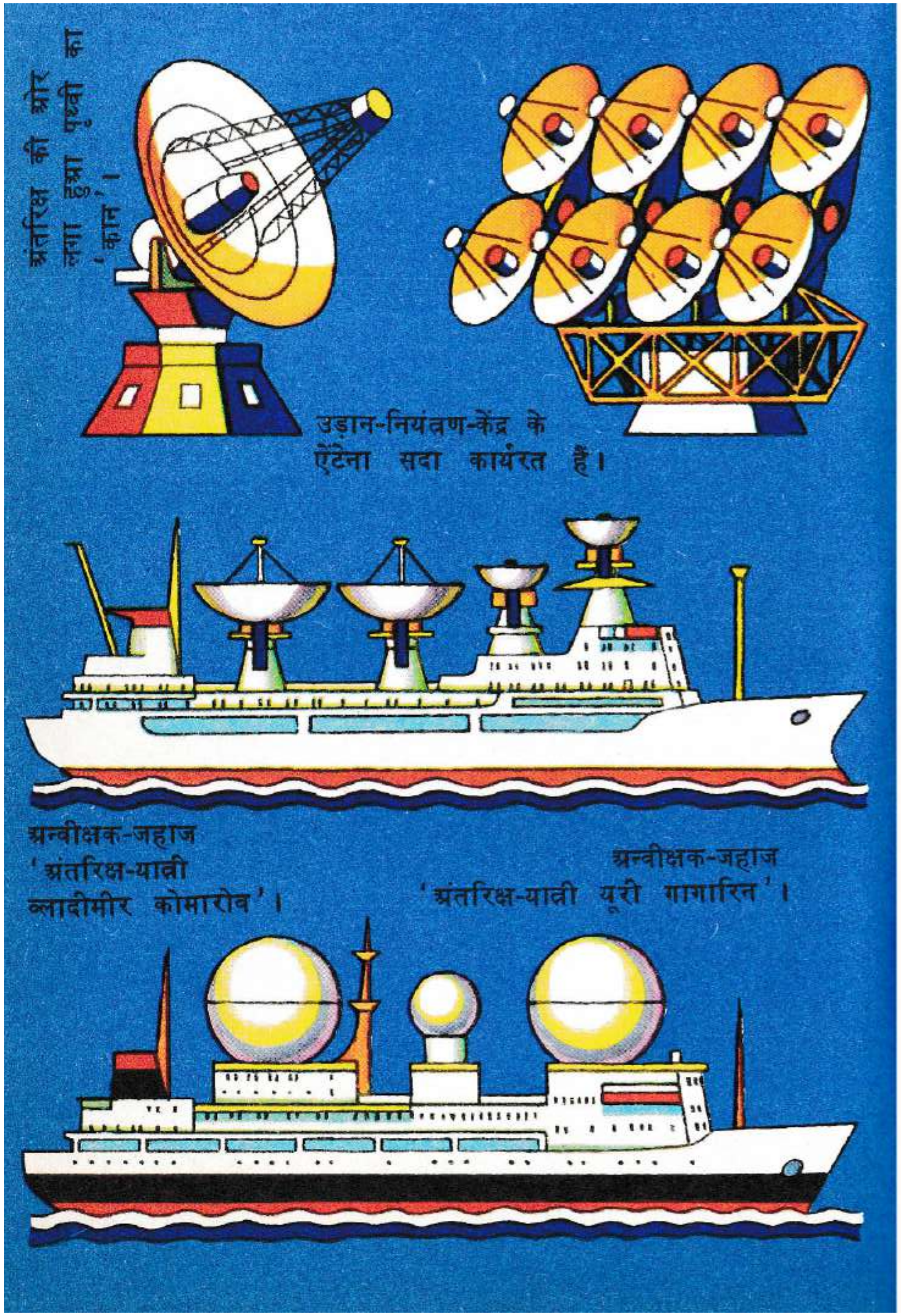


आधुनिक राकेट-अड्डा


उड़ान-नियंत्रण-केंद्र

सोवियत मंगल-टोही 'मार्स-1'
लाल ग्रह पर पहुँचने
वाला प्रथम उपकरण है।





अशुद्धियां मिली रहती हैं। लेकिन आप जितना ही हल्के ढंग से और कोमलता के साथ रंग लेपेंगे, परिणाम उतने ही अच्छे नजर आयेंगे।

सफेद और काले के लिये भी हम 'रंग' शब्द का उपयोग करते हैं, पर यह गलत है। श्वेत कोई रंग नहीं है; यह सभी रंगों का प्रकाशिक योग है। इसी तरह काला भी कोई रंग नहीं है। काला जो कुछ भी है, वह सभी रंगों या सामान्यत: प्रकाश की अनुपस्थिति है। लेकिन स्पेक्ट्रम के रंगों के साथ-साथ 'काला रंग', 'सफेद रंग' भी कहने की प्रथा चल चुकी है।

चित्रकार लोग विभिन्न रंगों को मिलाने का विस्तृत प्रयोग करते रहते हैं। चित्रकारी में एक विशिष्ट धारा भी थी – बिंदु-वाद (प्वांयटीलीज्म)। चित्रकार कैनवास पर रंग के छोटे-छोटे बिन्दु बनाता था; वह अलग-अलग रंगों का इसी प्रकार उपयोग करता था, जिसके फलस्वरूप एक खास दूरी से देखने पर एक नये रंग की अनुभूती मिलती थी।

तरंगों के बारे में बातचीत अनिवार्य है. काँच का प्रिज्म सफेद प्रकाश को रंगीन किरणों में क्यों विघटित कर देता है? किसी छेद से छनकर आने वाला प्रकाश क्यों अचानक रंगीन पट्टी में बदल जाता है?

साधारण सफेद रंग, जिसे सूर्य हमतक आठ मिनट की देरी से ही सही, पर बहुत उदारता के साथ बहुतायत में भेजता रहता है, बहुत ही जटिल रंग है।

वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है कि प्रकाश तरंगी प्रकृति रखता है, प्रकाश एक बहुत ही नन्ही विद्युचुंबकीय तरंग है (ठीक वैसी ही, जैसी रेडियो या टेलीवीजन ग्रहण करते हैं)। फर्क यही है कि रेडियो-तरंगें मीटरों और सेंटीमीटरों में नापी जाती हैं, जबकि प्रकाश-तरंगें मिलिमीटर के दसलाखवें अंशों में नापी जाती हैं।

सफेद प्रकाश की किरण कई रंगीन किरणों के मिलने से बनती है, जिन्हें हम अलग से देखने में असमर्थ रहते हैं (सफेद प्रकाश में)। जब सफेद किरण काँच के तिनफलकी प्रिज्म से गुजरती है, प्रिज्म रंगीन किरणों को छाँट-छाँटकर अलग कर देता है, जिससे रंगीन पट्टी (स्पेक्ट्रम) मिलती है। इसमें हर रंग की किरण का अपना निश्चित स्थान होता है।

सबसे लंबी तरंगें (दृश्य स्पेक्ट्रम के परास में) लाल रंग की तरंगें हैं। प्रिज्म उन्हें सबसे कम विचलित करता है। बैंगनी रंग की तरंगें सब से छोटी होती हैं। वे सबसे अधिक विचलित होती हैं। बाकी रंगों की तरंगें इन दोनों के बीच होती हैं।

स्पेक्ट्रम क्या बता सकता है. सौर किरणें काँच के प्रिज्म से गुजरकर सतरंगी पट्टी में परिणत हो जाती हैं। वैज्ञानिकों ने स्पेक्ट्रमदर्शी नाम का एक उपकरण बनाया, जिससे सँकरी-सी नहीं, काफी चौड़ी वर्णपट्टी मिलती है। इस पट्टी में एक रंग बहुत धीरे-धीरे दूसरे रंग में परिणत होता है। उपकरण में एक विशेष पैमाना भी होता है, जिसकी सहायता से देखा जा सकता है

कि हर रंग बिल्कुल अपनी निश्चित जगह पर ही होता है। प्रयोगों से पता चला कि उत्तप्त ठोस पिंड संतत स्पेक्ट्रम देते हैं, जबकि उत्तप्त गैसें कुछेक ही रंगीन पट्टियां दे पाती हैं, और वे भी इतनी सँकरी कि उन्हें रेखा माना जा सकता है।

उदाहरण के लिये, सोडियम धातु का उत्तप्त वाष्प सिर्फ दो पीली रेखाएं देता है, जो एक-दूसरी के बहुत करीब होती हैं।

यदि संतत स्पेक्ट्रम की पट्टी को सोडियम के अपेक्षाकृत ठंडे वाष्प से होकर देखा जाये, तो पैमाने के जिस स्थान पर उत्तप्त सोडियम की दो परस्पर निकटस्थ पीली रेखाएं दिखी थीं, वहां अब दो काली रेखाएं दिखेंगी (अपेक्षाकृत ठंडे वाष्प से तात्पर्य है कि वाष्प इतना गर्म नहीं है कि चमकने लगे)। सोडियम का वाष्प स्पेक्ट्रम के सभी रंगों को अपने से होकर गुजरने देता है, जिन्हें वह खुद उत्तप्त अवस्था में उत्सर्जित करता है।

सूर्य तथा सितारों के संतत स्पेक्ट्रम में अनेक काली रेखाएं होती हैं। बात यह है कि सूर्य (या किसी दूरस्थ सितारे) की किरणें उत्तप्त परिवेश से संतत स्पेक्ट्रम के रूप में उत्पन्न होती हैं। सूर्य या प्रेक्षणाधीन सितारे के वातावरण में उत्तप्त वाष्प होते हैं, लेकिन उनका तापक्रम इतना अधिक नहीं होता, जितना किरणों के उत्तप्त स्रोत का होता है, इसीलिये हर वाष्प स्पेक्ट्रम का अपना-अपना अंश रोककर रख लेता है।

स्पेक्ट्रमदर्शी से संतत स्पेक्ट्रम में अनेक काली रेखाएं दिखती

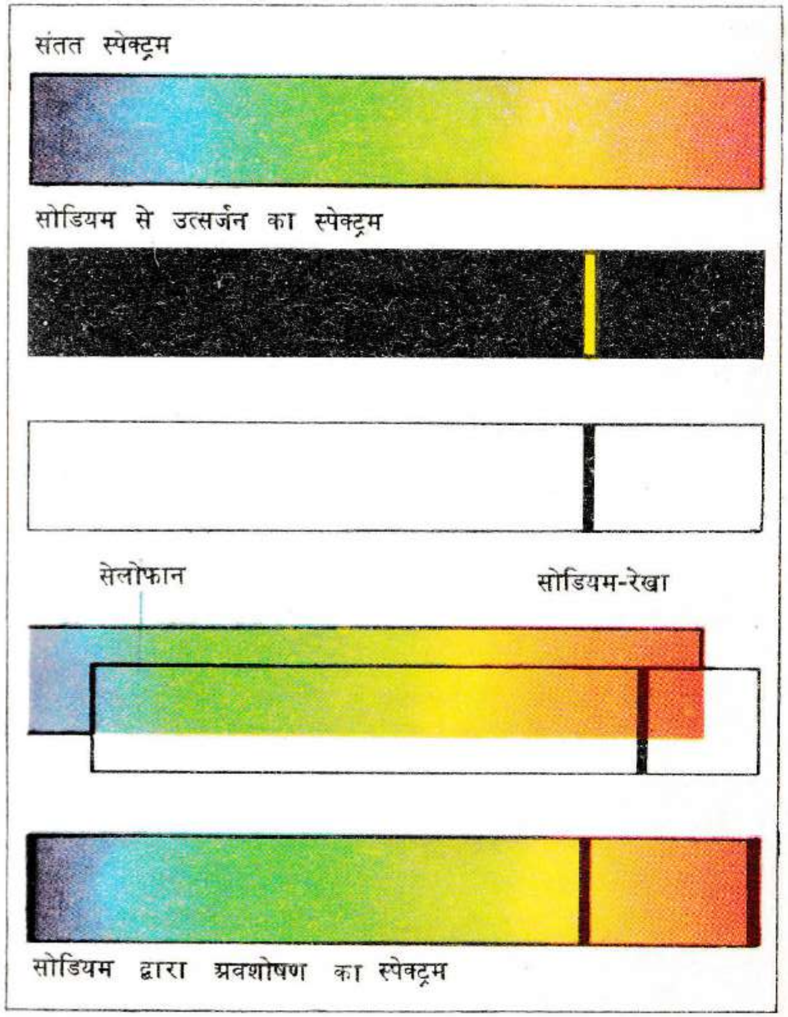
हैं। इनका अर्थ निम्न प्रकार से निकाला जाता है : काली रेखाओं का हर समूह किसी नियत गैस के कारण ही उत्पन्न होता है। उनके आधार पर हम कह सकते हैं कि सूर्य या सुदूर सितारे पर कौन-कौनसी गैसें हैं।

यह एक रोचक बात है कि सूरज और तारों पर वैज्ञानिकों को वे ही तत्त्व मिले हैं, जो पृथ्वी पर हैं।

एक ऐसी घटना भी हुई थी कि सूर्य पर एक गैस मिली, जो पृथ्वी पर नहीं थी। उसका नाम सूर्य के सम्मान में हीलियम रखा गया (यूनानी में सूर्य को हेलिओस कहते हैं)। इसके कोई 26 वर्ष बाद यही गैस पृथ्वी पर भी मिली। हाइड्रोजन के बाद यही सबसे हल्की गैस है और अब उद्योग तथा वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में इसका विस्तृत उपयोग हो रहा है।

जलरंगों से ठीक इतने बड़े आकार की संतत वर्णपट्टी बनाइये, जितनी बड़ी भौतिकी की पाठ्यपुस्तक में है; उसे चारों तरफ से चौखटी रेखा में घेर लीजिये।

अब सफेद पादर्शक सेलोफेन (प्लास्टिक की झिल्ली) पर वैसा ही चौखटा घेरा बनाइये और उसे सोडियम के स्पेक्ट्रम पर रखिये। जिस जगह आप पीली पट्टी देखेंगे (यह दरअसल दो निकटस्थ पीली रेखाएं हैं, जिन्हें सरलता के लिये एक मोटी पट्टी मान लेते हैं), वहां चाइना इंक से उसी आकार की काली पट्टी बना लीजिये। जब स्याही सूख जाये, तो सेलोफेन को उस संतत स्पेक्ट्रम पर रखिये, जिसे आपने जलरंग से बनाया है। आपको सोडियम द्वारा अवशोषण का स्पेक्ट्रम मिलेगा।



आप सोच सकते हैं कि यह सब करने की जरूरत ही क्या है,, जब रंगीन चित्र में सब कुछ पहले से बना हुआ है। लेकिन बात यह है कि आपके हाथ में सेलोफेन का टुकड़ा सोडियम-वाष्प का काम करता है, जिससे होकर आप स्पेक्ट्रम देखते हैं। 'सोडियम-वाष्प' हटा लीजिये, आपको स्पेक्ट्रम अछूते रूप में मिलेगा। सेलोफेन को रखने पर काली पट्टी दिखने लगती है, जिसे सोडियम का 'हस्ताक्षर' कह सकते हैं।

भौतिकी की पाठ्यपुस्तक में आपको सूर्य का स्पेक्ट्रम मिलेगा, जिसमें अनेक काली पट्टियां भी होंगी (ये काली पट्टियां सपेक्ट्रम-दर्शी के कारण ही सुस्पष्ट दिख पाती हैं)। इसका अर्थ है कि सौर वातावरण की कम उत्तप्त गैसों ने संतत स्पेक्ट्रम का अपना-अपना हिस्सा अवशोषित कर लिया है। लेकिन जब पूर्ण सूर्य-ग्रहण होता है, चांद ज्योतिर्विद के लिये एक बहुत ही फायदे का काम करता है: वह सूर्य को पूरा-पूरा ढक लेता है, लेकिन सूर्य के चारों ओर उत्तप्त गैसों का वातावरण हमारे लिये खुला रहता है। स्पेक्ट्रमदर्शी में सिर्फ इसका स्पेक्ट्रम दिखता है, जिसमें काली रेखाओं की जगह उन गैसों की रंगीन रेखाएं होती हैं, जो सूर्य के उत्तप्त वातावरण में उपस्थित रहती हैं। अब ये गैसें अपना स्पेक्ट्रम स्वयं विकिरणित करती हैं और अपने बारे में अपनी रंगीन भाषा में बताने लगती हैं। सौर वातावरण की ऊपरी परतें उत्तप्त होती हैं और बहुत तेज चमकती हैं, फिर भी ये सूर्य की सबसे ठंडी जगहें हैं। सूर्य की गहराइयों में तापक्रम दो करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड तक पहुँचता है और सूर्य का प्रकाश-मंडल, जिसे औपचारिक तौर पर उसकी सतह माना जाता है, सिर्फ छे हजार डिग्री सेंटीग्रेड तक ही गर्म होता है। सूर्य के उत्तप्त वातावरण का तापक्रम और भी कम होता है।

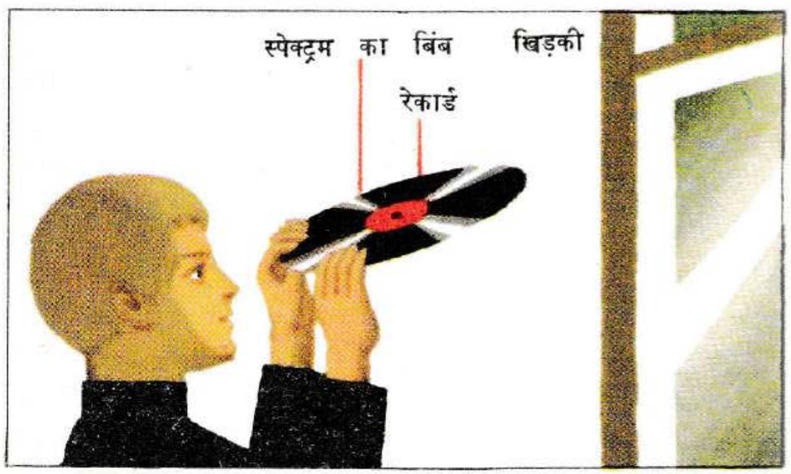
जब सूर्य-ग्रहण होता है, आप इसे अच्छी तरह कालिख पुते शीशे से भी देख सकते हैं। लेकिन यदि आप सूर्य-ग्रहण देखने के लिये पहले से एक फोटो-प्लेट तैयार कर लेंगे, तो और भी अच्छा रहेगा। फोटो-प्लेट को पहले प्रकाश में रखते हैं, फिर उसकी धुलाई कर लेते हैं। आपको पारदर्शक प्लेट मिलेगा, जिसकी सतह समरूपता के साथ काली होगी। इससे देखना अधिक सुविधाजनक होगा। ग्रहण के पहले सूर्य ऐसे प्लेट से एक फीका प्रकाशमान धब्बा की तरह दिखता है, जिससे आँखें नहीं चौंधियातीं।

अंतरिक्ष में 'इंद्रधनुष'. "असाधारण सौंदर्य है!" – ये शब्द यूरी गागारिन के थे, जिन्होंने पहली बार अंतरिक्ष की यात्रा की। उस समय उन्होंने निम्न पंक्तियां लिखीं: "जब मैंने क्षितिज की ओर देखा, पृथ्वी की प्रकाशमान सतह से रंगों का बिल्कुल काले आसमान में संक्रमण तीव्र वैषम्य लिये हुए था। हमारा ग्रह एक आसमानी तेज से घिरा हुआ था, जो धीरे-धीरे गहरा होता हुआ बैगनी में परिणत हो रहा था। यह संक्रमण इतना सुंदर था कि उसे शब्दों में व्यक्त करना कठिन है। यहां तक कि हमारी सशक्त रूसी भाषा में भी इस चित्र की तुलना के लिये शायद ही कोई शब्द मिले।"

आगे गागारिन ने लिखा है:

"जब अंतरिक्ष-यान पृथ्वी के अंधकारमय हिस्से की तरफ से दिन वाले हिस्से में प्रविष्ट होता था, तो पृथ्वी निम्न प्रकार की दिखती थी। पहले चटकदार नारंगी पट्टी दिखती थी। फिर धीमे-धीमे आसमानी रंग में परिणत होती थी, इसके बाद फिर गाढ़े बैगनी रंग और फिर लगभग काले रंग में परिणत हो जाती थी। रंगों का मेल कुछ इस प्रकार का था कि वर्णन नहीं किया जा सकता। वह हमेशा-हमेशा के लिये याद रह जाता है।"

अंतरिक्ष की दूसरी उड़ान सोवियत अंतरिक्ष-यात्री गेर्मान तीतोव ने भरी थी। उन्होंने अंतरिक्ष से पृथ्वी के कुछ रंगीन चित्र लिये। एक चित्र उस क्षण लिया गया था, जब यान पृथ्वी के अंधेरे भाग से उजाले भाग में प्रविष्ट हो रहा था। इस चित्र



में पृथ्वी के गोल क्षितिज के चारों ओर इंद्रधनुषी तेज छाया हुआ दिख रहा था, जिसके बारे में गागारिन ने लिखा था।

पृथ्वी का वातावरण एक विराट प्रिज्म का काम करता है, जो सूर्य के प्रकाश को उसके अवयवी रंगों में विघटित करता है।

इसमें कोई शक नहीं कि वास्तविक दृश्य की रंगीनी अच्छे से अच्छे फोटो-चित्र में भी पूर्णता के साथ नहीं उतर सकती।

अभी जिस प्रयोग का वर्णन हम करेंगे, उसकी सहायता से आप भी प्राकृतिक रंगों के सौंदर्य का रसास्वादन कर सकेंगे। इससे आपको और उन्हें भी, जिन्हें यह प्रयोग दिखायेंगे, अपार खुशी होगी।

लेकिन इस प्रयोग में आपको स्पेक्ट्रम के चटकदार रंग प्रिज्म द्वारा प्रकाश के अपवर्तन से नहीं मिलेंगे, वे विवर्तन से मिलेंगे। इसके लिये एक बहुत सरल विधि है, आपको मोटे आईने से मिले स्पेक्ट्रम से भी बढ़िया स्पेक्ट्रम प्राप्त होगा।

ग्रामोफोन का रेकार्ड लीजिये। यदि लौंग प्लेयर हो, तो और भी अच्छा है, क्योंकि इसमें खाँचे बहुत सटा-सटाकर बनाये जाते हैं। प्रयोग दिन में करते हैं। रेकार्ड लेकर खिड़की के पास आइये और उसे क्षैतिज स्थिति में पकड़े हुए पास वाली किनारी को आंखों से कुछ नीचे नाक पर रखिये और उसके सूक्ष्म खाँचों को देखिये। इस कार्य में दूर वाली किनारी को आपके दृष्टि-क्षेत्र में खिड़की के ऊपरी चौखट से कुछ नीचे रहना चाहिये। खिड़की के ऊपरी चौखट और रेकार्ड की दूर वाली किनारी के बीच आकाश का टुकड़ा जरूर दिखाना चाहिये,

लेकिन इतना ही कि वह बढ़े हुए हाथ की एक या दो उंगली से ढक जाये।

रेकार्ड की दूर वाली किनारी को थोड़ा ऊपर-नीचे करते हुए आप एक ऐसी स्थिति पा लेंगे, जब नजदीक वाली किनारी के पास खाँचों पर चमकदार रंगीन पट्टी दिखायी देने लगेगी। रेकार्ड का झुकाव इस तरह बनाया जाये कि पट्टी की चमक अधिकतम हो।

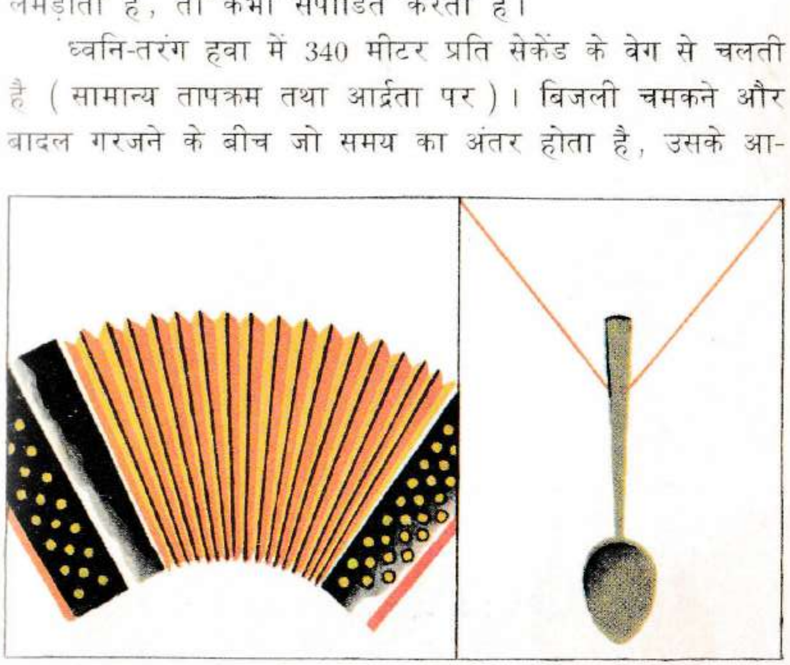
वैज्ञानिकों के लिये अंतरिक्षी पहेली. दूरस्थ सितारों का स्पेक्ट्रम अध्ययन करते वक्त वैज्ञानिकों ने एक नयी संवृत्ति देखी: कुछ सितारों के स्पेक्ट्रमों में सभी रसायनिक तत्त्वों की लंछक काली रेखाएं अपनी जगह से खिसकी हुए थीं। स्थानांतरण बहुत अधिक नहीं था, पर वह स्पष्ट प्रेक्षित हो रहा था। अलग-अलग तारों में यह स्थानांतरण भी अलग-अलग था, लेकिन मुख्यतः वह स्पेक्ट्रम के लाल हिस्से की दिशा में था। यह एक पहेली थी, पर वैज्ञानिकगण इसे बहुत जल्द समझ गये और जल्द ही इस संवृत्ति का उपयोग करने लगे। स्पेक्ट्रम में प्रेक्षित यह छोटा सा परिवर्तन दूरस्थ सितारों के बारे में ऐसी सूचनाएं देने लगा, जिन्हें और किसी विधि से प्राप्त नहीं किया जा सकता। इस संवृत्ति का नाम 'लाल स्थानांतरण' पड़ा क्योंकि सितारों की स्पेक्ट्रमी रेखाएं स्पेक्ट्रम के लाल हिस्से की ओर स्थानांतरित थीं।

'लाल स्थानांतरण' का रहस्य अच्छी तरह समझने के लिये हम फिर से तरंगों की ओर लौटते हैं।

ध्वनि-तरंगें. यह ज्ञात है कि ध्वनि-तरंगें अनुतीरी होती हैं। कैसी दिखती हैं वे? प्रकृति में अनुतीरी तरंगें देख पाना मुश्किल है। प्रकाशिक तरंगों की बात दूसरी है। वे अनुप्रस्थी होती हैं। पानी पर उत्पन्न होने वाली तरंगें प्रकाश-तरंगों की प्रकृति का मोटा-मोटी अंदाज दे देती हैं।

अनुतीरी तरंगों के रूप का अंदाज लगाने के लिये हर्मोनियम की भाँथी का फैलना और सिकुड़ना देखिये। अनुतीरी तरंगें प्रत्यास्थ माध्यम में इसी तरह प्रसर करती हैं – कभी उसे लमड़ाती हैं, तो कभी संपीडित करती हैं।

ध्वनि-तरंग हवा में 340 मीटर प्रति सेकेंड के वेग से चलती है (सामान्य तापक्रम तथा आर्द्रता पर)। बिजली चमकने और बादल गरजने के बीच जो समय का अंतर होता है, उसके आ-



धार पर आप यह बता सकते हैं कि किस दूरी पर बिजली चमकी है। पहले यह नापें कि बिजली चमकने के कितने सेकेंड बाद आपने बादल गरजने की आवाज सुनी है। फिर सेकेंडों की इस संख्या में तीन से गुणा कर दें। इससे जो संख्या मिलेगी, लगभग उतने ही सौ मीटर दूर बिजली चमकी है।

हवा काफी प्रत्यास्थ होती है ; इसी के कारण हम आपस में बातचीत कर पाते हैं, संगीत सुन पाते हैं। लेकिन फिर भी हवा ध्वनि का बहुत अच्छा चालक नहीं है। ध्वनि के सबसे अच्छे चालक ठोस पिंड हैं, इसके बाद द्रव हैं और अंत में गैसें हैं।

हवा ध्वनि का कोई आदर्श चालक नहीं है, यह देखने के लिये एक पुराना प्रयोग करें।

धातु का बड़ा चम्मच करीब तीस सेंटीमीटर लंबी दो डो-



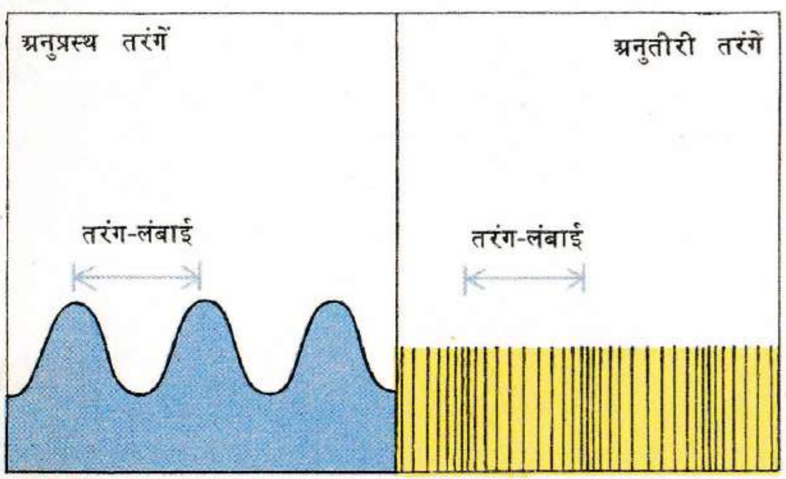
रियों के सहारे लटका दें और उसे इस प्रकार झुलायें कि वह टेबुल की किनारी से टकरा जाये। आपको क्षीण झंकार सुनाई देगी। यदि आप डोरियों के स्वतंत्र सिरों को कानों के साथ उंगलियों से दबा लेंगे और थोड़ा आगे की ओर झुक जायेंगे, ताकि चम्मच स्वतंत्र लटकता रहे, तो इस बार टेबुल की किनारी के साथ चम्मच के टकराने पर आप अधिक स्पष्ट और सुंदर झंकार सुनेंगे। कारण यह है कि कंपन आपके कानों तक हवा से होकर नहीं, बल्कि डोरियों से होकर पहुँचता है। इसीलिये ध्वनि तेज सुनायी देती है, जिसकी तुलना पहले की क्षीण झंकार के साथ नहीं की जा सकती।

ठोस पिंडों में प्रत्यास्थ कंपन कैसे प्रसर करते हैं, यह निम्न प्रयोग से देखा जा सकता है। कैरमबोर्ड की गोटियां लीजिये (यदि वे नहीं हैं, तो समान तरह के सिक्के ले लीजिये), उन्हें सटा-सटा कर एक कतार में रख दीजिये। किनारे वाली गोटी को उंगलियों से कसकर दबाइये और उस पर इंची से चोट कीजिये। दबी हुई गोटी में प्रत्यास्थ कंपन उसके व्यास के सहारे चलते हुए पड़ोस की गोटी में पहुँचते हैं, फिर तीसरी, चौथी आदि गोटियों में चलते हुए आखिरी गोटी तक पहुँचते हैं। आखिरी गोटी कुछ दूर खिसक जाती है, क्योंकि पिछली गोटी से प्राप्त धक्का वह किसी और गोटी को नहीं दे पाती।

कंघी पर मनन. अनुप्रस्थ तरंगों में तरंग की लंबाई एक शिखर से दूसरे शिखर या एक गर्त से पड़ोसी गर्त तक की दूरी के रूप

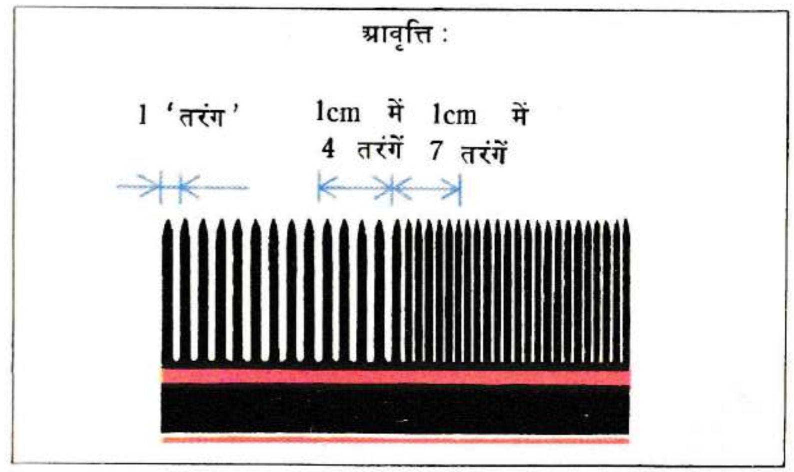
में नापते हैं। अनुतीरी तरंगों में तरंग-लंबाई सबसे संपीडित क्षेत्र से वैसे ही पड़ोसी क्षेत्र या सबसे लमड़े (या विरल-कृत) क्षेत्र से उसी तरह के पड़ोसी क्षेत्र तक की दूरी को कहते हैं।

एक कंघी लीजिये। उसके आधे हिस्से में दाँत कुछ फरक-फरक हैं और आधे हिस्से में ज्यादा सटे-सटे हैं। मान लेते हैं कि कंघी के दाँत अनुतीरी तरंगों का आरेख व्यक्त करते हैं। एक दाँत की मुटाई और पड़ोसी दाँत से इसकी दूरी – दोनों मिलाकर एक 'तरंग' की लंबाई है। कंघी के आधे हिस्से के प्रति सेंटीमीटर में 4 दाँत और 4 अंतराल, अर्थात् 4 'तरंगें' हैं। दूसरे अर्ध के प्रति सेंटीमीटर में 7 दाँत और 7 अंतराल, अर्थात् 7 'तरंगें' हैं। यदि पूछा जाये कि दाँतों की आवृत्ति (बारं-बारता) कहां अधिक है, तो आप बेहिचक जवाब देंगे कि



जहां एक सेंटीमीटर में 7 दाँत आते हैं। आपने इस बात पर भी ध्यान दिया होगा: दाँतों की आवृत्ति जितनी ही कम है, एक सेंटीमीटर में जितने ही कम दाँत हैं, दाँत उतने ही मोटे हैं और उनके बीच के अंतराल उतने ही चौड़े हैं। कंघी के दूसरे अर्ध में, जहां दाँतों की आवृत्ति अधिक है, दाँत पतले-पतले हैं और उनके बीच के अंतराल भी छोटे हैं। इसका मतलब है कि कंघी के प्रथम अर्ध पर 'तरंगों' की लंबाई अधिक है, बनिस्बत कि दूसरे अर्ध पर। अन्यतः, 'तरंग' की लंबाई दाँतों की आवृत्ति पर निर्भर करती है।

ध्वनि-कंपनों तथा विद्युचुंबकीय कंपनों में आवृत्ति एक सेकेंड में होने वाले कंपनों की संख्या को कहते हैं। यदि कंपनों के प्रसरण का वेग स्थिर है, तो एक सेकेंड में पूर्ण कंपनों की संख्या



जितनी ही अधिक होगी, तरंगें उतनी ही छोटी होंगी। इसके विपरीत, एक सेकेंड में जितने ही कम कंपन होंगे, तरंगों की लंबाई उतनी ही अधिक होगी।

रेलगाड़ी की सीटी. ध्वनि की बात चलती है, तो हम ध्वनि-तरंगों कीं लंबाई के बारे में कुछ नहीं कहते, उनकी आवृत्ति के बारे में ही कहते हैं। आवृत्ति (प्रति सेकेंड कंपनों की संख्या) जितनी ही अधिक होगी, आवाज उतनी ही ऊँची (या पतली) होगी। कम कंपन-आवृत्ति वाली ध्वनि नीची (या मोटी) होती है।

आपने कभी यह ध्यान दिया है कि सामने से आने वाली रेलगाड़ी की सीटी में ध्वनि किस तरह से बदलती है?

यदि आप रेलपथ से कहीं बहुत दूर खड़े होकर सीटी सुनते हैं, तो आपको ध्वनि में कोई परिवर्तन नहीं सुनाई देता है। लेकिन यदि आप रेलगाड़ी में जा रहे हैं और सामने से आने वाली दूसरी गाड़ी की सीटी सुनते हैं, तो आप सुनेंगे कि सीटी का टोन बदलता है। सीटी ज्यादा देर तक नहीं, सिर्फ 2–3 सेकेंड में ही सुनाई दे जाती है, पर इस नन्हे से अंतराल में भी अंतर सुनाई दे जाता है: शुरू में ध्वनि ऊँची (बहुत तेज, पतली) होती है और फिर क्रमशः नीची (मोटी) होती चली जाती है (जैसे-जैसे दूसरी रेलगाड़ी का इंजन हमारे डब्बे से दूर होता जाता है)। यह हु-अ-आ... की आवाज से मिलती-जुलती है, जिसमें हु पतली आवाज है और आ – मोटी।

सीटी की ध्वनि अपने-आप में स्थिर रहती है, पर आप उसे सुनते हैं अलग-अलग तरह से – जब वह आपके निकट आती है, तो एक तरह से और जब वह आपसे दूर जाती है, तो दूसरी तरह से।

अब यह समझने की कोशिश करें कि ऐसा क्यों होता है।

मान लें कि आप रेलगाड़ी में 60 किलोमीटर प्रति घंटे के वेग से चल रहे हैं। बगल वाली लाइन पर उसी वेग से आपकी ओर दूसरी गाड़ी आ रही है और उसका इंजन सीटी दे रहा है। सरलता के लिये मान लेते हैं कि सीटी देने वाली गाड़ी एक जगह पर खड़ी है और आपकी गाड़ी उसकी ओर 120 किलोमीटर प्रति घंटे के वेग से चल रही है। हमारी बात-चीत के लिये दोनों स्थितियों में कोई फर्क नहीं है। सीटी के रूप में ध्वनि-तरंगें इंजन से सभी दिशाओं में निकलकर प्रसरित होने लगती हैं। आपकी ओर भी वे समान वेग से ही चलती हैं, पर आप उनकी ओर अपने वेग से दौड़ रहे हैं। मान लें कि यदि आप स्थिर खड़े रहते, तो आप तक प्रति सेकेंड 1000 तरंगें पहुँचतीं। लेकिन आप तो खुद उनकी ओर दौड़ रहे हैं, इसलिये आप प्रति सेकेंड 1000 नहीं, उदाहरण के लिये, 1200 तरंगें 'पकड़ते' हैं। इतनी तरंगें एक सेकेंड के अंतराल में अँट सकें, इसके लिये आवश्यक है कि वे छोटी हो जायें, अतः उनकी कंपन-आवृत्ति अधिक हो जाती है। अब एक सेकेंड में 1000 नहीं, 1200 कंपन्न होते हैं। और आवृत्ति

जब भी अधिक होती है, ध्वनि ऊँची (पतली और तेज) हो जाती है। इसलिये सीटी की आवाज आपके लिये उसके वास्तविक टोन से अधिक ऊँचे टोन की हो जाती है।

जब आप सीटी दे रहे इंजन के पास से गुजरकर आगे बढ़ते हैं, आप पीछे से आती हुई तरंगों में से पहले की तुलना में कम तरंगों को पकड़ पाते हैं। इसका मतलब है कि आपके लिये ध्वनि की आवृत्ति घट गयी और ध्वनि का टोन नीचा हो गया।

याद रखें कि यह सब गति की अवस्था में होता है, जब आप बड़े वेग से ध्वनि की ओर चलते हैं या उससे दूर होते हैं।

जब प्रेक्षक और तरंग-स्रोत एक-दूसरे के करीब आने लगते हैं या एक-दूसरे से दूर होने लगते हैं, तो ध्वनि-कंपनों की आवृत्ति में प्रेक्षित परिवर्तन को 'डोप्लर-प्रभाव' कहते हैं। इस प्रभाव की खोज और व्याख्या पहले-पहल 1842 में आस्ट्रिया के भौतिकविद तथा ज्योतिर्विद क्रिस्चियान डोप्लर ने की थी।

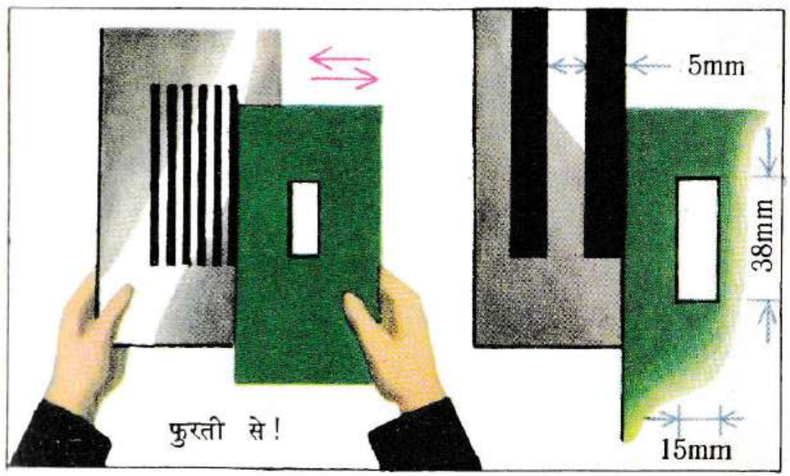
चित्रों पर डोप्लर-प्रभाव. ये प्रयोग और कुछ नहीं, डोप्लर-प्रभाव को दृश्य-सुगम करने वाले 'सजीव' चित्र भर हैं। तरंगी प्रक्रियाओं को व्यक्त करने वाले आरेखों और चित्रों की तरह डोप्लर-प्रभाव को दिखाने वाले प्रतिमान तथा इन प्रतिमानों के साथ प्रयोग भी प्रतीकात्मक ही हैं। फर्क यही है कि आप जड़ चित्र नहीं देखेंगे; वे आपकी आँखों के सामने बदला करेंगे।

प्रतिमान दो होंगे। प्रथम प्रतिमान बहुत साधारण होगा, जिसपर फैलने वाली तरंगें गेवल संपीडित होंगी और परि-

णामस्वरूप उनकी आवृत्ति बढ़ती जायेगी। दूसरे जटिल प्रतिमान से हम तरंगों के संपीडन और उनके बढ़ाव दोनों का प्रेक्षण कर सकेंगे।

प्रथम प्रतिमान के लिये ड्राइंग पेपर का 20×25 सेंटीमीटर आकार वाला टुकड़ा लीजिये और उस पर चाइना इंक से 15 सेंटीमीटर लंबी और 0.5 सेंटीमीटर चौड़ी धारियां बना लीजिये। इनके बीच अंतराल भी वैसे ही होने चाहिये – 0.5 सेंटीमीटर चौड़े। एक काली और एक सफेद धारी मिलकर एक पूर्ण कंपन को द्योतित करेंगी।

उसी तरह के कागज के एक टुकड़े पर आकार 1.5×3.8 सेंटीमीटर की एक उदग्र खिड़की बना लीजिये (कागज के इस



टुकड़े का आकार कुछ कम भी हो सकता है)।

बायें हाथ में 'तरंगों' (धारियों) वाला कागज लीजिये और दायें हाथ में खिड़की वाला। खिड़की से धारियों को देखते रहिये और साथ ही दोनों कागजों को फुरती से एक दूसरे की ओर खिसकाइये। हाथों की गति बहुत तेज होनी चाहिये। तब आप खिड़की में देखेंगे कि तरंगें सँकरी हो गयी हैं। प्रयोग इस तरह किया जाता है कि खिड़की वाला कागज धारियों को बिल्कुल न ढक ले, उनका ऊपरी भाग दिखता रहे; तब आप खिड़की से दिखने वाली धारियों के साथ वास्तविक धारियों की तुलना कर सकेंगे, 'तरंगों' की लंबाइयों में अंतर महसूस कर सकेंगे।

यह प्रयोग और भी सरलता के साथ किया जा सकता है। स्मरण करें कि जब आवृत्ति की बात चली थी, तो हमने कंघी का उपयोग किया था। कंघी लीजिये और खिड़की वाला कागज लीजिये। बायें हाथ से कंघी को क्षैतिज स्थिति में पकड़े रहिये और उसके ऊपर कागज की खिड़की को आगे-पीछे सरकाइये, पर पहले की तरह तेजी से नहीं। यदि प्रेक्षण प्रकाशमय पृष्ठ-भूमि पर करेंगे, तो दिखाई अच्छा देगा। खिड़की से कंघी के उसी भाग को देखना चाहिये, जहां दाँत मोटे हों और उनके बीच के अंतराल चौड़े हों। जब खिड़की और कंघी एक दूसरी की ओर गति करेंगी, तो आप देखेंगे कि दाँतें पतली हो गयी हैं और अंतराल सँकरे हो गये हैं, जैसा कि कंघी के दूसरे अर्ध में है।

अब एक ऐसा प्रयोग करें। कागज पर एक वृत्त की परिधि पर आठ-आठ मिलिमीटर की दूरी पर दो-दो सेंटीमीटर व्यास वाले काले वृत्त बना लें।

बायें हाथ में वृत्तों वाला कागज और दायें हाथ में खिड़की वाला कागज लेकर उन्हें एक दूसरे पर तेजी से सरकाएं। खिड़की से जो झलक मिलेगी, उसमें देखेंगे कि काले वृत्त पिचककर एलिप्स (दीर्घवृत्त) की तरह हो गये हैं और इन एलिप्सों के बीच की दूरियां भी घट गयी हैं।

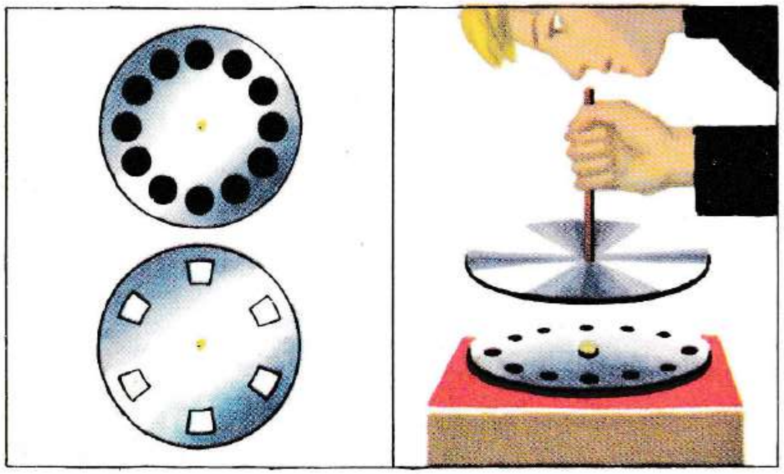
इस प्रयोग को अधिक विकसित रूप में किया जा सकता है; इसके लिये एक ग्रामोफोन की जरूरत पड़ेगी। उसकी चकती को महत्तम आवृत्ति (प्रति मिनट 78 चक्कर की आवृत्ति) से नचाना पड़ेगा।

ग्रामोफोन की चकती के आकार का गोल गत्ता काट लें। यदि गत्ता सफेद नहीं है, तो उसपर सफेद कागज चिपका दें। इसकी किनारी से 1.5 सेंटीमीटर जगह छोड़कर चारों तरफ परकार से 12 नन्हे वृत्त बना लें (इनका व्यास 2.2–2.5 सेंटीमीटर के करीब होना चाहिये)। इन वृत्तों को काले रंग से रंग लीजिये। गोल गत्ते के केंद्र पर छेद बनाकर उसे ग्रामोफोन की चकती पर रेकार्ड की तरह बैठा दीजिये।

अब एक लंबी काँटी पर गत्ते का छोटा सा वृत्त पहना दीजिये और इसके ऊपर खिड़कियों वाली चकती पहना दीजिये, जिसे आपने गत्ते से बना रखा है। यदि उदग्र काँटी के नुकीले भाग को आप ऊपर रखेंगे, चकती क्षैतिज स्थिति में रहेगी

और आप उसे हाथ से घुमाकर नचा सकेंगे।

अब प्रयोग शुरू करते हैं। ग्रामोफोन चलाइये; उसकी चकती पर काले वृत्तों वाला गत्ता नाचने लगेगा। इसके ठीक ऊपर खिड़कियों वाली चकती काँटी से लटकाये रहिये; खिड़की वाली चकती को ग्रामोफोन की चकती की विपरीत दिशा में नचाइये और खिड़कियों से काले वृत्तों की झलक लेते रहिये। आप देखेंगे कि काले वृत्त अपनी विष्वक रेखाओं पर कुछ कम चौड़े हो गये हैं। वे पिचककर एलिप्सों में परिणत हो गये हैं। काँटी पर गत्ते की चकती का घूर्णन-वेग बदल-बदलकर ऐसी स्थिति प्राप्त की जा सकती है, जिससे स्पष्ट और स्थिर चित्र दिखे। इस प्रयोग में प्रेक्षक और ध्वनि के परस्पर निकट



आने की प्रक्रिया नकल की गयी है। 'तरंगें' छोटी हो गयीं और आवृत्ति बढ़ गयी।

अब देखा जाये कि यदि प्रेक्षक तरंगों से पीछे छूटने लगेगा, तब 'तरंगों' के साथ क्या होगा (हमारे प्रयोग में तरंगों का काम काले वृत्त कर रहे हैं)। 'तरंगें' लंबी हो जायेंगी, अर्थात् काले वृत्त अपनी विष्वक रेखाओं पर फूल जायेंगे, लेटे हुए एलिप्सों में परिणत हो जायेंगे। यह आप स्वयं देख सकते हैं, यदि खिड़कियों वाली चकती को ग्रामोफोन की चकती की दिशा में घुमाने लगेंगे। खिड़कियों वाली चकती का एक नियत वेग होने पर (और इस चकती का वेग ग्रामोफोन की चकती के वेग से थोड़ा-सा कम होना चाहिये) आप बिल्कुल स्पष्ट देखेंगे कि हमारी 'तरंगें' अपनी विष्वक रेखाओं पर लंबी हो गयी हैं।

काले वृत्तों में परिवर्तन को साफ-साफ देखने के लिये उन्हें अच्छी तरह से प्रकाशित करना चाहिये।

काँटी पर नाचती चक्की के लिये ग्रामोफोन की चक्की के समांतर होना जरूरी नहीं है, उसे आप तिरछा भी पकड़े रह सकते हैं।

'लाल स्थानांतरण' का रहस्य. 'लाल स्थानांतरण' का परीक्षण कर के वैज्ञानिक लोग समझ गये कि यह और कुछ नहीं, प्रकाश-तरंगों पर डोप्लर-प्रभाव है।

यदि प्रकाशिक तरंगों का स्रोत कोई तारा है, जो हमारी ओर गतिमान है या हम से दूर जा रहा है (आप समझते ही

होंगे कि यह सब अंतरिक्षी वेगों से होता है), तो तारे से उत्सर्जित प्रकाश की तरंग-लंबाई भी बदलेगी।

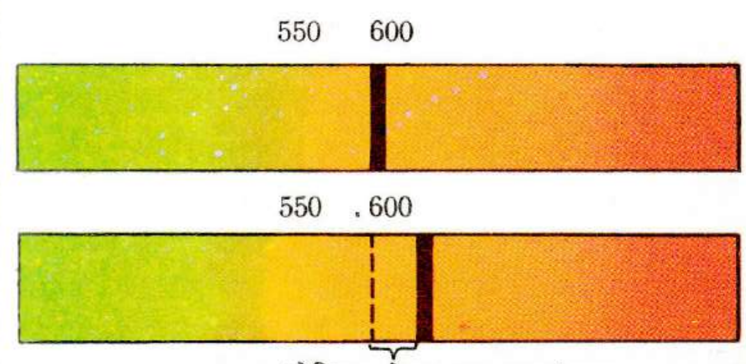
आजकल ज्योतिर्विद डोप्लर-प्रभाव का उपयोग सिर्फ यह जानने के लिये ही नहीं करते कि प्रेक्षणाधीन तारा या दूरस्थ मंदाकिनियां हम से दूर जा रही हैं या हमारी ओर आ रही हैं; डोप्लर-प्रभाव की सहायता से वे उनका वेग भी ज्ञात कर लेते हैं।

ये प्रेक्षण कैसे किये जाते हैं?

सूर्य या तारे के स्पेक्ट्रम में सतरंगी पट्टी पर काली रेखाएं होती हैं। ये रेखाएं स्पेक्ट्रम में अपना निश्चित स्थान रखती हैं। जब सूर्य या तारे के उत्तप्त पिंड से निकला हुआ प्रकाश किसी रसायनिक तत्त्व की अपेक्षाकृत ठंडी गैस से गुजरता है, तो यह गैस संतत स्पेक्ट्रम में से वह अंश या वह रंग अपने में रोक लेता है, जिसे वह स्वयं उत्सर्जित करती है (जब उसे इतना गर्म किया जाता है कि वह चमकने लगे)। ये 'ठंडी' गैसें सूर्य या तारे के चारों तरफ उसके वातावरण के रूप में उपस्थित रहती हैं। ऊपर सोडियम धातु के वाष्प का उदाहरण दिया गया था: जब वह स्वयं चमकने लगता है, तो उसके स्पेक्ट्रम में हम चमकदार पीली रेखा देखते हैं। लेकिन जब सोडियम का वाष्प चमकने की अवस्था में नहीं रहता है, तो उससे गुजरे हुए प्रकाश से प्राप्त संतत स्पेक्ट्रम में पीले भाग की जगह काली धारी (रेखा) दिखती है। यह धारी पैमाने पर अपना निश्चित स्थान रखती है, अतः हमें बिल्कुल सही-सही पता रहता है कि स्पेक्ट्रम का

यह भाग किस तरंग-लंबाई के अनुरूप है। लेकिन यदि सोडियम की यह धारी स्पेक्ट्रम के लाल हिस्से की ओर स्थानांतरित है (उदाहरणार्थ), अर्थात् यदि प्रेक्षित होता है कि सोडियम-वाष्प से संबंधित तरंग-लंबाई अपने असली मान से अधिक है, तो इसका अर्थ है कि तारा हमसे दूर जा रहा है। सोडियम रेखा का उसके वास्तविक स्थान से स्थानांतरण के मान द्वारा हम यह कलन कर ले सकते हैं कि विचाराधीन तारा किस वेग से गतिमान है।

यह बहुत ही सरलीकृत उदाहरण है। तारों के स्पेक्ट्रम में अनेक काली रेखाएं होती हैं, जो बताती हैं कि तारे के वातावरण में अनेक रसायनिक तत्त्व मौजूद हैं। जैसा कि पहले कहा जा



सोडियम रेखा का स्थानांतरण

चुका है, काली रेखाएं तभी उत्पन्न होती हैं, जब तारे की उत्तप्त गहराइयों से उत्सर्जित प्रकाश-किरणें तारे के अपेक्षाकृत ठंडे वातावरण से गुजरती हैं।

काली रेखाओं के स्थानांतरण से, जिन स्थानों पर उन्हें होना चाहिये था वहां से इस स्थानांतरण की माप के आधार पर ही वैज्ञानिकगण अपने निष्कर्ष देते हैं।

हमारे अंतरिक्षी पड़ोसी (तारे, मंदाकिनियां) हम से बहुत दूर हैं। ब्रह्मांड में दूरियां अरबों प्रकाश-वर्षों में नापी जाती हैं। हाल में एक मंदाकिनी नजर आयी है, जो हम से 8 अरब प्रकाश-वर्ष दूर है!

एक प्रकाश-वर्ष दूरी को बोध करने के लिये यह स्मरण करें कि प्रकाश एक सेकेंड में करीब 300000 किलोमीटर चलता है। एक मिनट, एक घंटे, एक दिनरात, एक महीने, एक वर्ष में वह कितना दूर चलेगा?

अभी हम आकाश में ब्रह्मांड के जो दूरदराजी स्थान देखते हैं, जो कुछ भी वैज्ञानिक-गण अपने शक्तिशाली टेलीस्कोपों से देखते हैं, यह सब वर्तमान क्षण में अपना कोई अस्तित्व नहीं रखते।

हमतक वे किरणें पहुँचती हैं, जो अपने स्रोतों से बहुत पहले निकल चुकी थीं। यह भी संभव है कि किसी तारे का प्रकाश जबतक हमारी आंखों में प्रविष्ट होता है, उस तारे का अस्तित्व कब का मिट चुका हो, लेकिन फिर भी हम उसे देखते हैं... उसके अतीत रूप को!

पतंग – हवाई जहाज का रिश्तेदार. ग्लाइडर पर उड़ान भरना अब एक मजेदार खेल हो गया है। वह हवा से भारी होता है, फिर भी जमीन से बहुत ऊपर हवा में देर तक उड़ता रह सकता है। अब एक नया रोचक खेल उभरा है – हैंग ग्लाइडर पर उड़ान भरना। वह पतंग और ग्लाइ-डर दोनों से ही मिलता-जुलता उपकरण है। इसमें ग्लाइडर के सिर्फ डैन ही रह गये हैं, जो विस्तृत और समतल होते हैं, और धड़ की जगह खुद आदमी बैठा होता है। स्पोर्ट-पतंग भी आदमी को ऊँचा उड़ा सकता है, यदि हवा अनुकूल हो और आदमी पहाड़ पर से स्की करता हुआ तेजी से उतरे, या पानी पर स्की कराने वाला बोट उसे तेजी से खींचे। पाल वाली नाव (या जहाज) के लिये अनुकूल हवा की आवश्यकता होती है, पर ग्लाइडर या पतंग के उड़ने के लिये प्रतिकूल हवा ही चाहिये।

खुली हवा में प्रयोग

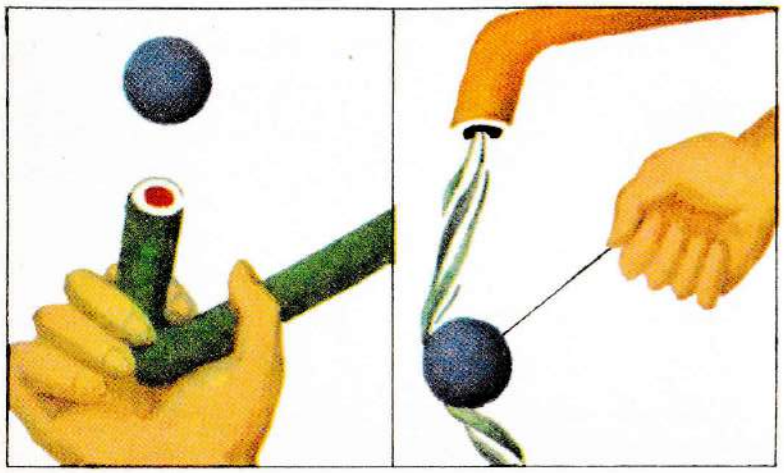
किसी भी तरल (गैसीय या द्रव) प्रवाह में दाब परिवेशी दाब की तुलना में कम ही होता है। ऐसा क्यों होता है, यह देखने के लिये चंद प्रयोग करते हैं।

हमें 0.5–1 सेंटीमीटर व्यास वाली रबड़ की एक नली और टेबुल-टेनिस की एक गेंद चाहिये। नली का सिरा मुँह में लीजिये (पहले आप इसे अच्छी तरह से धो लीजिये), दूसरा सिरा ऊपर की ओर मोड़िये और फूँकिये। साथ ही गेंद को नली के खुले मुँह पर रखे रहिये। गेंद हवा की फुहार पर उछलती रहेगी,

लेकिन अगल-बगल नहीं गिरेगी। कारण यह है कि किसी भी प्रवाह की तरह इस शंक्वाकार फुहार में भी दाब कम रहता है और चारों ओर का वातदाब गेंद को सब ओर से दबाकर उसे फुहार से निकलने नहीं देता।

इस प्रयोग के लिये अभ्यास की आवश्यकता नहीं है, कोई भी आदमी पहली बार में ही कर ले सकता है। सिर्फ फूँकना लगातार चाहिये।

पानी के प्रवाह के साथ क्या बात है, यह देखने के लिये निम्न प्रयोग कीजिये। प्लास्टिलीन की सहायता से उसी गेंद के साथ एक धागा चिपका दीजिये। धागा पकड़े हुए गेंद को पानी की धार के पास लाइये। पानी गेंद को अपनी ओर खींच लेगा। अब यदि आप धागे को कुछ दूर खींचेंगे, तो भी गेंद



धार के पास ही रहेगी। गेंद धागे को तिरछी स्थिति में ताने रहेगी। धार में दाब कम होता है और चारों ओर की हवा गेंद को धार में दबाये रखती है।

अब हमें कुछ ऐसे प्रयोग करने हैं, जो बड़ी ऊँचाई के साथ संबंधित है। इसके लिये हमें एक नहीं, कई, और वह भी अलग-अलग बनावट के पतंग बनाने होंगे। उनकी सहायता से हम पैराशूट के साथ उतारने और बिना पैराशूट के जमीन पर पहुँचाने के प्रयोग करेंगे। जिन ग्रहों पर वातावरण नहीं है या बहुत ही विरल है, वह पैराशूट बेकार है। लेकिन उपकरण या यान जमीन से टकराकर चूर न हो जाये, इसके लिये कुछ उपाय करना होगा कि वह नर्मी से उतरे।

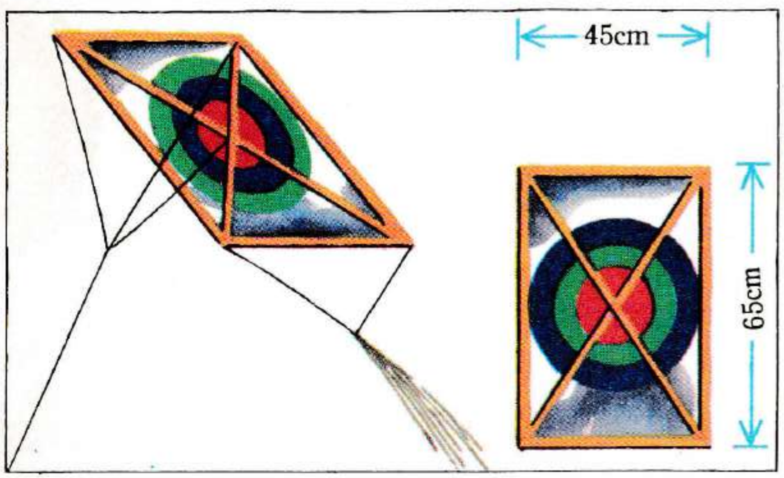
पतंग बनाना शुरू करने के पहले देखा जाये कि वह उड़ता कैसे है ; वह हवा में तैरता कैसे रह जाता है।

जब हवा पतंग की समतल सतहों को स्पर्श करती हुई (उसके समानांतर) बहती है और पतंग थोड़ा झुका होता है, तो तथाकथित उत्थापक बल उत्पन्न होता है, जो पतंग को हवा में ऊपर उठाता है। यदि हवा नहीं बह रही हो, तो पतंग नहीं उड़ेगा। यदि हवा बहुत मंद हो, तो उत्थापक बल उत्पन्न करने के लिये कृत्रिम रूप से वायु-प्रवाह बनाना पड़ता है। इसके लिये पतंग की डोरी लेकर थोड़ा दौड़ना पड़ता है ; यदि ऊपर, ऊँचाई पर हवा तेज है, तो फिर वह पतंग को पकड़ लेगी। इसके बाद आप जमीन पर खड़े-खड़े उसकी उड़ान पर नियंत्रण रख सकते हैं। हवाई जहाज में मोटर लगे होते हैं ;

उनके लिये भी सामने से आने वाला प्रवाह कृत्रिम रूप से उत्पन्न किया जाता है : पहले जब हवाई जहाज जमीन पर दौड़ता है और दूसरे, जब वह हवा में अपना वेग ऊँचा रखता है।

भिन्न बनावटों की पतंगें. पहले सरलतम पतंग बनायी जाये। इसके लिये कागज और लकड़ी के सूखे हुए पतले सींकचों की आवश्यकता पड़ेगी। सींकचे जितने पतले होंगे, पतंग उतनी ही हल्की होगी, पर उसकी मजबूती का भी खयाल रखना होगा।

65×45 सेंटीमीटर के आकार का फ्रेम चिपकाकर बना लें। कर्णों पर भी एक-एक सींकचा चिपका दें और उनके काटने के स्थान पर उन्हें मजबूत धागे से कसकर बांध दें। सींकचे जहां-जहां भी आपस में चिपकाये गये हैं, वहां-वहां मजबूती के लिये



धागे से बांध देना भी बुरा नहीं रहेगा। अब पतला, पर मजबूत कागज लेते हैं और उसे फ्रेम और कर्णों के ऊपर गोंद से चिपका देते हैं। कागज को ढाँचे से कुछ बड़ा होना चाहिये।

कागज की बाहर निकली हुई किनारियों को फ्रेम से लपेटकर चिपका लेना चाहिये। पतंग भारी न हो जाये, इसके लिये किनारियों का 1–1.5 सेंटीमीटर चौड़ा होना काफी रहेगा।

अब एक पतला और मजबूत धागा लीजिये और उसके सिरों से पतंग की चौड़ाई पर कोनों को बांध दीजिये। अब यदि धागे का मध्य बिंदु पकड़कर खींचेंगे, तो आपको समद्विबाहु त्रिभुज की आकृति मिलनी चाहिये, जिसकी पार्श्व भुजाएं करीब 39 सेंटीमीटर हों। धागे के मध्य बिंदु से एक और धागा जोड़ दीजिये और उसके दूसरे सिरे से कर्णों के कटान-स्थल को बांध दीजिये। इस धागे की लंबाई (बांधने के बाद) करीब 33 सेंटीमीटर होनी चाहिये। अब दोनों धागों के मिलन-बिंदु से एक और धागा जोड़ कर उसे लटाई पर लपेट लीजिये। पतंग के निचले कोनों को भी एक धागे से जोड़ दीजिये और उसके बीच से 2–3 मीटर लंबी एक पूँछ बांध दीजिये। पूँछ कपड़े की पट्टियों से बनायी जा सकती है। पूँछ से पतंग की उड़ान में स्थिरता आती है। पहली बार उड़ाकर आप जाँच ले सकते हैं कि पूँछ और लंबी करनी है या कुछ छोटी करनी है, या सिर्फ उसके सिरे को कुछ भारी करना है। यह भी संभव है कि पूँछ को हर उड़ान के पहले थोड़ा ठीक करना पड़ेगा ; यह हवा पर निर्भर करता है।

जब सब तैयार हो जाये, तो अनुकूल हवा के झोंके का इंतजार करना चाहिये। धीमी हवा पतंग को उठाने के लिये पर्याप्त नहीं होती और बहुत तेज हवा उसको एकदम फाड़ भी सकती है।

पतंग दो आदमी के साथ उड़ाना अधिक अच्छा रहता है। एक आदमी पतंग पकड़कर हवा के विपरीत दौड़ता है और दूसरा लटाई पकड़े रहता है। दौड़ता हुआ आदमी पतंग को ऊपर छोड़ने की कोशिश करता है; लटाई से धागे को ढील दिया जाता है, आवश्यकता पड़ने पर खींचा भी जाता है, जिसके फलस्वरूप पतंग धीरे-धीरे ऊपर उठने लगती है। 100–200 मीटर की ऊँचाई पर उठकर वह हवा में धीरे-धीरे स्थिर हो जाती है।

पतंग अच्छी तरह से उड़े, इसके लिये जरूरी है कि धागा पतंग को इस तरह खींचे रहे कि पतंग की सतह क्षितिज के साथ 30–40 डिग्री का कोण बनाये। पूँछ इसी काम में सहायक होती है।

एक और बहुत महत्त्वपूर्ण बात है – पतंग वहां नहीं उड़ाना चाहिये, जहां तार, पेड़, घर आदि हों। पतंग शहर के बाहर सिर्फ खुली जगह में उड़ायी जा सकती है।

साधारण पतंग को अच्छी तरह से उड़ाना सीख लेने के बाद डब्बेनुमा पतंग बनाइये, जो उड़ान में अधिक टिकाव रखता है। उस पतंग में पूँछ लगाने की जरूरत नहीं होती, उसकी उड़ान में स्थायित्व उसे अपनी आकृति से मिलता है।

इसे बनाने के लिये लकड़ी की पतली, लंबी तथा मजबूत चपटी छड़ लेते हैं। थोड़ा सा गफ सूती कपड़ा भी रख लीजिये।

ऐसी पतंग उड़ाने के लिये नायलन के धागे की जरूरत पड़ती है। वह हल्का और मजबूत होता है।

अब बनाना शुरू करें।

किसी शुष्क तख्ते से वर्गाकार अनुप्रस्थ काट (8×8 मिलिमीटर) वाली चार छड़ें काट लेते हैं। प्रत्येक की लंबाई 100 सेंटीमीटर होनी चाहिये।

ये छड़ें पतंग के ढाँचे में अनुतीरी भुजाएं होंगी; इन्हें लौंगेरोन कहते हैं।

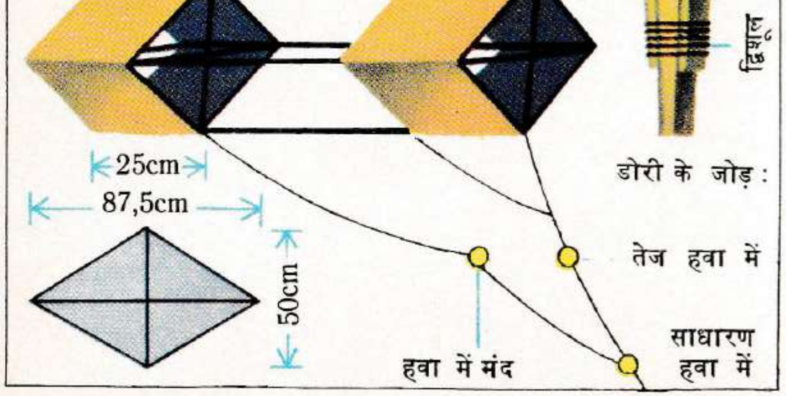
अब चार छड़ें (8×4 मिलिमीटर) और काटनी हैं: दो छड़ें 50 सेंटीमीटर लंबी और दो छड़ें 87.5 सेंटीमीटर लंबी। इनसे ढाँचे के अनुप्रस्थी अवयव बनेंगे। इनके सिरों पर द्विशूल बनाना पड़ेगा ताकि ये पतंग के लौंगेरोनों पर फिसलें नहीं।

हमारी पतंग अलग-अलग टुकड़ों में होगी ताकि एक जगह से दूसरी जगह ले जाने में सुविधा रहे। आवश्यकता पड़ने पर टुकड़ों को जोड़कर पतंग बना ली जायेगी। यह विशेषकर उन लोगों के लिये अच्छा रहेगा, जिन्हें पतंग उड़ाने के लिये शहर से बाहर जाने की जरूरत होगी।

अनुप्रस्थ अवयवों के सिरों पर द्विशूल बनाने की विधि निम्न है: लकड़ी के 8×2 मिलिमीटर अनुप्रस्थ काट वाले दो नन्हे छड़ अनुप्रस्थी अवयव के सिरे के ऊपर रख कर बांधने से पहले तदनुसार पार्श्वों पर गोंद लगाइये। बांधने के काम में सख्त धागा सबसे अच्छा होगा।

अब इन छड़ों को जोड़कर ढाँचा बनाते हैं। एक छोटा

और एक बड़ा अनुप्रस्थी अवयव गुणा के चिन्ह की तरह एक दूसरे पर रखकर उनके कटान-बिंदु पर उन्हें मजबूत धागे से बांध लेते हैं। इनके द्विशूलों में लौंगेरोनों के सिरे फँसा लें; लौंगेरोनों के दूसरे सिरों पर भी इसी तरह से अनुप्रस्थी अवयव जोड़ दें; ढाँचा तैयार हो गया। ढाँचा बिखर न जाये, इसके लिये इसे बीच में दो जगहों पर रस्सी से बांध लें। अब उत्थापक समतल बनाना रह जाता है। ढाँचे के अनुप्रस्थ काट (एक समचतुर्भुज) की परिमिति नाप लें और कपड़े से इस लंबाई की दो पट्टियां (चौड़ाई 25 सेंटीमीटर) काट लें। इनकी किनारियां मोड़कर मशीन से सिलवा लेनी चाहिये। एक पट्टी का सिरा किसी एक लौंगेरोन पर रखकर उसे चार काँटियों से स्थायी तौर पर ठोक दीजिये (समचतुर्भुज के एक न्यूनकोण पर ठोकना



सबसे अच्छा होगा)। ढांचे के उन छड़ों पर गोंद लेप दें जिनपर कपड़ा लगेगा और फिर उसे अच्छी तरह तानकर लपेटें तथा अंतिम सिरों (आरंभिक सिरे के साथ) को गोंद और तीन-चार नन्हीं काँटियों की सहायता से जड़ दें। कपड़ा अच्छी तरह से तना रहे, इसके लिये उसे पानी से भिगोकर लपेटना चाहिये। जब वह सूख जायेगा, ढाँचे पर और कसके तन जायेगा। दूसरा कपड़ा इसी तरह से ढाँचे के दूसरे सिरे पर जड़ दें। ध्यान दें कि ढाँचे की आकृति नियमित रहे; वह आड़ी-तिरछी न हो जाये।

कपड़ा जड़ने का एक और तरीका हो सकता है: जिस जगह से कपड़ा लौंगेरोन को स्पर्श करता है, वहां कपड़े की दोनों चौड़ाई पर पतली जेब सी बनाते हैं, जिनमें लौंगेरोन घुसाये जा सकें।

पतंग कैसे उड़ेगी, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि आपने उसे कितने ध्यान से बनाया है। 'नकेल' (कन्नी) पतले और मजबूत धागे से बनानी चाहिये और इसे उस लौंगेरोन पर बांधनी चाहिये जो समचतुर्भुज के अधिकोण पर हो। एक मीटर लंबे धागे का एक सिरा लौंगेरोन के सिरे पर बांधिये। दूसरा सिरा पिछली पट्टी की भीतरी किनारी के पास अर्थात् लौंगेरोन के दूसरे सिरे से 25 सेंटीमीटर दूर बांध लें। एक और धागे का एक सिरा अगली पट्टी की भीतरी किनारी से बांध लें। इस धागे का दूसरा सिरा पहले धागे के साथ उसके अगले सिरे से 25 सेंटीमीटर की दूरी पर बांध लें।

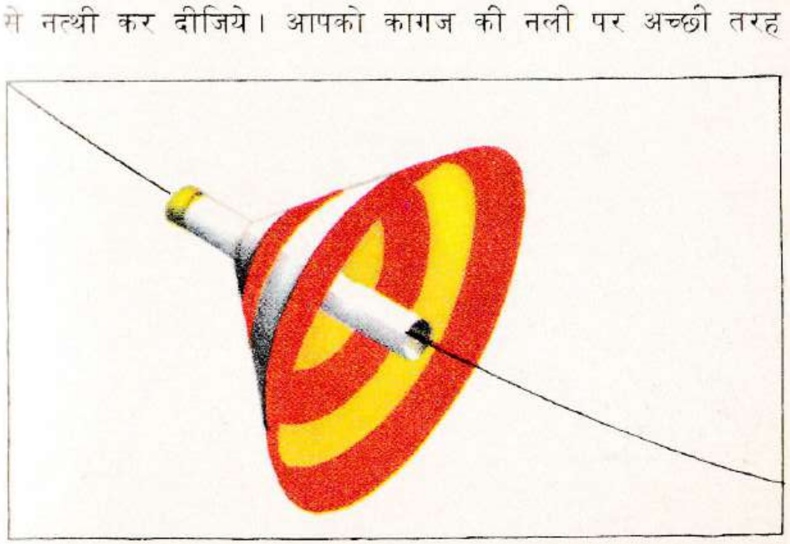
लटाई का धागा नकेल के साथ कहां बांधा जाता है, यह हवा की तेजी पर निर्भर करता है। हवा जितनी तेज होगी, लटाई का धागा नकेल के धागों के मिलन-बिंदु के उतना ही करीब बांधना चाहिये। यह आप व्यावहारिक अनुभव से स्वयं जान लेंगे। डब्बेनुमा पतंग की बनावट संबंधी विवरण आपको चित्र में मिल जायेंगे।

पतंग दो आदमियों के साथ तेज हवा में उड़ाते हैं। एक के हाथ में पतंग होती है, दूसरे के हाथ में लटाई। पतंग को सर से ऊँचा लिये हुए आदमी हवा के विपरीत दौड़ता है और पतंग को छोड़ देता है; यदि पतंग ऊपर उठने लगती है, तो ठीक है, अन्यथा ध्यान रखना चाहिये कि वह गिरकर टूट न जाये। यदि हवा पर्याप्त तेज है, और पतंग को उठाने लगती है, तो ढील देते जाना चाहिये।

डब्बेनुमा पतंग में उत्थापक सतह साधारण पतंग से अधिक होती है। डब्बेनुमा पतंग की तुलना बाइप्लेन (साधारण विमान) से करनी चाहिये, जिसमें दो जोड़े डैने होते हैं।

जब आप हवा की तेजी का मूल्यांकन करना और पतंग उड़ाना अच्छी तरह सीख लेंगे, तब निम्न रोचक प्रयोग संपन्न कर सकेंगे। ये प्रयोग बहुत ऊँचाई पर ही किये जा सकते हैं। बड़ी ऊँचाई पर पतंग अधिक स्थिर रहता है, वहां हवा भी स्थिरता के साथ बहती है। जमीन के पास वायु-प्रवाह में अक्सर भँवर उठने लगते हैं, इसीलिये पतंग को यथाशीघ्र ऊँचाई पर पहुँचा देना चाहिये।

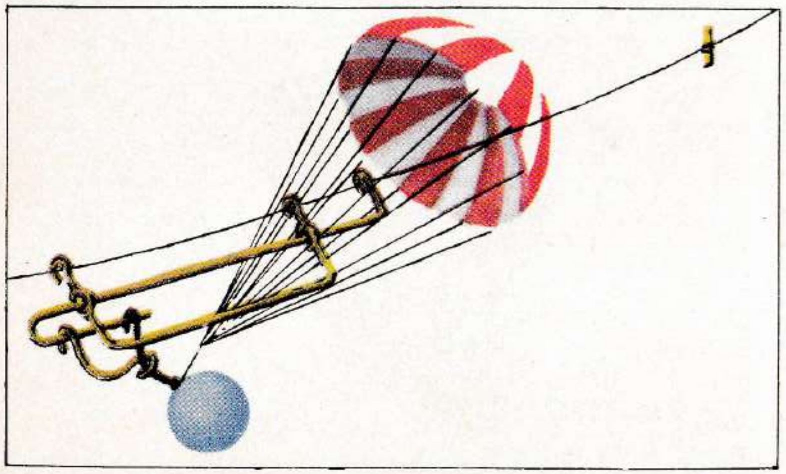
हवाई डाक. यह पतंग के साथ सरलतम प्रयोग है। यह किसी भी तरह की पतंग के साथ किया जा सकता है। मोटे कागज से 20–30 सेंटीमीटर व्यास वाला वृत्त काट लीजिये, उसके केंद्र में छेद करके इसे किसी त्रिज्या के सहारे काट लीजिये। उसी तरह के कागज को मोड़-मोड़कर 5–8 सेंटीमीटर लंबा एक बेलन बना लीजिये, जिसका व्यास एक सेंटीमीटर से कुछ कम हो। जब पतंग उड़ने लगे, किसी साथी से लटाई पकड़े रहने को कहें। आप बेलन का कागज पुनः सीधा करके उसे लटाई के धागे पर पहनाकर पुनः बेलन की आकृति में मोड़ दीजिये। बेलन पर त्रिज्या की लाइन पर काटा हुआ वृत्त पहना दीजियें; और इसकी एक किनारी को दूसरी पर चढ़ाकर पिन से नत्थी कर दीजिये। आपको कागज की नली पर अच्छी तरह



से जड़ा हुआ कागजी शंकु मिल जायेगा। उसे धागे पर ऊपर की ओर बढ़ायें। हवा उसे पकड़ लेगी और धीरे-धीरे पतंग तक पहुँचा देगी। वापस वह स्वयं नहीं आयेगा ; इसके लिये पतंग उतारनी होगी।

पैराशूट से नीचे उतरना. आप अच्छी तरह जानते होंगे कि अंतरिक्ष-यात्री जब अंतरिक्ष से लौटते हैं, उनका यान अंतिम चरण में पैराशूट के सहारे ही जमीन पर उतरता है।

तांबे के पतले तार से, जिसका व्यास 0.5 मिलिमीटर से अधिक न हो, एक ऐसा फ्रेम बनाइये, जिसके स्वतंत्र सिरों को फंदे की तरह मोड़कर लटाई के धागे से लटकाया जा सके। फ्रेम के अनुतीर (फ्रेम में बने अतिरिक्त फंदों में) तांबे के तार



का एक टुकड़ा घुसा दें (इसे हम 'सुचल छड़' कहेंगे)। इसका पतंग की ओर का सिरा फ्रेम से कुछ सेंटीमीटर आगे धागे के गिर्द खुले फंदे के रूप में मोड़ दें। सुचल छड़ का दूसरा सिरा फिसलने वाले फ्रेम में घुसाकर 180 डिग्री के कोण पर मोड़ दें। इसी सिरे पर हमारा 'यान' लटकाया जायेगा, जिसे पैराशूट से उतारना है। यान का काम रबड़ की छोटी गेंद करेगी। इसे कपड़े से सिले हुए पैराशूट के साथ जोड़ दें। पैराशूट 'बंद' न हो जाये, इसके लिये पतले तार का एक गोल छल्ला बना लीजिये और छल्ले को पैराशूट की किनारियों से जड़ दीजिये। पैराशूट के गुंबज में एक छोटा सा छेद भी होना चाहिये।

पतंग से करीब एक मीटर दूर धागे पर एक हल्का गुटका बांध दीजिये, जो रोक का काम करेगा।

जब पतंग ऊँचाई पर पहुँचकर अच्छी तरह उड़ने लगे, यान और पैराशूट समेत फ्रेम को लटाई के पास धागे से लटका दें। अच्छी तरह जाँच कर लें कि प्रयुक्ति के सभी पुर्जे ठीक-ठाक काम कर रहे हैं, सरलतापूर्वक अपनी जगह से हिल-डुल सकते हैं। यह भी ध्यान रखें कि जब हवा पैराशूट को ऊपर पतंग की ओर ले जायेगी, वह सुचल छड़ के हूक से निकल न आये (दे. चित्र)। सब जाँच लेने के बाद आप अपना 'अंतरिक्षी' उपकरण ऊपर जाने दें। हवा पैराशूट को पकड़ लेगी और धागे पर पतंग की ओर उड़ाने लगेगी। जब सुचल छड़ का अगला हिस्सा रोक से टकराकर रुक जायेगा, फ्रेम तब भी आगे बढ़ता जायेगा, क्योंकि पैराशूट उसे लगातार ऊपर खींचता

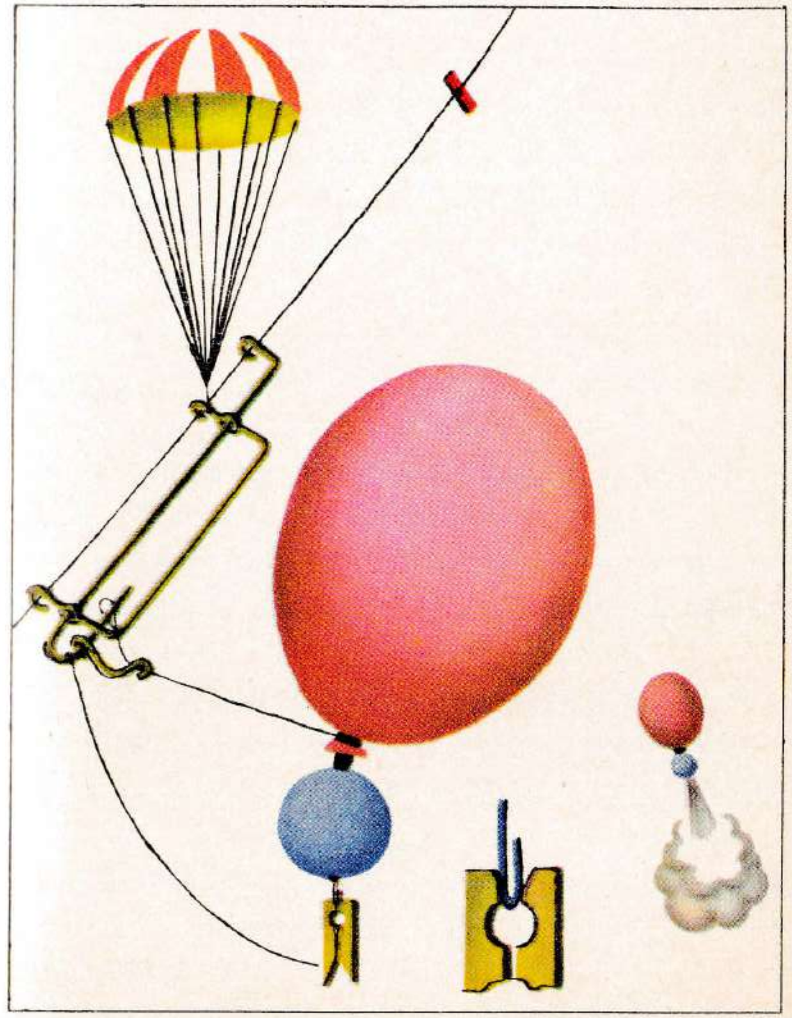
रहेगा। फिर छड़ का निचला सिरा फ्रेम की ओर खिसक जायेगा और जिस फंदे से यान लटक रहा है, वह सुचल छड़ से निकल आयेगा। पैराशूट फ्रेम से मुक्त हो जायेगा और यान धीरे-धीरे जमीन पर पहुँच जायेगा। फ्रेम, जो आपका यान उतारने के लिये स्वचल प्रयुक्ति है, अपना काम करके धागे पर फिसलता हुआ आप तक पहुँच जायेगा।

यह प्रयोग कोई जरूरी नहीं कि एक ही बार में सफल हो जाये। सब कुछ हवा की तेजी पर निर्भर करता है। यह ध्यान रखें कि सभी जोड़ ढीले-ढाले हों (ताकि सुचल छड़ स्वतंत्र फिसल सके) और यान, पैराशूट आदि पर्याप्त हल्के हों। हो सकता है कि सुचल छड़ कुछ मोटे तार से बनाना पड़े। हो सकता है कि फ्रेम का आकार बदलना पड़े। इस प्रयोग में आपको खुद अक्ल लड़ाना पड़ेगा। असफलता से निराश न हों। जब हवा ठीक से बहने लगे, प्रयोग फिर दुहरायें।

सकुशल अवतरण. 'अवतारी यान' जमीन पर बिना चोट खाये सकुशल उतरे, इसके लिये हम प्रतिकारी चलित्र का प्रयोग करेंगे, जो गिरने का वेग कम कर देगा।

हमारा प्रयोग प्रतीकात्मक है, क्योंकि पृथ्वी पर वातावरण है। हम मान लेंगे कि हम पृथ्वी पर नहीं, बल्कि मंगल, बुध या चांद पर हैं और तब वेग घटाने के लिये प्रतिकारी चलित्र का उपयोग करेंगे।

पिछले प्रयोग की स्वचल प्रयुक्ति में सुचल छड़ से यान के



साथ-साथ प्रतिकारी चलित्र भी लटका दें। पैराशूट को फ्रेम से बांध दें। पैराशूट की जरूरत इसलिये है कि यान ऊपर पहुँचाया जा सके, जहां से उसे उतारना है।

इस प्रयोग में यान का काम प्लास्टिलीन की गोली करेगी। इसके अन्दर रबड़ की एक पतली नली लगानी चाहिये। प्रतिकारी चलित्र का काम बैलून करेगा। फुलाने से पहले इसमें गोली की रबड़ की नली का एक सिरा घुसा दें। नली और बैलून को इस स्थान पर धागे से अच्छी तरह से बांध दें। नली का दूसरा सिरा क्लिप से दबा दें। क्लिप को एक मजबूत धागे से बांधकर सुचल छड़ के निचले सिरे से बांध दें। यान समेत बैलून पिछले प्रयोग की तरह ही सुचल छड़ के निचले सिरे से लटकाया जाता है।

जब सब कुछ तैयार हो जाये, पतंग उड़ने लगे, पूरी प्रयुक्ति को धागे से लटकाकर ऊपर चढ़ने दें। रोक तक पहुँचकर सुचल छड़ रुक जायेगी, यान सुचल छड़ के हूक से मुक्त हो जायेगा और नीचे गिरने लगेगा, धागा क्लिप को अलग कर देगा, जिससे बैलून भी यान के साथ नीचे आने लगेगा। बैलून की हवा नली के निचले सिरे से निकलती हुई जमीन की ओर चलेगी और गोली (यान) का वेग कम करने लगेगी। यान धीरे-धीरे जमीन पर उतरेगा। निस्संदेह, यह प्रयोग शुद्ध नहीं होगा, क्योंकि यान के अवतरण पर चारों ओर की हवा भी अपना प्रभाव डालती रहती है; फिर भी, प्रतिकारी चलित्र का प्रयोग तो हुआ ही है।

यह प्रयोग करने के पहले सभी बातों की अच्छी तरह जाँच कर लेनी चाहिये।

पहली बात: यह देख लेना चाहिये कि प्रयुक्ति को धागे पर उठाने के लिये हवा पर्याप्त तेज है या नहीं।

दूसरी बात: क्लिप ऐसा हो कि बैलून से हवा का निकलना रोके रहे, पर साथ ही धागे के झटके से वह नली को छोड़ भी दे।

इन बातों की जाँच जमीन पर ही कर लेनी चाहिये; प्रयोग ऐसी तेज हवा में करनी चाहिये कि वह सफल हो।

पतंगों का संलगन. संलगन अब प्रचलित शब्द होता जा रहा है। यह दो अंतरिक्ष-यानों या अंतरिक्ष-यान के साथ कक्षकीय स्टेशन के जुड़ने की बात याद दिलाता है। यह बहुत ही कठिन काम है। इसमें यानों की उड़ानों के समय की शुद्धता और अंतरिक्ष-यात्रियों की दक्षता की आवश्यकता होती है।

संलगन का अर्थ है साथ जोड़ना। रेलगाड़ी में भी डब्बे जोड़े जाते हैं। इसकी विधि बहुत सरल है, क्योंकि डब्बे पटरियों पर ही चलते हैं; यदि डब्बे एक दूसरे की ओर बढ़ेंगे, तो उन्हें सटना ही होगा।

लेकिन जब अंतरिक्ष में दो यानों के खास अंगों को सटाना होता है, तो बहुत कुशलता की जरूरत पड़ती है, क्योंकि दोनों ही यान अंतरिक्ष में किसी भी दिशा में विचलित हो जा सकते हैं।

हम आसमान में मंडराते दो डब्बेनुमा पतंगों को जोड़ने

की कोशिश करेंगे। यह हमेशा संभव नहीं होता। यह काम पतंगों की कोटि और उड़ाने वाले की निपुणता पर ही नहीं, हवा पर भी निर्भर करता है।

इसके लिये जरूरी है कि हवा रुक-रुककर नहीं, बल्कि स्थिरता के साथ एक दिशा में बहती रहे। तब पतंगें भी स्थिरता के साथ एक जगह 'रुकी' रहेंगी। फिर भी अभ्यास और बुद्धिमानी के बिना यह काम कठिन है।

तीन-तीन आदमियों के दो ब्रिगेड बना लीजिये। एक संचालक भी चुन लीजिये, जो प्रयोग का नेतृत्व करेगा।

प्रयोग के लिये क्या चाहिये?

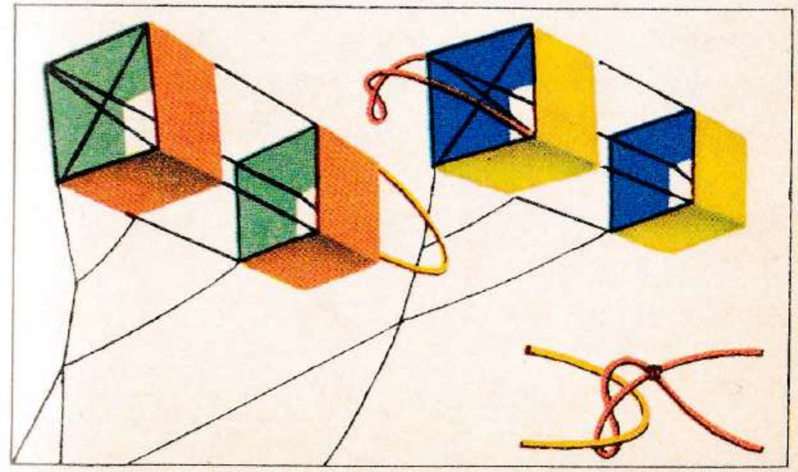
सबसे पहले तो बिल्कुल एक जैसी दो डब्बेनुमा पतंगें होनी चाहियें। हर पतंग को दो लटाइयों से उड़ाना होगा; दोनों ही लटाईं 'नकेल' के एक बिंदु से जुड़े होने चाहियें। यह बिंदु हवा की तेजी के अनुसार चुना जायेगा।

पतंगों को आपस में फँसाने के लिये प्रयुक्तियां लगानी होंगी। जो पतंग आगे होगी, उसके पिछले भाग में लचीले सींकचे का धनुष बांध दिया जाता है। सींकचे की जगह कोमल, सीधी और पतली टहनी का भी उपयोग कर सकते हैं। उसकी छाल हटाकर उसे धनुष के आकार में बांध कर सूखने देते हैं। पतंग में यह फंदे का काम करेगा, जिसमें दूसरी पतंग का अंकुश फँसाया जायेगा।

अंकुश बनाने के लिये वैसी ही, पर कुछ लंबी टहनी लीजिये। उसकी छाल हटाकर उसे सावधानी से धीरे-धीरे मोड़ते

हैं ताकि वह स्वयं अंकुश का आकार ले। पाश की दो किनारियों के मिलन स्थान को रस्सी से कसकर बांध देते हैं। फिर गोल फंदे को नीचे झुकाते हैं और टहनी के सिरों को पतंग के लौंगेरोनों के साथ बांध देते हैं। सूख जाने पर पाश और धनुष की यह आकृति स्थायी हो जायेगी। इसलिये दूसरे स्थान पर ले जाने के लिये वे उनको पतंग से अलग कर सकेंगे।

पतंगों को एक साथ नहीं उड़ाते – पहले एक, फिर दूसरी उड़ाते हैं। दोनों के बीच कुछ दूरी भी होनी चाहिये। हर पतंग के पास तीन आदमी होंगे। दो आदमी एक-एक लटाई पकड़े रहेंगे (याद रखें कि हर पतंग दो-दो लटाइयों पर उड़ानी है)। एक आदमी पतंग लेकर उसे धिरान देने जायेगा। धनुष वाली पतंग को कुछ आगे होना चाहिये और अंकुश वाली को – पीछे।



जब दोनों पतंगें एक ऊँचाई पर पहुँच जायें, तो पीछे वाली पतंग को अगली के करीब लाना चाहिये। अब सातवें आदमी की जरूरत होगी, जो हमारे प्रयोग का संचालन करेगा। उसे दूर खड़ा रहकर दोनों पतंगों की गति-विधि पर निगाह रखनी होगी और समय-समय पर आज्ञाएं देनी होंगी कि कब किस पतंग को किधर लाना है।

यदि पहली बार में दोनों पतंगों का संलगन नहीं होता, तो उन्हें तुरंत दूर कर देना चाहिये, फिर धीरे से पास लाकर दूसरी बार प्रयत्न करना चाहिये।

यदि दोनों पतंगों के धागे आपस में उलझ जायें तो आकाश में उन्हें सुलझाना बेकार है। पतंगें नीचे उतार लेनी चाहिये और तब उन्हें अलग करनी चाहिये।

बादल गरजने और बिजली चमकने के समय पतंग नहीं उड़ानी चाहिये।

यह भी संभव है कि जब पतंगें संलगित हो जायेंगी, तो उनके वायुप्रवेगिक गुण बिगड़ जायेंगे, अर्थात् वे अच्छी तरह से उड़ नहीं पायेंगी। इस स्थिति के लिये तैयार रहना चाहिये और उन्हें फौरन उतार लेना चाहिये।

घर में ग्रहचर

पहले स्वचल उपकरण भेजे जाते हैं. दूसरे ग्रहों पर आदमी भेजने के पहले स्वचल उपकरण भेजे जाते हैं। अनजान जगह पर आदमी का जीवन खतरे में नहीं डालना चाहिये। वैसे, इतिहास हमें अनेक वैज्ञानिकों तथा आविष्कारकों के नाम बताता है, जो ज्ञान का विकास करने के लिये अपने जीवन को खतरे में डालने से नहीं डरे। लेकिन यह पागलपन नहीं था, आवश्यक था। इस तरह का खतरा कोन्स्तान्तीन आर्त्सेऊलोव ने मोल लिया था। 1916 में जब विमानन अपने शैशव में था, वे चक्कर काटते हुए गिरते विमान को सर्पिलापात से बचाने की विधि ढूँढ़ रहे थे। इसमें वे सफल भी हो गये। उस समय विमान-चालक ऐसी स्थिति से बचाव का रास्ता नहीं जानते थे, जिसके कारण बहुतों को जान से हाथ धोना पड़ा। आर्त्सेऊलोव इस समस्या पर सोचने लगे कि सर्पिलापात में फँसे विमान को ठीक-ठाक जमीन पर कैसे उतारा जाये। उन्होंने कुछेक विधियां विकसित कीं, जो उनके अनुसार सर्पिलापात से बचने की गारंटी देती थीं। अपने कलनों की जाँच के लिये उन्होंने निश्चय किया कि विमान को सर्पिलापात से निकालने का प्रयोग वे खुद करेंगे।

खतरा जरूर था, पर बचकाना नहीं था। आर्त्सेऊलोव को अपने निष्कर्षों में विश्वास था, उनके कलन सही थे। उन्होंने विमान को ऊँचाई पर पहुँचाया, फिर कृत्रिम सर्पिलापात की

स्थिति उत्पन्न की और विमान को इस खतरनाक स्थिति से बाहर भी निकाल लिया। बचाव संयोगवश हुआ था या उनकी विधि से बचाव होना ही था, यह देखने के लिये उन्होंने प्रयोग को दुहराया। सब ठीक-ठाक था। तब से सभी विमान-चालक आर्त्सेऊलोव को विधि का उपयोग करने लगे और सर्पिलापात का खतरा हमेशा के लिये दूर हो गया।

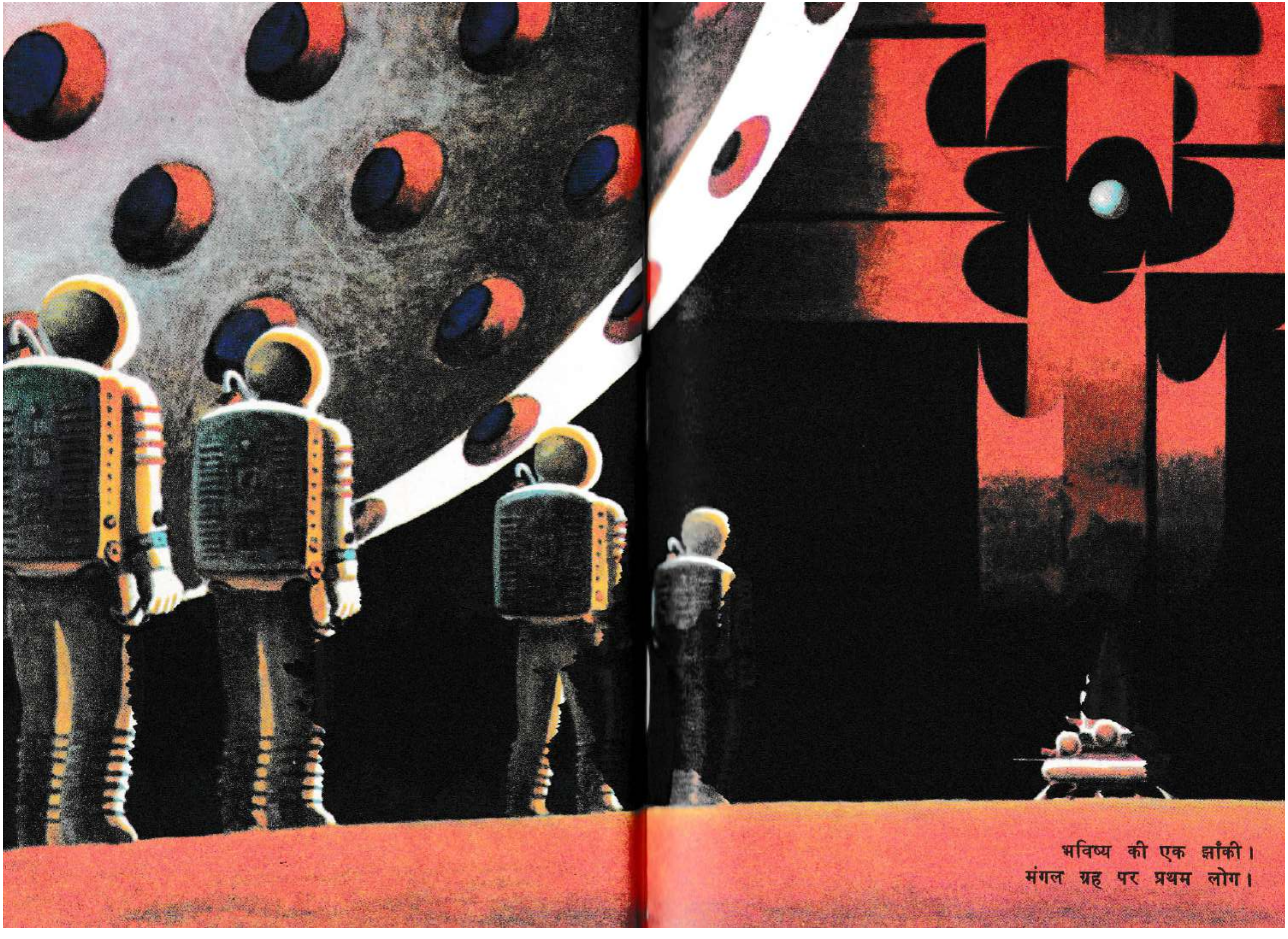
जबतक पूरी तरह विश्वास नहीं हो जायेगा कि सौर-मंडल के ग्रहों तक जाना आदमी के जीवन और स्वास्थ्य के लिये खतरनाक नहीं है और वह सही-सलामत घर लौट आयेगा, ग्रहों के अन्वीक्षण के लिये स्वचल उपकरण ही भेजे जायेंगे। इन्हें जो काम सौंपा जाता है, पूरा कर लेते हैं और इनका पृथ्वी पर लौटना जरूरी भी नहीं होता। यदि वहां से कुछ नमूने मंगाने हों, तभी उन्हें लौटना पड़ता है। उदाहरण के लिये, चांद की मिट्टी पृथ्वी पर हमारे स्वचल उपकरण ले आये थे।

स्वचल उपकरणों को निश्चित प्रोग्राम दिया जाता है और उनसे संबंध रेडियो के सहारे किया जाता है। यह संबंध दोतरफा होता है; कभी-कभी वह करोड़ों किलोमीटर की दूरी पर होता है। पृथ्वी से कोडित स्पंदों के रूप में रेडियो-संकेत भेजे जाते हैं। ये स्पंद अंतरिक्ष-यान पर स्थित उपकरणों व प्रयुक्तियों के लिये आज्ञा का काम करते हैं। वहां से वापस पृथ्वी पर खबर भी स्वचल उपकरणों की भाषा में कंप्यूटरों तक आती है, जो उनका डिकोडन करते हैं।

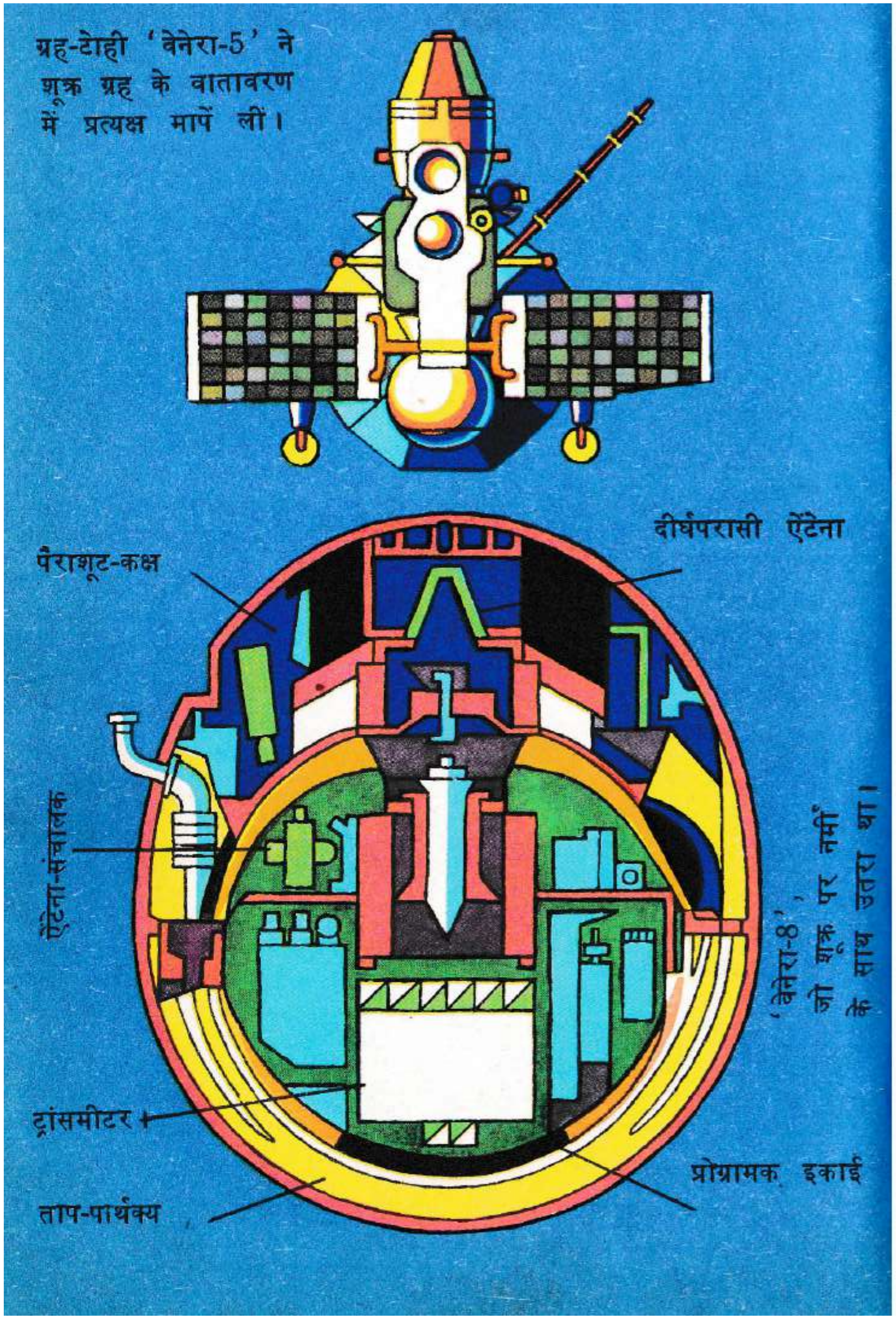


स्वचल व्यापक अन्वीक्षण-केंद्र 'इंटरकोस्मोस-17'

बुल्गारिया, क्यूबा, चेखोस्लोवाकिया, जर्मन जनवादी गणराज्य, हंगेरी, मंगोलिया, पोलैंड, रूमानिया, सोवियत संघ, वियतनाम



भविष्य की एक झांकी।
मंगल ग्रह पर प्रथम लोग।



ग्रह-टोही 'वेनेरा-5' ने शुक्र ग्रह के वातावरण में प्रत्यक्ष मापें लीं।

'वेनेरा-8', जो शुक्र पर नर्मी के साथ उतरा था।

चांद के अन्वीक्षण का एक महत्त्वपूर्ण साधन ऐसा उपकरण है, जो पृथ्वी से प्राप्त आज्ञाओं के अनुसार विचाराधीन क्षेत्र में घूमता हुआ प्रेक्षण करता है और प्राप्त सूचनाएं पृथ्वी पर भेजता है। इस उपकरण का नाम चंद्रचर (लूनोखोद) पड़ा है।

सोवियत चंद्रचरों का काम सारी दुनिया एक लंबी अवधि तक देखती रही है। उन्होंने चांद की सतह पर सैकड़ों किलोमीटर तय किये और जो कुछ भी 'देखा', 'जाना', उसे पृथ्वी पर कोडित भाषा और टेलीवीजन के सहारे प्रेषित किया।

सोवियत स्वचल उपकरण चांद से मिट्टी का नमूना ले आया, जिससे वैज्ञानिकगण चांद की मिट्टी का अध्ययन कर सके।

स्वचल उपकरणों को जो काम दिया जाता है, उसे वे अच्छी तरह से पूरा करते हैं। अंतरिक्ष में टोहें लेने का काम उन्हें अभी लंबे समय तक करना है; इसके बाद ही लोग सौर-मंडल के ग्रहों तक निरापद रूप से उड़ सकेंगे और वहां से धरती पर वापस लौट सकेंगे।

फिलहाल आदमी पृथ्वी के निकटवर्ती व्योम में ही भ्रमण कर रहा है; लोग वहां पर ऐसे काम कर रहे हैं, जो स्पूतनिकों के वश की बात नहीं है: वे अन्वीक्षण कर रहे हैं कि लंबे समय तक अंतरिक्ष में रहने से आदमी पर क्या बुरे प्रभाव पड़ सकते हैं, भारहीनता से होने वाले नुक्सान को दूर कैसे किया जा सकता है, लंबे समय तक तंग और बंद जगह में रहने से शरीर को क्या हानियां हो सकती हैं, उन्हें दूर करने के क्या उपाय हैं।

हम लोग अभी चंद स्वचल उपकरण बनायेंगे। इससे यह

समझने में सहायता मिलेगी कि असली स्वचल उपकरण किस प्रकार काम करते हैं। हम ग्रहचरों के भी नमूने बनायेंगे।

नीचे जिन प्रतिमानों का वर्णन किया गया है, उनकी बनावट असली ग्रहचरों की बनावट से बहुत दूर है। इन्हें प्रतिमान भी नहीं कहा जा सकता; ये चलते-फिरते स्टैंड हैं, स्वचल उपकरण के कोई अवयव हैं, उनमें लगी हुई कोई प्रयुक्तियां हैं, जिनके आधार पर स्वचल उपकरणों का कार्य-सिद्धांत समझा जा सकता है।

असली ग्रहचर बनाते वक्त हमेशा उन वास्तविक परिस्थितियों को ध्यान में रखना पड़ता है, जिनमें उनका काम होगा; जैसे, ग्रह की भू-आकृति कैसी है, उसका वातावरण कैसा है, वहां तापक्रम किस प्रकार बदलता है, वातावरण में आर्द्रता कितनी है (यदि वहां पानी है)। इनके अतिरिक्त भी अनेकानेक भौतिक तथा रसायनिक परिस्थितियां हैं जिनका खयाल रखना पड़ता है।

ग्रहचर का सरलीकृत प्रतिमान. दूसरे ग्रहों का अन्वीक्षण करने के लिये बनाये गये ग्रहचर के इस प्रतिमान का वर्णन हम बहुत संक्षेप में करेंगे। प्रथमतः, इससे आप में स्वयं पहल करने की इच्छा होगी, आप खुद सोचकर इसमें कुछ सुधार करने को प्रेरित होंगे, कुछ और जोड़ने-घटाने की बात सोचेंगे। दूसरे, यदि आपको निश्चित विशेषताओं (आकार, आकृति) की सामग्रियों का नाम बता दिया जाये और वे कहीं न मिलीं, तो

आपको खुद अपनी सूझ-बूझ से उनकी जगह दूसरी सामग्रियों का चुनाव करना पड़ेगा।

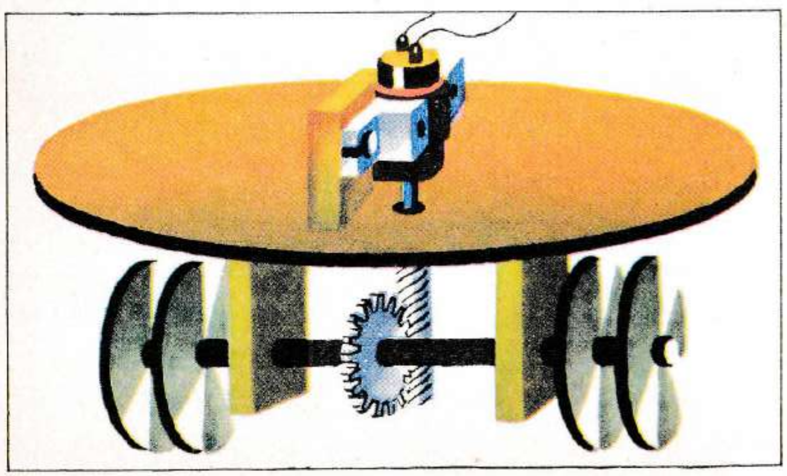
शुरू में हम ग्रहचर का बिल्कुल सरलीकृत प्रतिमान बनायेंगे। यह तीन पहियों वाला स्वचल उपकरण होगा, जो दूर से आज्ञा देने पर चला करेगा। प्रतिमान को संचालित करने वाले स्पंदों का काम ड्रौपर में लिये गये पानी की बूंदें करेंगी।

पहले प्लाई वुड का एक गोल प्लेटफार्म बना लें, जिसका व्यास लगभग 12 सेंटीमीटर हो। इसके ऊपर ऐसा यंत्र लगाया जायेगा, जो पूरे उपकरण को गति प्रदान करेगा, उसकी दिशा को नियंत्रित करेगा। नीचे – चलने के लिये प्रयुक्तियां होंगी। तीन चक्के होंगे: दो पिछले चक्के होंगे, जिनपर गति की जिम्मेवारी होगी, और एक अगला चक्का होगा जो दिशा निर्धारित करेगा। चंद्रचरों में आठ-आठ चक्के लगाये गये थे और गति की जिम्मेवारी हर चक्के पर थी (हर चक्का अलग मोटर से चलता था)। इसी कारणवश चंद्रचर चांद की जटिल सतह पर इतनी सफलता के साथ भ्रमण करते थे।

चक्कों के लिये सिनेमा के 2×8 मिलिमीटर आकार के फिल्मों की रीलों का उपयोग करें। उनका व्यास करीब 5 सेंटीमीटर होता है। ऐसे चक्के सिर्फ चिकनी समतल जगह पर ही चल सकते हैं, लेकिन हमारे लिये सिर्फ उनके संचालन का सिद्धांत समझना ही महत्त्वपूर्ण है।

पतली नली या गोल छड़ी को धुरी बनाकर उसपर किसी पुरानी, टूटी घड़ी का सबसे बड़ा दंतिचक्र बीचों-बीच चढ़ा

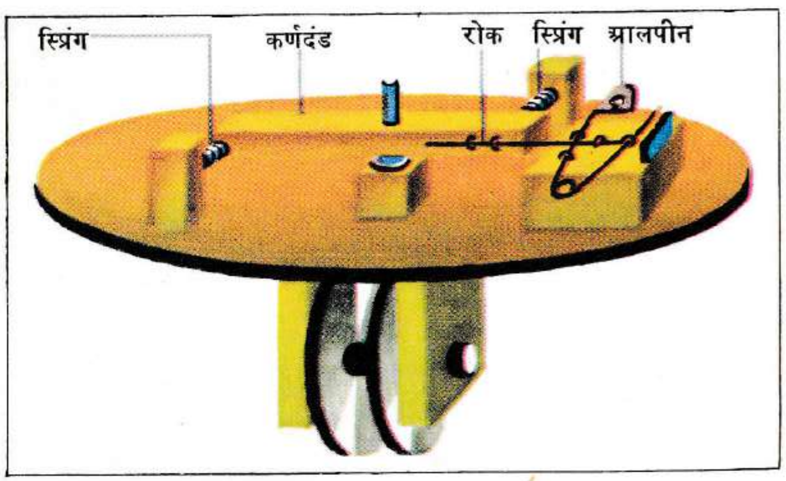
दीजिये (अक्ष का काम पेंसिल भी कर सकती है)। दंतिचक्र चढ़ाने के पहले उसका फौलादी अक्ष निकालना होगा। यह काम बहुत सावधानी से पिलास और पेंचकस की सहायता से करते हैं (आपको पत्तर की बनी कमानी को अलग करना होगा)। यदि आप अक्ष के रूप में गोल पेंसिल (गोल अनुप्रस्थ काट वाली पेंसिल) का उपयोग कर रहे हैं, तो पहले उसके बीच धातु, कचकड़े या प्लास्टिक की नली का छोटा-सा टुकड़ा चढ़ा लीजिये, फिर उसपर दंतिचक्र चढ़ाइये। प्लेटफार्म के नीचे लकड़ी के दो गुटके पेंच के सहारे जड़ दीजिये जो बेयरिंग का काम करेंगे। इन गुटकों में अक्ष घुसाने के लिये एक-एक छेद बना होना चाहिये। गुटके किसी पतली तख्ती से काटकर बना सकते हैं। बेयरिंग में अक्ष, दंतिचक्र, चक्के आदि लगा लेने



के बाद प्लेटफार्म में दंतिचक्र के सामने एक छेद बना लीजिये। इस छेद से होकर सर्पिलाकार दंतिचक्र निकला रहेगा, जिसका ऊपरी सिरा प्लेटफार्म पर जड़े हुए नन्हे विद्युत-मोटर के साथ जुड़ा होगा। (सर्पिलाकार दंतिचक्र, जिसे हम पेंच-चक्र कहेंगे, बेलनाकार पेंच की तरह होता है, जिसकी चूड़ियां गहरी, नुकीली और दूर-दूर होती हैं। इन चूड़ियों में गोल दंतिचक्र के दाँत फँसे रहते हैं। सर्पिलाकार दंतिचक्र, अर्थात् पेंच, के घूमने पर गोल दंतिचक्र भी नाचने लगता है।) मोटर का अक्ष प्लेटफार्म के अभिलंब होना चाहिये। नन्हे विद्युत-मोटर कई प्रकार के होते हैं। ये टार्च की बैटरी से चलते हैं। आपको मोटर अवकारक के साथ खरीदना होगा, जो चक्करों की संख्या कम कर देता है। पेंच-चक्र किसी पुराने खिलौने से निकाल सकते हैं। पेंच-चक्र और गोल दंतिचक्र के दाँत आपस में ठीक-ठीक फंसे होने चाहिये। यदि जरूरत हो, तो रेती का उपयोग करते हैं। जब पेंच-चक्र और गोल दंतिचक्र के दाँत अच्छी तरह से आपस में फँस जायें और मोटर प्लेटफार्म पर जड़ा जा चुका हो, तब आप दिशा-निर्धारण के लिये स्टीयरिंग-प्रयुक्ति बनाना शुरू करें। आपका उपकरण बहुत जटिल न हो जाये, इसलिये स्टीयरिंग ऐसा बनाना होगा जो दायीं या बायीं ओर की ही गति दे सकेगा (स्टीयरिंग हमेशा दायें या हमेशा बायें मुड़ा रहेगा), जिसके फलस्वरूप उपकरण एक गोल पथ पर चला करेगा।

लकड़ी की तख्ती के तीन टुकड़ों से स्टीयरिंग का त्रिशूल बना लीजिये। इस पर लकड़ी का अक्ष बिठाइये। चक्का अपनी

जगह पर लगा दीजिये, एक छोटी सी धुरी बेयरिंगों और चक्के के छेद में घुसा दीजिये। प्लेटफार्म में एक छेद बना लीजिये और उसपर लकड़ी का गुटका चिपका दीजिये, जिसमें वैसा ही एक छेद आर-पार बना हो। जिस अक्ष के गिर्द स्टीयरिंग घूमेगा, उसपर धातु या प्लास्टिक का वाशर लगा दीजिये। इससे द्विशूल और प्लेटफार्म के बीच घर्षण कम हो जायेगा। स्टीयरिंग के उदग्र अक्ष पर लकड़ी की एक पटरी लगा दीजिये, जिसे हम नाविकों की भाषा में रूपेल (कर्णदंड) कहेंगे (इसकी तुलना साइकिल के हैंडिल से की जा सकती है)। रूपेल के सिरे स्प्रिंगों द्वारा विपरीत दिशाओं में खिंचे होने चाहियें। स्टीयरिंग 'सीधा' की स्थिति में रहे, इसके लिये स्प्रिंगों को

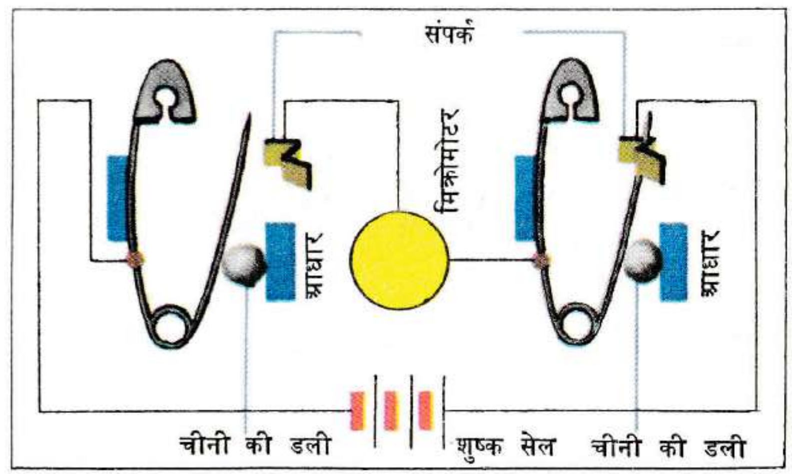


लमड़ाकर रूपेल थोड़ा घुमा लेते हैं और उसकी एक भुजा को तार के टुकड़े की सहायता से इस प्रकार जड़ देते हैं, कि जरूरत पड़ने पर उसे हटाकर रूपेल को मुक्त किया जा सके। तार हटाते ही रूपेल स्प्रिंगों के प्रभाव से अपनी पुरानी स्थिति में आ जायेगा और उपकरण गोल पथ पर चलने लगेगा।

अब प्लेटफार्म पर टार्च की बैटरी रखनी है और वैद्युत परिपथ जोड़ना है।

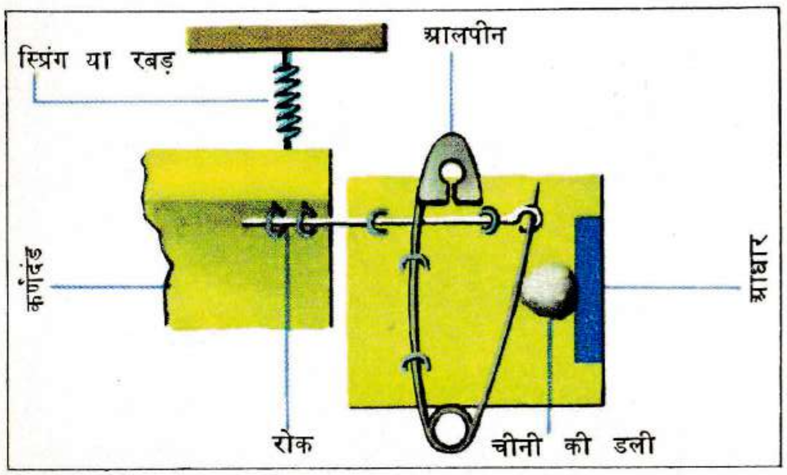
प्लेटफार्म पर दो संपर्क-बिंदु बनायें, जिनसे होकर बैटरी की विद्युत-धारा नन्हे विद्युत-मोटर में आ सके।

संपर्क-बिंदु एक सेफ्टी-पिन और एक संपर्क से बनाया जायेगा। मोटर चालू करने वाला संपर्क-बिंदु पीतल के छोटे से पत्तर



और सेफ्टी-पिन के नुकीले पैर से बनेगा। सेफ्टी-पिन को इस तरह से लगाते हैं कि जब वह खुला रहे, उसकी नोक पत्तर को छूती रहे। पिन को थोड़ा सा भी दबाने पर संपर्क टूट जायेगा। पिन और पत्तर के बीच तेजी से घुलने वाली चीनी की एक डली (मटर के बराबर) रख दीजिये। सेफ्टी-पिन एक अच्छी कमानी (स्प्रिंग) का काम करता है। वह पूरी तरह खुलने की कोशिश करता है, पर चीनी की डली उसे रोके रखती है। यदि इस डली पर पानी की एक बूंद डाल दी जाये, तो वह पल भर में बिखर जायेगी, पिन खुल जायेगी और संपर्क स्थापित हो जायेगा, मोटर चालू हो जायेगा।

दूसरा संपर्क-बिंदु मोटर रोकने के लिये होगा। इसमें चीनी



की डली पर पानी की बूंद डालने पर दूसरा सेफ्टी-पिन खुलता है और यह पिन खुलने के साथ-साथ संपर्क तोड़ देता है ; मोटर रुक जाता है।

जहां तक स्टीयरिंग-प्रयुक्ति का सवाल है, उसे रोककर रखने वाले तार के टुकड़े के पास भी एक सेफ्टी-पिन जड़ देना चाहिये। 'जलीय स्पंद' (पानी की बूंद) चीनी की डली को घुला देगा, पिन पूरी तरह खुल जायेगा और साथ-साथ तार को खींच लेगा ; मुक्त रूपेल स्प्रिंग के प्रभाव से स्टीयरिंग को घुमा देगा।

यदि आप चाहें, तो जलीय संकेत पर काम करने वाले अन्य उपकरण भी बना सकते हैं (जलीय संकेत हमारे उपकरणों में वही भूमिका अदा करता है, जो असली उपकरणों में रेडियो-संकेत)।

ये प्रयुक्तियां बेशक बहुत सरल हैं, लेकिन वे यह दिखाने के लिये बनायी गयी हैं कि 'चालू', 'मोड़', 'रुक' जैसी आज्ञाएं कैसे पूरी होती हैं। हमारे उपकरण में तीन आज्ञाएं हैं ; तीन संकेतों से तीन कार्य संपन्न होते हैं।

ऊपर वर्णित उपकरण का काम दुबारा दिखाने के लिये उसके आज्ञापालक अवयवों को पुनः तैयार करना होगा, ताकि वह सारा प्रोग्राम दुबारा पूरा कर सके।

यदि चाहें, तो अपने ग्रहचर पर गत्ते का बौडी भी बना सकते हैं। उसके छत में उन जगहों पर पतली नलियां घुसा सकते हैं, जिनसे होकर 'जलीय स्पंद' उपकरण में प्रविष्ट होंगे।

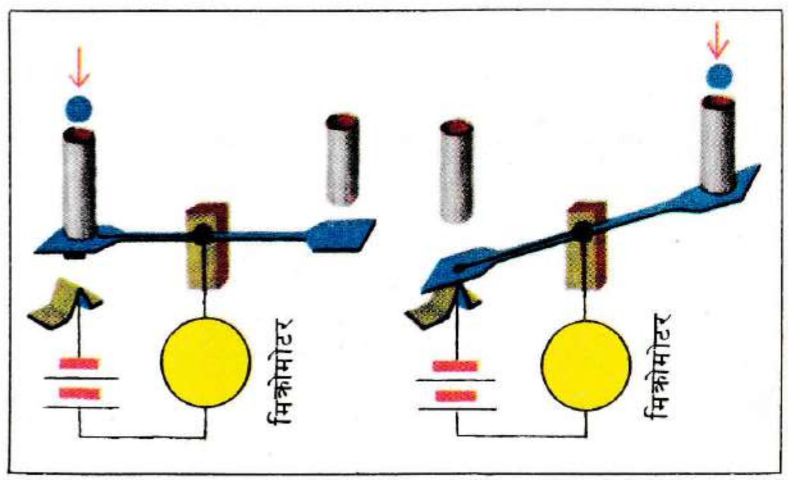
उनके पास ये शब्द भी लिखे जा सकते हैं: 'चालू', 'मोड़', 'रुक'। ये शब्द दिखायेंगे कि कौनसी आज्ञा किधर से भेजी जाये।

चंद स्वचल प्रयुक्तियां. यदि दूर से संचालित ग्रहचर का अधिक विकसित रूप बनाने का विचार आपको आकर्षित करे, तो आपको पहले चंद स्वचल प्रयुक्तियों से परिचित होना होगा, जिनकी जगह हम स्प्रिंगों – सेफ्टी-पिनों – का उपयोग करेंगे। इन प्रयुक्तियों को छोटे-से स्टैंड पर बनाना अच्छा रहेगा। स्टैंड का काम छोटा-सा चिकना तख्ता करेगा, उन्हें नियंत्रित किया जा सकेगा, फिर उन्हें उस ग्रहचर के प्रतिमान में लगाया जा सकेगा, जिसे आप बनायेंगे।

शुरूआत मोटर को चालू करने और रोकने वाली प्रयुक्तियों से करेंगे। स्टैंड पर एक गुटका रखें और उसपर लकड़ी की छड़ी से बनी एक बहंगी लगा दें। बहंगी को क्षैतिज अक्ष के गिर्द स्वतंत्र घूर्णन करना चाहिये। बहंगी के सिरे पतवार जैसे चपटे और क्षैतिज होने चाहिये। एक के नीचे लंबवत तांबे का संपर्क-प्लेट लगा होना चाहिये। बहंगी की इस भुजा को नीचे उतारने पर उसका संपर्क-प्लेट नीचले तांबे के पत्तर से *M* के आकार के अचल संपर्क-प्लेट में फँस जाता है। अचल संपर्क टार्च की बैटरी के एक ध्रुव के साथ जुड़ा होता है। दूसरे ध्रुव से तार नन्हे विद्युत-मोटर या बल्ब से गुजारकर बहंगी के स्तंभ के सहारे-सहारे बहंगी के संपर्क-प्लेट के साथ जोड़ दीजिये। पतवारों के ऊपर (जब बहंगी क्षैतिज हो) एक-एक नली उदग्र जड़ दीजिये। एक नली का निचला सिरा संपर्क वाले पर लटकना चाहिये और दूसरी का – दूसरे पतवार पर। स्तंभ से बहंगी की भुजा पर चलते चलते पतवार के नीचे स्थित संपर्क तक तार खींचिये। आप समझ गये होंगे कि यह प्रयुक्ति कैसे काम करेगी।

बाल-बेयरिंग की फौलादी गोली ले लीजिये। उसका आकार ऐसा होना चाहिये कि वह नली में घुस सके। नली इसीलिये चाहिये कि आवश्यक आज्ञाओं के स्पंद भेजे जा सकें।

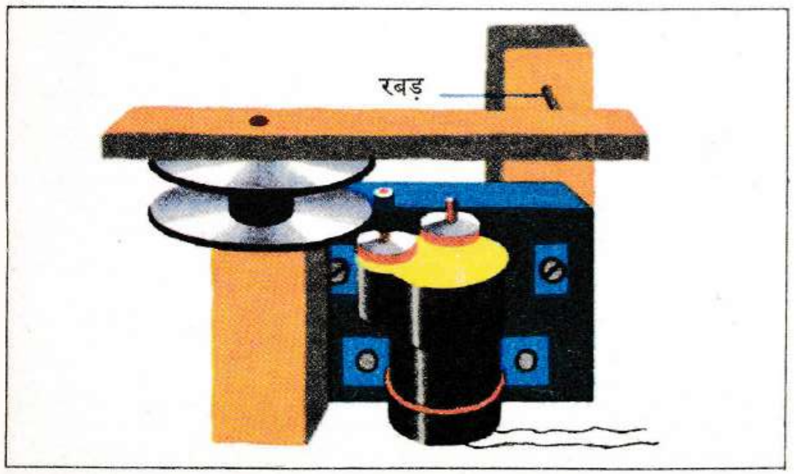
जब सब कुछ तैयार हो जाये, तार अपनी-अपनी जगहों पर जोड़ दिये जायें, तब प्रयुक्ति की जाँच शुरू की जा सकती है। शुरू में बहंगी को क्षैतिज स्थिति में होना चाहिये। संपर्क



वाले पतवार के ऊपर लगी नली में गोली डालिये; गोली पतवार से टकरायेगी और उसे नीचे भेज देगी। संपर्क-प्लेट जुड़ेंगे और परिपथ में विद्युत-धारा बहने लगेगी, मोटर चालू हो जायेगा या बल्ब जल उठेगा। अब दूसरी नली में गोली डालिये। संपर्क अच्छी तरह देख-सुन कर बनाना चाहिये, ताकि दूसरे पतवार पर गोली के गिरने से संपर्क सरलतापूर्वक टूट जाये। संपर्क टूटते ही मोटर रुक जायेगा या बल्ब बुझ जायेगा।

असली उपकरण में किसी अंग को चालू करने या रोकने के लिये जो रेडियो-संकेत भेजे जाते हैं, उनकी जगह हम गोली का प्रयोग कर रहे हैं।

बहंगी सरलतापूर्वक घूर्णन कर सके तथा साथ ही अगल-



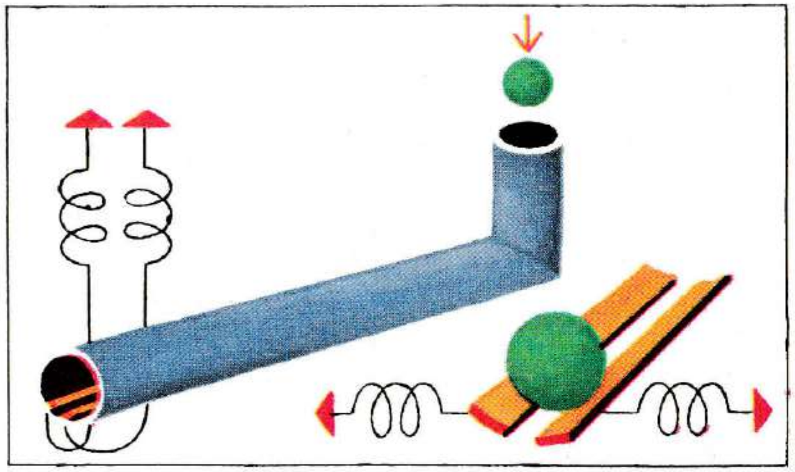
बगल न झूले, इसके लिये उसके अक्ष पर एक वाशर पहना देना चाहिये, जिसे आप प्लास्टिक के टुकड़े में छेद करके बना सकते हैं।

अब स्टीयरिंग घुमाने वाली प्रयुक्ति बनायें। इसे भी पहले स्टैंड पर ही बनाना चाहिये। स्टैंड, जो एक तख्ता है, कुछेक सेंटीमीटर ऊँचे दो गुटकों पर रखकर उसमें एक छेद बना लीजिये, जिसमें 6–7 मिलिमीटर व्यास की डंडी घुस सके। मोटे तख्ते से 2–3 सेंटीमीटर मोटा एक टुकड़ा काट लीजिये। काटने के पहले उसमें भी उसी व्यास का एक छेद बना लीजिये। इस टुकड़े को स्टैंड पर इस प्रकार चिपकाइये कि दोनों के छेद एक जगह पर हों। इसके लिये एक गोल डंडी का उपयोग कीजिये – इसे दोनों छेदों में घुसाने के बाद टुकड़े को स्टैंड से चिपकाइये। इस बात का ध्यान रखियेगा कि डंडी स्वयं छेद में न चिपक जाये, या फंस जाये। यह डंडी ही आपके ग्रहचर के स्टीयरिंग का अक्ष होगा। जब गोंद सूख जाये, स्टीयरिंग का अक्ष छेद में घुसा दीजिये और उसपर सिनेमा के फिल्म का छोटा रील पहना दीजिये। अक्ष का ऊपरी सिरा रील के कुछ ऊपर निकला रहना चाहिये। इस सिरे पर लकड़ी की एक पटरी (करीब 10 सेंटीमीटर लंबी) क्षैतिज स्थिति में जड़ देते हैं। पटरी (रूपेल) के हर सिरे पर रबड़ की पट्टी का एक सिरा ठोक दीजिये। ये पट्टियां बहुत कड़ी नहीं होनी चाहियें, आसानी से लमड़ने लायक होनी चाहियें। पट्टियों के दूसरे सिरों को स्टैंड पर रूपेल से कुछ दूर चिपकाये गये गुटकों के साथ जड़ दीजिये। अक्ष को

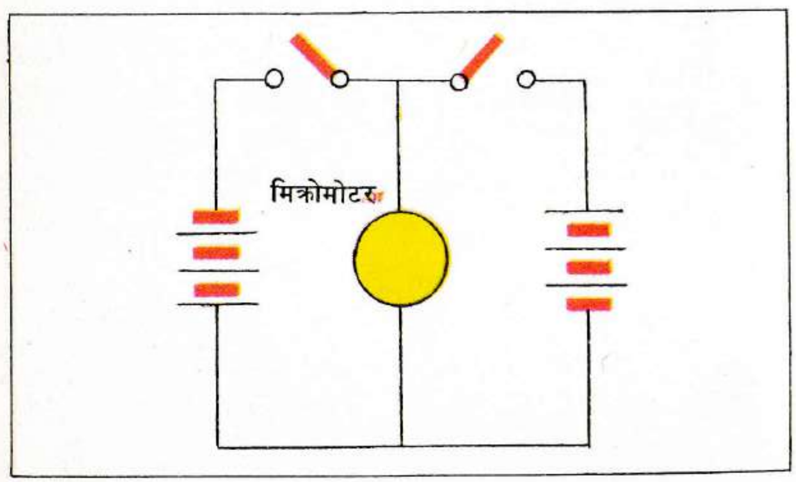
अपने अक्षधर छेद में सरलतापूर्वक घूर्णन करने लायक होना चाहिये, लेकिन उसके घूमते ही रबड़ की पट्टियां उसे आरंभिक स्थिति में लाने को प्रवृत्त होंगी (अक्ष को 40° से अधिक नहीं घुमाना है)। रील के पास एक नन्हा विद्युत-मोटर जोड़ दीजिये। मोटर अवकारी के साथ होना चाहिये, जो चक्करों की संख्या कम कर सके। मोटर का अक्ष उदग्र होना चाहिये ; उसपर निपुल का रबड़ पहना दें। अक्ष का यह भाग रील की किनारी को दबाते हुए छूता रहे (ताकि बैटरी से जोड़ने पर मोटर के घूमते ही रील भी घूमने लगे)। रबड़ की एक पट्टी जब तनेगी, दूसरी ढीली पड़ जायेगी। रील जैसे ही 40 डिग्री के कोण पर घूमेगा, मोटर को औफ हो जाना चाहिये। इसके साथ ही रील अपनी पुरानी स्थिति में लौट आयेगी। रबड़ की पट्टियों से जुड़े रूपेल की जगह रील के अक्ष पर सर्पिलाकार स्प्रिंग को जड़ा जा सकता है ; वह भी रील को आरंभिक स्थिति में वापस कर सकता है। लेकिन इसकी जरूरत ही क्या है? जब आप साइकिल चलाते हैं और बायें (या दायें) मोड़ लेते हैं, तो फिर तुरंत ही हैंडिल को पुरानी स्थिति 'सीधा' में ला देते हैं, अन्यथा साइकिल बायें ही बायें गोल चक्कर काटने लगेगी। यहां भी यही बात है – मोड़ ले चुकने के बाद स्टीयरिंग को 'सीधा' की स्थिति में ला देना चाहिये।

अब संपर्की स्विच बनाते हैं। इसकी सहायता से उपकरण को आवश्यक दिशा में घुमाया जा सकेगा। आज्ञा स्पंदों के रूप में दी जायेगी ; स्पंदों का काम गोलियां करेंगी।

संपर्की स्विच का रहस्य यही है कि वह तभी काम करता है, जब गोली 10–15 सेंटीमीटर लंबी एक नली में लुघड़ती है। इन चंद सेकेंडों में स्टीयरिंग खुद-ब-खुद घूम जायेगा। नली पतले गत्ते से बनाते हैं, जिसमें फौलादी गोली लुघड़ेगी। नली का व्यास गोली के व्यास से 2–3 मिलिमीटर अधिक होना चाहिये। आवश्यक व्यास की एक नली या एक छड़ ले लीजिये। यह साँचे का काम करेगा। इसके ऊपर गत्ते को लपेटकर उसे नली की आकृति दीजिये और बाकी गत्ते से इसे काटकर अलग कर लीजिये। इसे सीधा करने पर आपको गत्ते की एक पट्टी मिल जायेगी। इसी लंबाई की पन्नी ले लीजिये, उससे दो अत्यंत पतली धारियां काटकर उन्हें नली बनाने वाले गत्ते के अनुतीर भीतर से एक दूसरे के समानांतर चिपका दीजिये। चिपकाने



के पहले उनके सिरों के नीचे तांबे के पतले तारों के सिरे भी दबा दीजिये या उनके साथ सोल्डिंग कर दीजिये। पन्नियों के बीच कोई दो मिलिमीटर का स्थान होना चाहिये। गत्ते को पुनः साँचे पर लपेटिये और नली की आकृति में चिपकाकर सुखा लीजिये। साँचा निकाल लीजिये। नली को क्षैतिज स्थिति में, बहुत हल्के झुकाव के साथ जड़ देते हैं। जो सिरा ऊँचाई पर है, उसमें एक ऐसी ही नली उदग्र दिशा में जोड़ दीजिये। इस नली में पन्नी की जरूरत नहीं है। इस नली में डाली गयी गोली पन्नियों के बीच संपर्क स्थापित कर देगी (आप समझ गये होंगे कि ये पन्नियां विद्युत-परिपथ में संपर्क-प्लेटों का काम करती हैं)। परिपथ में तबतक विद्युत-धारा बहती रहेगी, जबतक गोली क्षैतिज नली में लुढ़केगी। नली से गोली के निकलते



ही परिपथ टूट जायेगा। इस तरह की दो नलियां होनी चाहियें। एक बायां मोड़ लेने में सहायक होगी और दूसरी – दायां।

आरेख में दिखाया गया है कि पन्नियों से जुड़े तारों को परिपथ में कैसे शामिल किया जाये। जब गतिमान ग्रहचर को दायें घुमाने की आवश्यकता हो, आप स्पंद – गोली – को एक नली में डालते हैं, वह पन्नियों के बीच संपर्क स्थापित करके परिपथ में धारा चालू कर देती है। संपर्क तबतक बना रहता है, जबतक वह नली में लुढ़कती है। जैसे ही गोली बाहर निकल आयेगी, स्टीयरिंग घुमाने वाला मोटर रुक जायेगा; रबड़ के प्रभाव से स्टीयरिंग पुरानी ('सीधी') स्थिति में आ जायेगा और ग्रहचर मुड़ चुकने के बाद सीधा चलता चला जायेगा, जबतक कि आप अगली आज्ञा का 'स्पंद' नहीं भेजते। जब आप ग्रहचर को बायीं दिशा में मोड़ना चाहते हैं, आप गोली को बायीं नली में डालते हैं। परिपथ में इस बार विपरीत दिशा में धारा बहती है, मोटर विपरीत दिशा में घूमकर स्टीयरिंग को बायें घुमा देता है (धारा विपरीत दिशा में इसलिये बहती है कि ध्रुवीयता बदल जाती है)। आरेख से स्पष्ट है कि स्टीयरिंग के संचालन के लिये ग्रहचर पर टार्च की दो बैटरियां लगानी चाहियें। स्टैंड पर ही स्टीयरिंग-प्रयुक्ति की जाँच कर लीजिये। रबड़ की पट्टियां मुलायम होनी चाहियें, ताकि नन्हा विद्युत-मोटर उन्हें तान सके। कितनी देर तक स्विच औन रखना है, इसका नियमन आप दो विधियों से कर सकते हैं: या तो नली के भीतर कुछ दूर तक कागज की एक पतली पट्टी बिछाकर गोली

का संपर्क-पथ कम कर दीजिये, या नली का झुकाव बदल दीजिये।

जब ये उपकरण स्टैंड पर अच्छी तरह काम करने लगेंगे, तब आप ग्रहचर बनाना शुरू कर सकते हैं। ग्रहचर में उन्हें फिट कर लेने के बाद अतिरिक्त जाँच की भी आवश्यकता पड़ सकती है। उदाहरण के लिये, हो सकता है कि एक नन्हे विद्युत-मोटर से काम न चले। तब दूसरा भी लगाना पड़ेगा। सच्चे इंजिनियर सब कुछ पहले से हिसाब लगा लेते हैं और सारा आरेख पहले से तैयार रखते हैं, फिर नमूने के तौर पर एक उपकरण बनाते हैं, उसकी जाँच-पड़ताल करके देखते हैं कि हिसाब ठीक था या नहीं। हमें तो उन्हीं सामग्रियों से संतोष करना है, जो आसानी से मिल जाती हैं, और सब कुछ प्रत्यक्ष अनुभव से ही बनाना पड़ता है।

अधिक जटिल ग्रहचर का प्रतिमान. यह ग्रहचर छे चक्कों वाला होगा। चक्कों की जगह आप पहले की तरह ही सिनेमा के फिल्म की छोटी रीलों का उपयोग करेंगे। एक अक्ष पर बैठाये गये दो चक्के गति प्रदान करेंगे और दो स्टीयरिंग का संचालन करेंगे तथा बीच के अन्य दो चक्के स्वतंत्र रहेंगे। यदि आपका नन्हा विद्युत-मोटर बहुत कमजोर है, तो आप बीच वाले चक्कों के लिये भी एक मोटर लगा देंगे।

गतिदायक चक्कों का अक्ष मोटर के साथ पहले की तरह ही पेंचचक्र और दंतिचक्र के सहारे जोड़ा जायेगा। यदि पेंचचक्र

नहीं मिले तो किसी पुरानी, टूटी टेबुल-घड़ी का एक छोटा दंतिचक्र उपयोग में लायें। मोटर में अवकारी (गेयर) भी जरूर लगा होना चाहिये। मोटर को एक ऐसे नन्हे चबूतरे पर लगाना चाहिये, जो घूम सके और जरूरत पड़ने पर जिसे अचल किया जा सके। इससे पेंचचक्र को गतिदायक चक्कों के अक्ष पर लगे दंतिचक्र के साथ फँसाने में सहायता मिलेगी और आसानी रहेगी।

स्टीयरिंग वाले चक्कों के लिये प्लाई वुड और पटरियों की सहायता से वर्तक (घुमाने वाला) ठेला बनाते हैं। इसमें चक्कों वाला अक्ष घुसा देते हैं। ठेले की पटरी के बीच स्टीयरिंग का अक्ष जड़ देते हैं। वह प्लेटफार्म के छेद में लगाया जाता है। प्लेटफार्म के ऊपर लकड़ी की टोंटी-सी एक नली चिपकायी जानी चाहिये। इसी नली पर वर्तक चक्का और रूपेल जड़ा जाता है। यह सब आप स्टैंड पर बनाकर जाँच चुके हैं।

प्लेटफार्म के ऊपर बैटरियां और संपर्क वाली नलियां लगाइये। तारों को संपर्क और विद्युत-मोटरों से जोड़ दीजिये। जब सब कुछ तैयार हो जाये, ग्रहचर की चाल का परीक्षण कीजिये। उसे फर्श पर रख दीजिये और फौलादी गोली हाथ में लेकर 'चालू' वाली नली में डाल दीजिये। परिपथ में धारा चालू हो जायेगी और ग्रहचर फर्श पर अपनी यात्रा शुरू कर देगा। तुरंत इस बात की भी जाँच कर लीजिये कि 'रुक' की आज्ञा का पालन कैसा होता है। देखना यह है कि गिरती गोली

की शक्ति संपर्क को तोड़कर मोटर रोकने के लिये काफी है या नहीं। यदि सब ठीक-ठाक है, तो मोटर फिर से चालू कीजिये, स्टीयरिंग के संपर्क में स्पंद – गोलियां – डाल-डालकर ग्रहचर को कमरे में चलाइये। इस काम के लिये आपको ग्रहचर हाथ से नहीं छूना पड़ेगा ; सिर्फ गोलियां डालते जायेंगे। यदि पूरा उपकरण बहुत भारी है और एक (या दो) मोटर से वह अच्छी तरह चल लेता है, तो बाहर खुली जगह में भी उसकी चाल जाँच सकते हैं। इसे ऐसी जगह चला सकते हैं, जहां मिट्टी भुरभुरी न हो।

ग्रहचर की बौडी आप गत्ते से बना सकते हैं। ऊपर से छेद बनाकर उनके पास वे आज्ञाएं लिख ले सकते हैं, जो उनमें भेजी जायेंगी।

ग्रहचर में सामने से एक छड़ लगा दे सकते हैं। जब कोई ऊँची बाधा आयेगी, जिसे ग्रहचर पार नहीं कर सकता, तो छड़ उससे अड़कर ग्रहचर को रोक देगा। यह भी किया जा सकता है कि बाधा से रुककर ग्रहचर पीछे को चलने लगे।

आप स्वयं सोचें कि इसके लिये क्या करना चाहिये। इस समस्या को हल करने की कुंजी वर्तन द्वारा संचालन के यंत्र में छिपी हुई है।

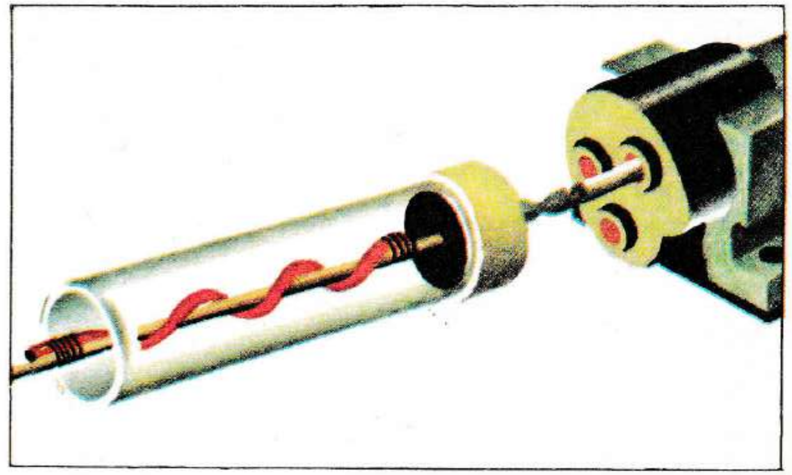
दूसरे ग्रह की मिट्टी. चांद से मिट्टी के नमूने लाने के लिये सोवियत स्वचल स्टेशन भेजे गये थे। विशेष बनावट के खनक चांद की मिट्टी में घुसकर इसके नमूने लेते थे। इसके बाद चांद की मिट्टी

जमीन पर लायी गयी, ताकि हमारे वैज्ञानिक उसका अध्ययन कर सकें।

चांद पर सिर्फ सूखी मिट्टी हो सकती है। वह कठोर और भुरभुरी है। पर जिन ग्रहों पर वातावरण और जल है, वहां अनेक प्रकार की मिट्टी हो सकती है। यह तो स्पष्ट ही है कि भिन्न भौतिक गुणों वाली मिट्टी जमा करने के लिये भिन्न उपकरणों की आवश्यकता होगी।

मान लें कि आपको ऐसी प्रयुक्ति बनाने को कहा गया है, जो मंगल या शुक्र ग्रह से ठोस, पर नर्म या भुरभुरी मिट्टी बटोर सके।

इस तरह की प्रयुक्ति का ही प्रतिमान अभी हम तैयार करेंगे। कैसी होगी वह ?



साफ है कि इस काम में 'आर्कमेडिस का पेंच' नामक प्रयुक्ति ही सबसे अधिक कारगर होगी। इस पेंच से आप अच्छी तरह परिचित हैं। जब घर में आप सेंवई पेरते हैं, आपके हाथ में मशीन होती है जिसमें पेंच जैसी भारी-भरकम धुरी को घुमाना पड़ता है। आर्कमेडिस का पेंच यही है। इसका काम है गूँथे हुए आटे को नीचे चलनी के छेदों तक पहुँचाना।

आर्कमेडिस के पेंच का उपयोग भुरभुरे या सने हुए पदार्थों को आगे (या पीछे) बढ़ाने में बहुत विस्तृत है। ऐसे पंप भी हैं, जो इन पेंचों के सहारे पानी ऊपर पहुँचाते हैं।

हम अपने प्रतिमान में भी आर्कमेडिस के पेंच का ही उपयोग करेंगे। लेकिन यह सिर्फ प्रतिमान ही होगा। ऐसा प्रतिमान बनाना, जो सचमुच में नमूना बटोर सके (और कुछ नहीं, तो बालू ही) संभव नहीं है, क्योंकि नन्हे विद्युत-मोटर की शक्ति इस काम के लिये पर्याप्त नहीं होती।

पहले इस उपकरण की बौडी ढूँढ़नी होगी। आप प्लास्टिक की पारदर्शक नली का उपयोग कर सकते हैं, जिसका व्यास 2–3 सेंटीमीटर हो। ऐसी नली में आप अच्छी तरह देख सकेंगे कि पेंच कैसे घूमता है। नली के एक सिरे पर लकड़ी का डाट लगाना होगा, जिसके केंद्र में एक छेद होगा। डाट के पास ही नली में भी एक छेद होना चाहिये, जिसके सहारे जमा किया हुआ नमूना एक बर्तन में गिरकर जमा होगा।

अब पेंच बनायें। 4–5 मिलिमीटर व्यास वाली लकड़ी की एक छड़ी ले लीजिये। स्वेटर बुनने के मोटे काँटे या बेकार

पेंटिंग-ब्रश से भी काम चल जायेगा। 5–6 मिलिमीटर वाह्य व्यास वाली रबड़ की एक नली भी ले लीजिये। इसकी लंबाई उपकरण की बौडी से पाँच सेंटीमीटर अधिक होनी चाहिये। छड़ी का एक सिरा नुकीला बना लीजिये और उससे कुछ दूर नली का एक सिरा डोरी से बांध लीजिये। नली को सर्पिलाकार में लपेटते हुए ऊपर की ओर लाइये और उसे छड़ी के मोटे सिरे से अच्छी तरह बांध दीजिये, ताकि नली सीधी न हो जाये।

यह आर्कमेडिस का पेंच हो गया। यह बात और है कि असली आर्कमेडिस-पेंच इस तरह नहीं बनाया जाता। यह धातु का चपटा फीता होता है, जिसे धुरी पर किनारी के सहारे खड़ा रखते हुए लपेटा जाता है। हमने उसकी जगह रबड़ की नली का उपयोग किया है। अब धुरी-पेंच को प्लास्टिक की बौडी में घुसाते हैं। छड़ी का मोटा सिरा भीतर होना चाहिये; उसे डाट के छेद से बाहर निकाल लेते हैं। फिर इस सिरे को नन्हे विद्युत-मोटर से जोड़ देते हैं।

धुरी का सिरा डाट से करीब दो सेंटीमीटर बाहर निकला होना चाहिये। इसपर उसी नली का एक टुकड़ा पहना देते हैं, जो धुरी पर लपेटी गयी है। नली के टुकड़े का दूसरा सिरा दूसरी छड़ी के एक नन्हे टुकड़े पर पहना देते हैं (लकड़ी के इन नन्हे टुकड़े के सिरों की मुटाइयां भिन्न होनी चाहिये)। लकड़ी के टुकड़े के दूसरे सिरे पर निपुल की नली चढ़ा देते हैं; निपुल की नली मोटर के अवकारक पर चढ़ी होती है। इस तरह एक लचीला जोड़ मिलता है, जिसके फलस्वरूप मोटर

को पेंच के अक्ष के साथ किसी कोण पर तिरछा भी रखा जा सकता है।

बौडी को किसी टेक पर जड़ दीजिये और मोटर को बैटरी से जोड़ दीजिये। पेंच घूमने लगेगा। देखिये कि किस ओर वह घूम रहा है। पेंच को इस तरह घूमना चाहिये कि वह काल्पनिक मिट्टी में घुसकर उसे निकाले, बौडी में आगे बढ़ाते हुए छेद तक पहुँचाये, जहां से निकलकर मिट्टी बर्तन में जमा होगी।

मोटर चलाने और रोकने के लिये प्रयुक्ति आप खुद सोचकर बना ले सकते हैं। ऐसी भी प्रयुक्ति बना सकते हैं, जो पेंच की बौडी को आवश्यक दिशा में घुमा सकेगी। इसके लिये उन प्रयुक्तियों का उपयोग कर सकते हैं, जिन्हें आपने ग्रहचर के प्रतिमान के लिये बनाया था।

अंतरिक्षी कल्पनाएं

कैमरे से कल्पना-चित्र. अंतरिक्षी विषयों पर चित्र बनाने वाले सभी चित्रकारों को कल्पना का ही सहारा लेना पड़ता है। बिना कल्पना के, वास्तविक अंतरिक्षी दृश्यों का चित्र वही बना सकता है, जिसने अंतरिक्ष-यात्रा की हो, उसे देखा हो। इसके एक ज्वलंत उदाहरण हैं – अंतरिक्ष-यात्री अलेक्सेई लेओनोव, जो सोवियत वीर की उपाधि से दो बार सम्मानित हुए हैं। वे अंतरिक्ष में कई बार जा चुके हैं; वहां से चांद-सितारे, सूरज और अपनी सगी धरती को उन्होंने सिर्फ खिड़की के शीशे से ही नहीं, यान से बाहर आकर खुले अंतरिक्ष से भी देखा है। लेओनोव को चित्रकारी का शौक है; खाली समय वे इसी काम में लगाते हैं।

अंतरिक्षी विषयों पर अनेक चित्रकार अपनी कल्पना-शक्ति आजमा रहे हैं। वे अपनी कृतियों में अंतरिक्ष पर मानव की विजय को चित्रित करते हैं। अनेक मनोहर चित्र कोलचीत्स्की और पोक्रोव्स्की ने पत्रिका 'तकनीक और युवा-वर्ग' के लिये बनाये हैं। इनमें कोलचीत्स्की चित्रकार हैं और पोक्रोव्स्की तकनीकी विज्ञान के डाक्टर हैं।

हो सकता है कि आपको भी कल्पना करने की इच्छा हो, अंतरिक्ष के सपने को कलम या कूची से कागज पर उतारने की इच्छा हो। विषय अनेक हैं: किसी नयी दुनिया का चित्र प्रस्तुत करना, रहस्यमय ग्रहों की यात्रा का चित्र बनाना।

लेकिन अंतरिक्ष के बारे में सृजनात्मक कल्पना एक अन्य विधि से भी संभव है – कैमरे की सहायता से। यदि अभ्यास करके निपुणता हासिल करेंगे, तो ऐसे फोटो-चित्र प्राप्त कर सकेंगे, जैसे वास्तविक दृश्यों से लिये गये हों।

कैमरे के साथ काम करने के दौरान आपको लेखक, निर्देशक, आपरेटर आदि सब एक साथ बनना पड़ेगा। लेकिन इससे डरने की कोई बात नहीं है। कैमरा अच्छा होना चाहिये, जिससे बहुत नजदीक से भी चित्र लिया जा सके (इसके लिये लेंस के पीछे अतिरिक्त छल्ले जोड़ने पड़ते हैं)। यदि आपके पास कैमरा नहीं है, तो किसी साथी से पूछिये, जिसके पास वह है।

अब करना क्या होगा?

यदि आपको मौलिक कृति प्रस्तुत करनी है, तो पहले आपको दृश्य-कथा – सब कुछ, जो आप दिखाना चाहते हैं – सिलसिलेवार ढंग से लिखनी चाहिये।

इसके बाद कथा को अलग-अलग दृश्य-पटलों में बांटना चाहिये, जिनमें एक के बाद एक घटनाएं चित्रित की जायेंगी। जब यह मालूम हो जाये कि किस पटल पर क्या चित्रित करना है, तब सादे कागज पर 9–12 सेंटीमीटर का आयत बना लीजिये, उसकी क्रमसंख्या लिखिये और उसपर कथा के अनुसार दृश्य का आरेखात्मक चित्र बना लीजिये।

मान लें कि यह शनि ग्रह के उपग्रह पर किसी अभियान के उतरने का दृश्य है। इस ग्रह के उपग्रह ज्यादा बड़े नहीं हैं, उनपर वातावरण भी नहीं है। अभियान के सदस्य अंतरिक्ष-

पोशक में हैं, मिट्टी का नमूना जमा कर रहे हैं, क्षितिज से उगते शनि का अवलोकन कर रहे हैं। ऐसा चित्र आपको खींचना है। पहले आपको नकली दृश्य बनाना होगा, फिर इसका फोटो खींचना होगा।

यदि आप काला-सफेद फोटो खींचेंगे, तो रंगों पर ध्यान देने की कोई आवश्यकता नहीं है। इतना ही खयाल रखिये कि प्रकाश काफी हो तथा सभी वस्तुएं साफ-साफ दिखें – अंधेरी वस्तुएं प्रकाशमान पृष्ठभूमि पर और प्रकाशमान वस्तुएं अंधेरी पृष्ठभूमि पर। सामान्य पृष्ठभूमि के साथ उन्हें मेल खाना चाहिये। पूरे चित्र में वस्तुओं की आपसी स्थिति के बीच सुसामंजस्य होना चाहिये, लोग, वस्तुएं आदि भिन्न तलों पर होने चाहियें।

नकली दृश्य. सुविधा के लिये पहले एक मंच बना लेना चाहिये, जिसकर आप नकली दृश्य बनायेंगे। मंच स्टूल पर अँटना चाहिये। और भी अच्छा हो यदि किसी ऊँचे डब्बे या कुर्सी पर स्टूल उलटकर रख दें और उसे ही मंच मान लें। स्टूल के पाये खंभों का काम करेंगे, जिनसे कोई वस्तु टिकायी या बांधी जा सकेगी। पायों के बीच एक समतल तख्ता रख लें, यह मंच का फर्श होगा। शुरूआत पृष्ठभूमि से करें। यदि यह तारक-मंडित नभ का दृश्य है, तो इसे बनाना कठिन नहीं है, इसके लिये चित्रकारी में निपुण होना जरूरी नहीं है। गत्ते पर सफेद कागज चिपका लीजिये। गोंद से चिपकाना अच्छा रहेगा। फिर उसे दबाकर सुखा लीजिये। इसके बाद कागज को काले रंग से रंग

दीजिये। काले कागज का भी उपयोग किया जा सकता है, पर यह चमकीला नहीं होना चाहिये। थोड़ी सफेदी (गुआश या अपारदर्शक जलरंग, पोस्टर कलर) पानी के साथ मिला लीजिये और उसमें एक बड़ा सा ब्रश भिगाकर काले कागज पर थोड़ा-थोड़ा करके छिड़कना शुरू कीजिये। छिड़कने के लिये आप उसे कागज के पास किसी इंची या पटरी पर आहिस्ते-आहिस्ते ठोकते जाइये। पहले किसी अलग कागज पर अभ्यास कर लीजिये। छोटी-बड़ी छींटें कागज पर पड़कर तारों के समूह का दृश्य उत्पन्न करेंगी। जब तारों भरा आकाश 'रच' लेंगे, तो दूसरे गत्ते पर एक कागज चिपकाकर जलरंग से शनि का चित्र बना लें (उसके किरीट के साथ)। जब चित्र सूख जाये, उसे गत्ते से काटकर अलग कर लें और उस गत्ते के पास रख दें, जिसपर तारों भरा आकाश बना है। ग्रह को कसकर मत जड़िये, ताकि आवश्यकतानुसार उसे खिसकाया या हटाया जा सके। शनि के उपग्रह की सतह (मंच) को मिट्टी, ईंट, पत्थर आदि से सजाकर पहाड़ी दृश्य दे दीजिये। कोशिश करेंगे, तो दृश्य सच्चा दिखेगा।

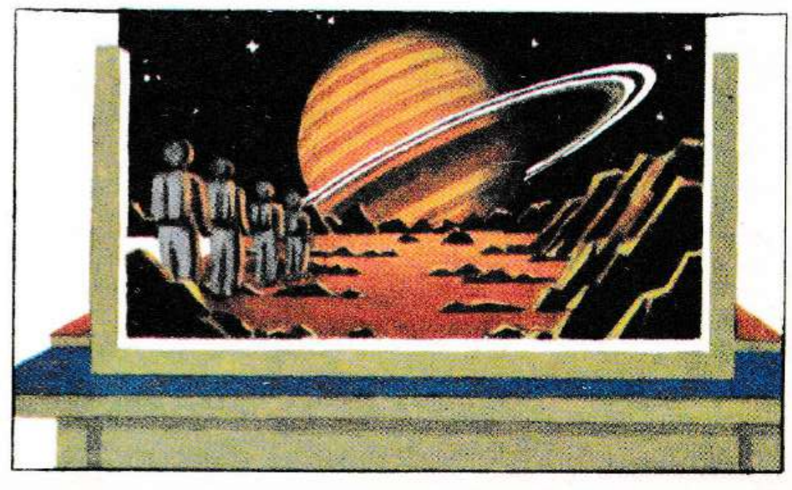
यदि किसी दृश्य-पटल में आपको अंतरिक्ष-यान दिखाना है, तो कोई जरूरी नहीं कि उसकी आकृति परंपरागत ही हो। इसके लिये गत्ते की नियमित आकृतियों के टुकड़ों का उपयोग हो सकता है। परवलयी ऐंटेना तार मोड़कर बना सकते हैं। अंतरिक्ष-यात्री की आकृति प्लास्टिलीन से बना लीजिये। जब सब तैयार हो जाये, तब दृश्य को अच्छी तरह प्रकाशित

कीजिये। कोशिश रखिये कि तारों भरे आकाश पर प्रकाश के धब्बे न पड़ें, किसी अन्य वस्तु की छाया न पड़े।

अब एक फोटो खींचिये। फोटो उतारने के बाद उसका विश्लेषण कीजिये कि उसमें क्या-क्या कमियां हैं। उन्हें दूर करके अगला फोटो खींचिये। अंतिम फोटो बिल्कुल असली दृश्य के फोटो जैसा लगना चाहिये।

सन् 1956 ई० में 'तकनीक और युवा वर्ग' में विहंगम ऊँचाई से चांद का चित्र खींचकर छापा गया था। उस समय हमारे अंतरिक्ष-यान चांद पर नहीं जाते थे, और पाठक समझते थे कि यह चांद का चित्र नहीं है। फिर भी, चांद की वह सतह आटे से बनायी गयी थी।

स्लाइड फिल्म भी बनाये जा सकते हैं, इन्हें पर्दे पर सा-



धारण प्रोजेक्टर से दिखाया जा सकेगा। इसके लिये डायेपोजीटीव फिल्म की जरूरत पड़ती है। कुछ फिल्मों में काली पृष्ठभूमि पर सफेद अक्षरों से चित्रों का वर्णन भी दिया जा सकता है। वर्णन बहुत लंबा नहीं होना चाहिये।

यदि कुछ चित्रों में आदमियों की जरूरत है, तो अपने परिचितों को 'अभिनेता' बना लीजिये और उनके चित्र खींच लीजिये। चित्र में से पृष्ठभूमि काटकर अलग कर दीजिये। दूसरे फिल्म से आवश्यक दृश्य का चित्र खींचें और उसपर आदमी का चित्र चिपकाकर नया चित्र बनायें। या इस चित्र को स्लाइड फिल्म पर खींच लें। इसे फोटो-मोंताज की विधि कहते हैं; पोस्टरों में इसका बहुत विस्तृत उपयोग है।

इस तरह के स्लाइड फिल्म बनाना या ऐसे चित्रों के ऐल्बम तैयार करना एक रचनात्मक कार्य है तथा आपको इससे सुख और संतोष की अनुभूति होगी। फोटोग्राफी सीखना कठिन नहीं है; दृश्यों के लिये साज-सज्जा तैयार करना भी आप ही के हाथ में है। फिर भी, इस तरह के कार्य कई लोगों के साथ मिल-जुलकर करने चाहियें। कल्पना कीजिये और उसे मूर्त रूप दीजिये। तभी आप वास्तविक अंतरिक्ष-यात्रा का आनंद प्राप्त कर सकते हैं।

अंतरिक्ष से संबंधित उपकरणों और प्रयुक्तियों की निर्माण-विधियों और उनके संचालन के साथ हमारा प्रथम परिचय समाप्त होता है।

पाठकों से

मीर प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिजाइन संबंधी आपके विचारों के लिये आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। कृपया हमें इस पते पर लिखिये:

मीर प्रकाशन
पेर्वी रीज्स्की पेरेऊलोक, २
मास्को, सोवियत संघ

प्रकाशनाधीन

सर्वसुलभ भाषा में

से. वेनेत्स्की

रचित

धातुओं की कहानियां

किस्सों, दंतकथाओं और मजेदार लतीफों के ताने-बाने में धातुओं के आविष्कार और उनके बढ़ते उपयोग का गंभीर इतिहास।

प्रकाशनाधीन

विश्वविख्यात भौतिकविद

ले. लंदाऊ और **यु. रूमेर**

रचित

सापेक्षकता-सिद्धांत क्या है?

भौतिकी के एक जटिल नियम को सरल और सुबोध भाषा में समझाने का एक अद्वितीय प्रयोग!

प्रकाशनाधीन

विज्ञान और तकनीकी विकास में चालिकी (साइ-बरनेटिक्स) की क्या भूमिका है? मानव-संस्कृति को वह क्या दे सकती है? – इन प्रश्नों के उत्तर के लिये पढ़ें: अकादमीशियन

वि. ग्लुश्कोव

रचित

चालिकी क्या है?

एक तीव्र विकासशील विज्ञान के साथ प्रथम परिचय!

